‘‘समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना–प्रभा खेतान के विशेष सन्दर्भ में’’

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा
की पीएच.डी.(हिन्दी) उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध प्रबन्ध
(कला संकाय)

शोधार्थी
कंचन भाणावत

शोध पर्यवेक्षक
डॉ. मीता शर्मा
सह आचार्य

हिन्दी विभाग
राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
2019

प्रमाण पत्र

मुझे प्रमाणित करते हुए प्रसन्नता हो रही है, कि शोध प्रबन्ध **''समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना–प्रभा खेतान के विशेष सन्दर्भ में''** शोधार्थी **कंचन भाणावत (RS/1409/13)** ने कोटा विश्वविद्यालय, कोटा के कला संकाय में पीएच.डी. (हिन्दी) के नियमानुसार निम्नलिखित आवश्यकताओं के साथ मेरे निर्देशन में पूर्ण किया है।

1. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार कोर्सवर्क पूर्ण किया है।
2. शोधार्थी ने 200 दिन के आवासीय आवश्यकता नियम को पूरा किया है।
3. शोधार्थी ने विश्वविद्यालय के नियमानुसार समय–समय पर अपने कार्य का प्रगति प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है।
4. शोधार्थी ने विभाग व संस्था प्रधान के समक्ष अपना शोधकार्य प्रस्तुत किया है।
5. शोधार्थी द्वारा यू.जी.सी से अनुमोदित शोध–पत्रिका में शोध पत्र का प्रकाशन किया है।

मैं इस शोध प्रबन्ध को कोटा विश्वविद्यालय, कोटा की पीएच.डी. उपाधि प्रदत्त किये जाने हेतु मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की अनुशंसा करती हूँ।

दिनांक :

(डॉ. मीता शर्मा)
शोध पर्यवेक्षक

Anti-Plagiarism Certificate

It is certified that Ph.D. thesis Titled "समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना–प्रभा खेतान के विशेष सन्दर्भ में" by **Kanchan Bhanawat** (**RS/1409/13**) has been examined by us with the following anti-plagiarism tools. We undertake the follows:

a. Thesis has significant new work/Knowledge as compared already published or are under consideration to be published elsewhere. No sentence, equation, diagram, table, paragraph or section has been copied verbatim for previous work unless it is placed under quotation marks and duly referenced.
b. The work presented is original and own work of the author (i.e. there is no plagiarism). No ideas, processes, results or words of other have been presented as author's own work.
c. There is no fabrication of data or result which have been compiled and analyzed.
d. There is no falsification by manipulation research materials, equipment or processes, or changing or omitting data or omitting data or result such that the research is not accurately represented in the research record.
e. The thesis has been checked using **PLAGIARISM CHECKER X Website** and found within limits as per HEC plagiarism Policy and instructions issued from time to time.

(Kanchan Bhanawat) (Dr. Meeta Sharma)

Place : Place :

Date : Date:

शोध सार

साहित्य व मानव के मध्य एक अटूट सम्बन्ध है। साहित्य मानव के जीवन का यथार्थ चित्रण करता है। साहित्यकार मानव के सामाजिक संबंधों को साहित्य के माध्यम से अंकित करता है। इस कारण साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है।

आज वर्तमान युग में साहित्य की सभी विधाओं में सबसे महत्वपूर्ण स्थान उपन्यास विधा का है। मानव व समाज के सर्वांगीण पक्ष को उद्घाटित करने व समाज में व्याप्त विभिन्न समस्याओं को उजागर करने में उपन्यास विधा सिद्धहस्त है। जीवन के यथार्थ को अपनी सम्पूर्णता के साथ उजागर जिस प्रकार उपन्यास विधा के माध्यम से किया जा सकता है वैसा किसी अन्य के द्वारा संभव नहीं है।

मानव एक जिज्ञासु व चिंतनशील प्राणी है और अपनी इसी प्रवृति के कारण वह समाज में आए परिवर्तनों व नारी के स्थिति व दशा पर अपने विचार प्रस्तुत करने लगा है। समकालीन युग से नारी की स्थिति परिवर्तित हुई। वह पुरुष की सहयोगिनी बन गई है तथा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन अपने अस्तित्व को पहचान दिलाने में संघर्षरत है। इसी परम्परा की मुहिम में एक कड़ी के रूप में जुड़ी प्रभा खेतान अपने साहित्य के माध्यम से अपना अनुपम योगदान दे रही है।

समकालीन युग में अनेक महिला लेखिकाओं कृष्णा सोबती, उषा प्रियवंदा, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग, मन्नु भण्डारी, ममता कालिया, सूर्यबाला, मेहरुन्निसा परवेज, राजी सेठ , मंजुल भगत आदि ने अपने विचारों व भावों को वाणी दी है। प्रभा खेतान भी एक ऐसी महिला लेखिका है जिन्होंने अपने लेखन के द्वारा नारी को एक नया आसमान प्रदान कर ऊँची उड़ान दी है। इन्होंने जो यथार्थ भोगा व समाज में जो देखा उसे ही यथार्थ के रूप में समाज के सामने प्रस्तुत किया है। प्रभाजी ने नारी को अपने अस्तित्व हेतु समाज की खोखली व जड़ परम्पराओं के विरुद्ध खड़े होकर लड़ने का संबल प्रदान किया है। इन्होंने प्रतिकुल परिस्थितियों में निरन्तर संघर्ष करते हुए अपने अस्तित्व को पहचान दिला पाने में सफलता हासिल की है। प्रभा जी की निडरता व व्यक्तित्व से प्रभावित हो उनके उपन्यास साहित्य पर शोध कार्य करने का का निश्चय किया। इनके विषय में और अधिक जानकारी प्राप्त करने व इनके विचारों से समाज को अवगत कराने के लिए शोध विषय "समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना– प्रभा खेतान के विशेष संदर्भ में" विषय का

चुनाव किया। इस विषय पर शोध हेतु पूज्यनीय निर्देशिका डॉ मीता शर्मा ने स्वीकृति प्रदान कर मुझे कृतज्ञ किया।

प्रस्तुत शोध प्रबंध को अध्ययन की सुविधा हेतु कुल आठ अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय 'समकालीन उपन्यास विधा का विकासात्मक परिचय' है। इसके अन्तर्गत उपन्यास शब्द की उत्पति, उसके अर्थ व परिभाषाओं के माध्यम से उपन्यास का प्रारम्भिक परिचय कराते हुए उसके स्वरूप व विकास की व्याख्या की गई है। उपन्यास के तत्वों का वर्णन करते हुए प्रत्येक कालानुसार उपन्यास के विकास को दर्शाया गया है। अंतत स्वातंत्र्योत्तर व समकालीन उपन्यास की दशा व विकास को स्पष्ट करते हुए महिला उपन्यासकारों की भूमिका का वर्णन किया गया है।

द्वितीय अध्याय 'डॉ प्रभा खेतान का व्यक्तित्व एवं कृतित्व' नाम से उद्धृत है। इनके अन्तर्गत प्रभा जी के जीवन वृत व साहित्य संसार का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इनके जीवन वृत के अन्तर्गत जन्म, बचपन, पारिवारिक परिवेश, शिक्षा, आत्मीय संबंधों का यथार्थ, साहित्य सृजन का शुभारम्भ, प्रेरणा व व्यवसाय आदि का वर्णन करते हुए उनकी मृत्यु संबंधी जानकारी देते हुए श्रद्धांजलि अर्पित की गई है। इनके कृत्तित्व के अन्तर्गत उनके सम्पूर्ण साहित्य संसार का वर्णन करते हुए उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

तृतीय अध्याय 'समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान' नाम से अभिहित है। इस अध्याय के अन्तर्गत कृष्णा सोबती, उषा प्रियवंदा, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग, राजी सेठ, मंजुल भगत, मेहरुन्निसा परवेज, मैत्रेयी पुष्पा आदि समकालीन महिला उपन्यासकारों से परिचय कराते हुए उनके साहित्य संसार की तुलना प्रभा खेतान के साहित्य के साथ वर्णित कर हिन्दी साहित्य जगत में प्रभा खेतान का वैशिष्ट्य को प्रतिपादित किया है।

चतुर्थ अध्याय 'समकालीन महिला उपन्यासों में मूल्य चेतना का स्वरूप' है। इसके अन्तर्गत मूल्य चेतना से तात्पर्य, मूल्य शब्द का अर्थ, मूल्य का कोशगत अर्थ, मूल्यों की परिभाषा, मूल्यों की अवधारणा, मूल्यों का स्वरूप, मूल्यों की प्रकृति, मूल्यों का स्त्रोत, मूल्यों का निर्माण व महत्व, मूल्यों के विविध परिपेक्ष्य सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि का वर्णन किया है। इसके साथ ही मूल्य संक्रमण से तात्पर्य, उसका शाब्दिक अर्थ, मूल्य

संक्रमण की परिभाषा, उसके परिवर्तन व विकास की दशाओं का वर्णन करते हुए समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना के स्वरूप से परिचय कराया है।

पंचम अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यासों में मूल्यों के विविध पक्ष' नाम से अभिहित है। इसके अन्तर्गत प्रभा जी के उपन्यासों में आये मूल्यों के विविध स्वरूप सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक व सांस्कृतिक आदि से परिचय कराया है।

छठ्ठा अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यास–विविध आयाम' नाम से सम्बोधित है। इसके अन्तर्गत नारी के विविध रूप घरेलु नारी, व्यावसायिक या कामकाजी नारी, ममतामयी, शिक्षित नारी, विद्रोही नारी के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए प्रेम के अर्थ व उसके स्वरूप को परिभाषित करते हुए प्रेम के विविध रूप निरछल प्रेम, अवैध व असफल प्रेम को स्पष्ट करते हुए सेक्स संबंधी विचारों का प्रस्तुतीकरण किया है। इसके साथ ही सामाजिक व पारिवारिक संबंधों की रूपरेखा को स्पष्ट करते हुए विवाह तथा विवाहेत्तर संबंधों से परिचय कराया है।

सप्तम अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन' नाम से अभिहित है। इसके अन्तर्गत भाषा के वैशिष्ट्य की कलात्मकता को बढ़ाने के लिए प्रतीकों व बिंबों का प्रयोग भी सहज रूप से हुआ है। प्रस्तुत अध्याय में विभिन्न शैलियों, पात्रों व उनके चरित्र का वर्णन करते हुए उनके कथानक को स्पष्ट किया गया है।

उपसंहार में शोध प्रबंध के समग्र सातों अध्यायों के सार को प्रस्तुत किया गया है और परिशिष्ट में शोध प्रबंध के आधारभूत एवं सहायक ग्रंथो की सूची, पत्र–पत्रिकाएँ, शब्दकोश आदि का समावेश किया गया है।

घोषणा शोधार्थी

मैं **कंचन भाणावत** (शोधार्थी, हिन्दी विभाग) यह घोषणा करती हूँ कि मेरा यह शोध प्रबन्ध **''समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना–प्रभा खेतान के विशेष सन्दर्भ में''** जो मेरे द्वारा प्रस्तुत किया गया है, यह मेरा अपना शोध कार्य है। मैनें यह शोध कार्य डॉ. मीता शर्मा, सह आचार्य, हिन्दी के निर्देशन में पूर्ण किया है। यह मेरा अपना मौलिक कार्य है। मैंने अपने विचारों को अपने शब्दों में प्रस्तुत किया है, और जहाँ दूसरे विचारों और शब्दों का प्रयोग किया गया है, व मेरे द्वारा मान्य स्त्रोतों से लिए गये हैं। अपरिहार्य स्थिति में ली गई ऐसी हर सामग्री का यथा स्थान सन्दर्भ एवं आभार व्यक्त कर दिया गया है, जो कार्य इस शोध कार्य में प्रस्तुत किया गया है।

मैं यह भी घोषणा करती हूँ, कि मैंने विश्वविद्यालय के सभी अकादमिक नियमों का निष्ठा एवं ईमानदारी से पालन किया है, तथा किसी तथ्य को गलत प्रस्तुत नहीं किया है। मैं समझती हूँ कि मेरे द्वारा किसी भी नियम उल्लघन पर मेरे खिलाफ प्रशासनिक कार्यवाही की जा सकती है। मेरे खिलाफ जूर्माना भी लगया जा सकता है। यदि मैने किसी स्त्रोत से बिना उसका नाम दर्शाये या जिस स्त्रोत से अनुमति की आवश्यकता हो, बिना अनुमति के लिया हो।

दिनांक :

कंचन भाणावत

शोधार्थी (RS / 1409 / 13)

प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी कंचन भाणावत, शोधार्थी (RS / 1409 / 13) द्वारा दी गयी उपर्युक्त सभी सूचनाएं मेरी जानकारी के अनुसार सही है।

दिनांक :

(डॉ. मीता शर्मा)
शोध पर्यवेक्षक

प्राक्कथन

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध **''समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना–प्रभा खेतान के विशेष सन्दर्भ में''** की प्रस्तुति मेरे अथक परिश्रम के साथ–साथ उन महानुभवों के सहयोग व अनुभवों की ऋणी है जिन्होंने इसकी दुर्लभ सामग्री के संयोजन व इसके आलेखन को सहज बनाया है। मेरी परम सम्मानीय गुरू एवं शोध निर्देशिका डॉ. मीता शर्मा से मुझे प्रतिपाद्य विषय में शोध की प्रेरणा मिली और एक स्वप्न को साकार करने का अवसर मिला। इस स्वप्न को आकार देने व साकार करने का श्रेय में अपनी गुरू को देना चाहती है।

मैं अपनी मार्गदर्शिका व मित्र डॉ नीमा का आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर शोध प्रबन्ध के सम्बन्ध में मुझे परिप्रेक्षीय चेतना प्रदान की । मैं उनके प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ जिनकी कृतियों का उपयोग इस शोध प्रबन्ध रचना में उद्धरित है। मैं उन सभी विद्वानों, गुरूजनों व महानुभवों के प्रति आभार प्रकट करना चाहती हूँ जिसका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष सहयोग मुझे अनुसंधान कार्य के समय प्राप्त हुआ। मैं राजकीय महाविद्यालय, कोटा के पुस्तकालय, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के पुस्तकालय, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर के पुस्तकालय, केन्द्रिय पुस्तकालय, उदयपुर साहित्य अकादमी उदयपुर के अभिलेखागार के समस्त कर्मचारियों के प्रति आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने मेरे शोध कार्य में रूचि लेकर तथ्यों के संकलन में मुझे सहयोग प्रदान किया।

मैं अपने पिता श्री वदन सिंह राव व माता सोना देवी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती हूँ जिन्होंने मुझे यह शैक्षणिक पृष्ठभूमि प्रदान की जिसके कारण मुझे शोध अन्वेषण की प्रेरणा मिली। आभार की इस श्रृंखला में मैं अपने पति श्री राजेन्द्र सिंह राजपुत के योगदान को भी नहीं भूला सकती जिनके सहयोग ने मुझे इस शोध कार्य को सम्पन्न करने की प्रेरणा प्रदान की। इस कड़ी में अपने बच्चों पुत्र युगवर्द्धन सिंह व पुत्री रिशिता सिंह का भी तहेदिल से आभार व्यक्त करती हूँ। जिनकी मीठी वाणी व मधुर मुस्कान ने मुझे सदैव स्फूर्तिवान बनाये रखा। इनके सहयोग व स्नेह के बिना इस कार्य को पूर्ण करना असंभव था।

मैं मेरे शुभचिन्तकों श्री रतन सिंह जी, सीता देवी जी, भीम सिंह जी, अर्चना देवी व मेरी सहेली रंजना सिंघवाल का हृदय से आभार प्रकट करती हूँ। इसी कड़ी में मैं अपने भाई–बहिनों शूरवीर, सम्पत व कौशल्या एवं मेरे हितैषी लोकेन्द्र सिंह व नेहा सिंह का

आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने शोध की इस कठिन डगर में मेरा सहयोग करते हुए मेरा उत्साह वर्धन किया और मुझे कर्मठ बनाये रखा।

अन्त में इस शोध प्रबन्ध को सुन्दर रूप प्रदान करने तथा सुरूचिपूर्ण टंकन व प्रस्तुत करने योग्य बनाने हेतु राधा गामित एवं श्री योगेश कुमार नामा के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ।

स्थान – कोटा

कंचन भाणावत

शोधार्थी

पंजीयन क्रमांक : RS/1409/13

विषयानुक्रमणिका

अध्याय	पृष्ठ संख्या
प्रथम अध्याय –	1 – 26
समकालीन उपन्यास विधा का विकासात्मक परिचय	
द्वितीय अध्याय –	27 – 51
डॉ प्रभा खेतानः व्यक्तित्व एवं कृतित्व	
तृतीय अध्याय –	52 – 69
समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान	
चतुर्थ अध्याय –	70 – 116
समकालीन महिला उपन्यासों में मूल्य चेतना का स्वरूप	
पंचम अध्याय –	117 – 145
प्रभा खेतान के उपन्यासों में मूल्यों के विविध पक्ष	
षष्ठम अध्याय –	146 – 181
षष्ठम अध्याय– प्रभा खेतान के उपन्यास– विविध आयाम	
सप्तम् अध्याय –	182 – 209
प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन	
अष्ठम् अध्याय	210 – 217
उपसंहार	
शोध सारांश	218 – 221
सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –	222 – 225
प्रकाशित शोध पत्र –	226 – 334

प्रथम अध्याय

समकालीन उपन्यास विधा का विकासात्मक परिचय

प्रथम अध्याय

समकालीन उपन्यास विधा का विकासात्मक परिचय

प्रस्तावना

1.1 उपन्यास का प्रारम्भिक परिचय

- 1.1.1 भारतीय विद्वानों के अनुसार उपन्यास की परिभाषाएँ
- 1.1.2 पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार उपन्यास की परिभाषाएँ

1.2 उपन्यास का स्वरूप एवं विकास

- **1.2.1 उपन्यास का स्वरूप**
  - 1.2.1.1 कथावस्तु या कथानक
  - 1.2.1.2 पात्र या चरित्र–चित्रण
  - 1.2.1.3 संवाद या कथोपकथन
  - 1.2.1.4 देशकाल और वातावरण
  - 1.2.1.5 भाषा शैली
  - 1.2.1.6 उद्देश्य
- **1.2.2 उपन्यास का विकास**
  - 1.2.2.1 प्रेमचंद पूर्वयुग का उपन्यास साहित्य
  - 1.2.2.2 प्रेमचंद युग का उपन्यास साहित्य
  - 1.2.2.3 प्रेमचंदोत्तर युग का उपन्यास साहित्य
    - 1.2.2.3.1 मनोवैज्ञानिक उपन्यास
    - 1.2.2.3.2 सामाजिक उपन्यास
    - 1.2.2.3.3 प्रगतिवादी उपन्यास
    - 1.2.2.3.4 आंचलिक उपन्यास
- **1.2.3 महिला उपन्यासकारों की भूमिका**

1.3 स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास– विकास की दशाएँ

- 1.3.1 स्वातंत्र्योत्तर ऐतिहासिक उपन्यास
- 1.3.2 महिला उपन्यासकारों की भूमिका

1.4 समकालीन उपन्यास

निष्कर्ष

समकालीन उपन्यास विधा का विकासात्मक परिचय

प्रस्तावना –

आधुनिक युग में हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में जिन नवीन विधाओं का तीव्र गति से विकास हो रहा है उनमें सर्वाधिक लोकप्रिय एवं मनोरंजक विधा है– उपन्यास। विश्व साहित्य में उपन्यास का प्रारम्भ यूरोपीय नवजागरण के पश्चात माना जाता है। यूरोपीय नवजागरण के परिणामस्वरूप यूरोप में आई औद्योगिक क्रांति तथा उससे उत्पन्न सामाजिक समस्याओं व विषमताओं ने उपन्यास जैसी नई साहित्यिक विधा को जन्म दिया। इसीलिए कहा जाता है कि शैली, शिल्प–विधान व विषय–वस्तु की दृष्टि से यह पश्चिम की देन है।

हिन्दी में उपन्यास लेखन का प्रारम्भ उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षो में हो गया था, परंतु अपने उत्कर्ष तक पहुँचने में पूरी एक शताब्दी का समय लगा। भारत वर्ष में उपन्यास शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग संस्कृत के आचार्य भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' नामक ग्रंथ में किया गया है। आज उपन्यास सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है। जो स्थान प्राचीन समय में महाकाव्यों का था वह आज उपन्यास का है। इसमें गद्य के माध्यम से जीवन का सम्पूर्ण चित्र अंकन होता है। इसके अंतर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करने वाले पात्रों व कार्यों का तथा जीवन की विभिन्न परिस्थितियों एवं तत्कालीन समस्याओं को प्रस्तुत कर यथा साध्य निदान की दृष्टि भी प्रदान करता है। अतः यह जीवन के बहुमूखी आयामों का दिग्दर्शन है। उपन्यास द्वारा दुनिया को परिवर्तित परिस्थितियों की जानकारी पाठकों को प्राप्त होती है। उपन्यास समाज की सही स्थितियों एवं समस्याओं को अपने अंदर समेटने की क्षमता रखता है। प्रस्तुत अध्याय में उपन्यास के अर्थ, परिभाषा व उसके स्वरूप और विकास क्रम से सबंधित विशद अवलोकन किया गया है–

1.1 उपन्यास का प्रारम्भिक परिचय –

उपन्यास की महत्ता साहित्य में प्राचीनकाल से विद्यमान है, किन्तु हिन्दी साहित्य में यह आधुनिक काल की उपज है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में भरत द्वारा नाट्यशास्त्र में सर्वप्रथम इस शब्द का प्रयोग प्रतिमुख संधि के भेद के रूप में किया है और किसी विचार को तर्कयुक्त अर्थ में प्रस्तुत करने को उपन्यास कहा गया है। भामह ने काव्यालंकार में 'विन्यास' तथा विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में 'स्थापना एवं ज्ञापन' के रूप में उपन्यास शब्द का प्रयोग किया है। उपन्यास लैटिन शब्द 'नोवस' से व्युत्पन्न होकर आया है। कुछ विद्वानों का मानना है कि यह फ्रेंच के 'नोवो' से व्युत्पन्न हुआ है। नोवस तथा नोवो का शाब्दिक

अर्थ नवीनता है। अतः यह लैटिन व फ्रेंच भाषा में नवीनता के द्योतक के रूप में प्रयुक्त हुआ है। साहित्य में रूप में प्रयुक्त होकर यही अर्थ रूढ़ हो गया।

उपन्यास शब्द 'उप' उपसर्ग तथा 'न्यास' पद के संयोग से बना है। 'उप' का अर्थ 'समीप' और 'न्यास' का अर्थ है 'रखना'। इस प्रकार उपन्यास एक ऐसी रचना है जिसे पढ़कर अपने जीवन की निकटतम अनुभूतियों का आभास हो और वास्तविक जैसी अभिव्यक्ति हो। अर्थात उपन्यास में अत्यंत समीपता से मानव जीवन के आंतरिक व बाह्य स्वरूप की अभिव्यक्ति होती है। हिन्दी शब्द सागर में इसका व्युत्पति अर्थ इस प्रकार है– "उपन्यास शब्द 'अस' धातु और निःउपसर्ग में 'धत्र' जोड़ने से बना है।"[1] 'नि' उपसर्ग व अस धातु से मिलकर न्यास शब्द बना है। 'न्यास' शब्द में 'उप' उपसर्ग है। 'उप' का अर्थ है– निकट व न्यास का अर्थ है– रखी हुई वस्तु। अर्थात उपन्यास शब्द का व्युत्पतिमूलक अर्थ– निकट रखी हुई धरोहर। अतः कहा जा सकता है कि उपन्यास मानव जीवन की प्रस्तावित रूपरेखा है जिसमें उपन्यासकार जीवन के प्रति एक निश्चित दृष्टिकोण, उद्देश्य व लक्ष्य लेकर चलता है और उसे विचारों के माध्यम से प्रमाणित करता है।

उपन्यास शब्द अंग्रेजी के 'नावेल' शब्द का समानार्थी है। वैसे ही 'कादम्बरी' मराठी भाषा में और 'नवल' गुजराती भाषा में उपन्यास हेतु प्रचलित शब्द है। डॉ.हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'उपन्यास' शब्द के सार्थक प्रयोग के बारे में लिखा है– "उपन्यास वस्तुतः ही नवल नया और ताजा साहित्यांग है परंतु फिर भी जिस मेधावी ने कथा में आख्यायिका आदि शब्दों को छोड़कर अंग्रेजी नॉवेल का प्रतिशब्द उपन्यास माना था उसकी सूझ की प्रशंसा किए बिना नहीं रहा जा सकता।"[2]

उपन्यास शब्द का प्रयोग विशिष्ट साहित्य के रूप में सर्वप्रथम बंगला में हुआ है। बंगला भाषा से होकर यह हिन्दी में प्रयुक्त किया जाने लगा। बंगला के इतिहासकार डॉ. सुकुमार सेन ने उपन्यास का विवेचन करते हुए स्पष्ट किया है कि इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग भूदेव मुखर्जी ने किया था।

उपन्यास शब्द को किसी एक परिभाषा में बाँधना जो उसके यथार्थ रूप को सर्वरूपेण अभिव्यक्त कर सके कठिन ही नहीं, असंभव है क्योंकि यह सर्वाधिक रूपांतरणीय है और इसका कोई निश्चित रूप नहीं है। उपन्यास अबाध, सीमाहीन साहित्यिक विधा है। इसका स्वरूप नित्य परिवर्तित होता रहता है। इस कारण शब्दों के बंधन इसके लिए छोटे पड़ते है और इसकी परिभाषा में गतिशीलता उत्पन्न होती जाती है। विभिन्न भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने इस विधा के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए विभिन्न परिभाषाएँ प्रस्तुत की है।

1.1.1 भारतीय विद्वानों के अनुसार उपन्यास की परिभाषाएँः–

उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद – "मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र–मात्र समझता हूँ। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना एवं उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।"[3]

बाबु गुलाबराय – "उपन्यास कार्य–कारण श्रृंखला में बंधा हुआ यह गद्य कथानक है। जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेचीदगी के साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से संबन्धित वास्तविक काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सत्य का रक्षात्मक उदघाटन किया जाता है।"[4]

आचार्य रामचंद्र शुक्ल – "वर्तमान जगत में उपन्यासों की बड़ी शक्ति है। समाज जो रूप पकड़ रहा है, उसके भिन्न–भिन्न वर्गो में जो परिस्थितियों उत्पन्न हो रही है, उपन्यास उसका विस्तृत प्रस्तुतीकरण ही नहीं करते आवश्यकतानुसार उनके ठीक विन्यास, सुधार अथवा निराकरण की प्रवृत्ति भी उत्पन्न कर सकते है।"[5]

डॉ. श्यामसुन्दरदास – "उपन्यास वस्तुतः मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है।"[6]

डॉ. भागीरथ मिश्रा – "युग की गतिशील पृष्ठभूमि पर सहज शैली में स्वाभाविक जीवन की एक पूर्ण व्यापक झांकी प्रस्तुत करने वाला गद्य–काव्य उपन्यास कहलाता है।"[7]

डॉ. त्रिभुवनसिंह – "श्रृंखलाबद्ध कथानक द्वारा सरल और गूढ़ मानव चरित्र निर्माण, उसकी समस्याओं, सक्रिय गतिविधियों तथा सामाजिक एवं मानसिक संघर्षो से युक्त उनके स्वभावों एवं मन की महती शक्तियों के पूर्ण जीवंत एवं यथार्थ चित्र कल्पना के द्वारा जिस साहित्य रूप द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, उसे उपन्यास कहते है।"[8]

डॉ. रामशोभित सिंह – "उपन्यास आधुनिक युग का अति समादृत रूप है।"[9]

अज्ञेय – "उपन्यास व्यक्ति को अपनी परिस्थितियों के साथ संबंध को अभिव्यक्ति के उत्तरोत्तर विकास का प्रतिनिधित्व करता है।"[10]

डॉ. देवराज – "उपन्यास गद्य साहित्य का अन्यतम रूप है, जिसका आधार कथा है चाहे वह सीधे मनुष्यों की हो या मनुष्येत्तर जीव और निर्जीव प्रकृति की चाहे वह सच्ची हो या कल्पित।"[11]

1.1.2 पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार उपन्यास की परिभाषाएँ –

अर्नेस्ट ए बेकर – "उपन्यास को हम गद्यमय कल्पित आख्यान के माध्यम से की गई जीवन की व्याख्या कह सकते है।"[12]

हेनरी जेम्स – ″उपन्यास अपनी व्यापक परिभाषा के अनुसार जीवन का एक वैयक्तिक तथा प्रत्यक्ष अंकन है जो प्रथमतः उसके मूल्य की स्थापना करता है। यह जीवन मूल्य प्रभाव की तीव्रता के अनुसार कम या अधिक होता है किन्तु यदि उपन्यासकर अनुभव करने तथा कहने के लिए स्वतंत्र नहीं है तो तीव्रता का सर्वथा अभाव रहेगा फलतः उसका कोई मूल्य नहीं होगा।″[13]

ई.एम.फास्टर – ″काव्य तथा इतिहास की सीमा से घिरी हुई पचास हजार शब्दों से अधिक बड़ी गद्य रचना को उपन्यास की संज्ञा दी है।″[14]

एवल बेलवी – ″उपन्यास एक निश्चित आकार वाला गद्यमय आख्यान है।″[15]

वेबस्टर – ″उपन्यास एक ऐसा कल्पित विशालकाय गद्यमय आख्यान है, जिसमें एक ही कथानक के अन्तर्गत यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रों और उसके क्रिया कलापों का चित्रण रहता है।″[16]

क्रोंस – ″उपन्यास से अभिप्राय उस गद्यमय शिल्प कथा से है। जिसमें वास्तविक जीवन का यथार्थ चित्रण रहता है।″[17]

बर्नाड डी वोटे – ″उपन्यास अन्य साहित्यागों की अपेक्षा अधिक परिचित, प्रतिनिधित्वपूर्ण तथा विश्वसनीय माध्यम है।″

भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं से यह सिद्ध हो जाता है कि उपन्यास विधा का स्वरूप नित्य प्रति परिवर्तित होने के कारण इसकी कोई सर्वसम्मत व्याख्या नहीं की जा सकती है। अतः कह सकते है कि उपन्यास की कोई ऐसी सर्वांगपूर्ण परिभाषा नहीं बन पायी है जो इसको अपने सम्पूर्ण परिवेश में बांधने में समर्थ हो सके। इस हेतु डॉ. इंद्रनाथ मदान ने लिखा है– ″उपन्यास को परखने के लिए न तो शाश्वत मानदंड है और नहीं इसकी निश्चित परिभाषा है। हर कृति यदि वह अनुकृति नहीं है, अपने अपने कला नियमों को लिए हुए है। इसकी राह से गुजर कर ही उसके स्वरूप को जाना तथा पहचाना जा सकता है।″[18]

भारतीय व पाश्चात्य सभी विद्वानों द्वारा उपन्यास को परिभाषित करने के प्रयास से यह तथ्य स्वीकारा जा सकता है कि उपन्यास मानव जीवन को सम्पूर्ण रूप में श्रृंखलाबद्ध व्याख्यात्मक गद्य कथा में प्रस्तुत करने वाला सशक्त माध्यम है। उपन्यास मनुष्य के जीवन की झांकी और उसके चरित्र का विविध परिस्थितियों में प्रतिक्रियात्मक संभावनाओं सहित सफल उदघाटन है। उपन्यास विधा में एक तरह का आकर्षण है जो पाठकों को एक अलग दुनिया में ले जाता है। अतः इसी कारण हेतु उपन्यास आधुनिक युग में सर्वाधिक उपयोगी व लोकप्रिय विधा है।

1.2 उपन्यास का स्वरूप एवं विकासः–

1.2.1 उपन्यास का स्वरूप –

उपन्यास शब्द अपने आप में एक विशाल अर्थ समाए हुए है। इसमें पात्रों के कार्यो द्वारा जीवन का प्रतिनिधित्व किया जाता है। सभ्यता के विकास के साथ उपन्यास व इसकी अनेक विधाओं का विकास हुआ। उपन्यास आधुनिक सभ्यता के पूँजीवादी युग की देन है। उपन्यास का क्षेत्र बहुत व्यापक है उसमें कल्पना के साथ इतिहास का सत्य भी होता है। मनुष्य के भविष्य निर्माण हेतु उसमें सामाजिक यथार्थता के साथ सुधारवादी आदर्श भी होता है। इसी कारण विभिन्न विद्वानों ने भिन्न–भिन्न नामों से अभिहित किया है। बालकृष्ण भट्ट ने इसे 'मन बहलाने वाली गुटिका' कहा है तो रूपनारायण ने 'नॉवेल' तथा राधाचरण गोस्वामी ने इसे 'नवन्यास' की संज्ञा से अभिहित किया है। परंतु इन सभी शब्दों में उपन्यास शब्द ही अत्यधिक प्रचलित व रूढ़ हो गया।

हिन्दी का उपन्यास आधुनिक युग की देन है। उपन्यास जीवन के समान गतिशील और परिवर्तनशील है। इसके मूल में नवीनता के दर्शन होते है। सांसारिक धरातल पर जो अवलम्बित होता है उसी का चित्रण उपन्यास में मिलता है। उपन्यास की कथावस्तु का आधार मानव जीवन और उसके क्रियाकलाप है। सामाजिक संबंधों पर आधारित चरित्र–चित्रण उपन्यास के पात्र अपने संवादों के द्वारा प्रस्तुत करते है। देशकाल के द्वारा उपन्यास जीवन की विविधता, विषमता, पूर्णता को प्रकट करता है। अतः उपन्यास को जीवन की व्याख्या कहना सार्थक है। उपन्यास की इसी सार्थकता को स्पष्ट करने हेतु सभी विद्वानों ने इनके छह तत्वों को आवश्यक माना है जो निम्नानुसार है–

1) कथावस्तु या कथानक
2) पात्र या चरित्र–चित्रण
3) संवाद या कथोपकथन
4) देशकाल और वातावरण
5) भाषा शैली
6) उद्देश्य

1.2.1.1 कथावस्तु या कथानक –

उपन्यास का मूल आधार है– कथावस्तु। इसका महत्व उपन्यास के अन्य तत्वों में सर्वाधिक है। कथावस्तु पर ही उपन्यास रूपी भव्य इमारत की नींव है।

'कथावस्तु' को अंग्रेजी में (PLOT) कहते है। कथावस्तु अपने में जीवन की सम्पूर्णता का अंकन करती है तथा एक विस्तृत पृष्ठभूमि की रेखाओं को बाँधने का प्रयत्न करती है। उपन्यासों का संबंध घटनाओं और व्यापारों से होता है। इन्हीं को हम उपन्यास की कथावस्तु कहते है। उपन्यास की कथावस्तु किसी भी प्रकार की हो सकती है और उसका संबंध मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक या धार्मिक जीवन से भी हो सकता है। परंतु उनका स्वाभाविक होना आवश्यक माना जाता है और उनके साथ–साथ कथावस्तु में रोचकता, मौलिकता, कौशलता, सजगता, सुसंगठित आदि गुण आवश्यक हैं।"[19]

उपन्यास में कथावस्तु का चयन इतिहास, पुराण, जीवनी आदि कहीं से भी किया जा सकता है। वर्तमान में उपन्यास में महत्व उसी कथानक का है जो सामान्य जीवन से संबंधित है। उपन्यास में कथावस्तु द्वारा मानव जीवन से संबंधित विविध पक्षों, जीवन की विविध अवस्थाओं व अनुभूतियों की तीव्र अभिव्यक्तियों का चित्रण किया जाता है। सामान्यतः उपन्यास का सम्बन्ध घटनाओं व व्यापार से होता है।

उपन्यास की सफलता का आधार कथावस्तु के चयन में होता है। वैसे तो उपन्यासकार सामान्य कथावस्तु को अपनी प्रतिभा के द्वारा हीरे के समान निखार सकता है। परंतु उपन्यासकार को चाहिए कि संसार रूपी खुली किताब को अपने अध्ययन का आधार बनाए। इस संबंध में प्रेमचंद जी ने कहा है– कि "उपन्यासकार को अपनी सामग्री आले पर रखी हुई पुस्तकों से नहीं उन मनुष्यों के जीवन से लेनी चाहिए, जो उसे नित्य ही चारों तरफ मिलते है। मुझे पूरा विश्वास है कि अधिकांश लोग अपनी आँखो से काम नहीं लेते।"[20]

उपन्यास में कथानक के तीन आवश्यक गुण माने जाते है– रोचकता, स्वाभाविकता तथा गतिशीलता। उपन्यास की कथावस्तु उसका अनिवार्य तत्व है। उपन्यास में जब कथावस्तु का गुंफन होता है तो कथावस्तु में मुख्यतः दो प्रकार की कथाएँ चलती है। जिसे मूल कथावस्तु और प्रासंगिक कथावस्तु के रूप देखा जाता है। मूल कथावस्तु उपन्यास के पात्रों के चरित्र को सरलता से स्पष्ट करती है। प्रासंगिक कथावस्तु को दो भागों में बाँटा गया हैं– पताका एवं प्रकरी। इसमें पताका कथावस्तु मुख्य कथा के साथ अंत तक चलती रहती है जबकि प्रकरी नामक गौण कथा मध्य में ही समाप्त हो जाती है। उपन्यास की कथावस्तु मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक या धार्मिक किसी से भी संबंधित हो सकती है परंतु उसका सुगठित व स्वाभाविक होना आवश्यक है।

अतः कथानक उपन्यास का अनमोल आधार है जिसके अभाव में उपन्यास की रचना असंभव है।

1.2.1.2 पात्र या चरित्र–चित्रणः–

कथानक के बाद उपन्यास का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है– चरित्र–चित्रण। पात्रों के चरित्र व क्रियाकलापों से ही कथावस्तु का निर्माण होता है। उपन्यास की कथावस्तु मानव जीवन से संबंधित होती है। अतः उसके पात्र भी सामान्य संसार में व्याप्त सांसारिक चरित्र वाला होना आवश्यक है। उपन्यासकार पात्रों के द्वारा मानव जीवन के विविध घटकों को उजागर करते हुए अपनी अमिट छाप पाठक के मन पर छोड़ देता है।

उपन्यास में पात्रों के भी दो रूप पाये जाते है– मुख्य पात्र तथा गौण पात्र। मुख्य पात्र के अंतर्गत नायक और नायिका होते है जो प्रत्यक्ष रूप से कथावस्तु से संबंधित होते है। गौण पात्र मुख्य पात्रों से संबंधित व्यक्ति होते है जो मुख्य पात्रों से जुड़कर कथावस्तु को गति प्रदान करते है।

किसी भी उपन्यास में पात्रों की मौलिकता का होना बहुत आवश्यक है। मुंशी प्रेमचंद के शब्दों में– "किन्ही भी दो आदमियों की सूरते नहीं मिलती उसी भांति आदमी के चरित्र भी नहीं मिलते। जैसे सब आदमियों के आँख, कान, मुँह होते है, पर इतनी समानता के बाद भी जिस तरह उनमें विभिन्ता मौजूद रहती है, उसी भाँति सभी चरित्र में भी बहुत कुछ समानता होते हुए कुछ विभिन्नताएँ होती है। यही चरित्र संबंधी समानता और विभिन्नता, अभिन्नत्व में भिन्नत्व और विभिन्नत्व में अभिन्नत्व दिलाना उपन्यासकार का मुख्य कर्तव्य है।"[21]

पात्र या चरित्र उपन्यास का अत्यंत सजीव तत्व है। प्रत्येक पात्र अपनी विशेष व्यक्तिगत मनोवृति व स्वाभाविकता के साथ प्रविष्ट होकर कथानक को संचलित करते हुए पाठक को मूल रस की ओर प्रेरित करता है। प्रेमचंद जी कहते है– 'मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र–मात्र समझता हूँ।'

प्रत्येक उपन्यास में पात्र भिन्न–भिन्न वर्गों के प्रतिनिधित्व के रूप में आकर अपने वर्गों के विचार व दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते है। पात्रों की यह विशेषता भी है कि वे जिस समाज या वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है, सम्पूर्ण उपन्यास में उन्हीं के आदर्शों की हिमायत करते हुए परिलक्षित होते है।

1.2.1.3 संवाद या कथोपकथनः–

पात्र परस्पर जिस वार्तालाप द्वारा कथावस्तु को गति देते हुए अपने विचारों को प्रकट करते है, उसे संवाद कहते है। 'संवाद' उपन्यास में 'प्राणतत्व' समान है। उसके बिना न तो कथा आगे बढ़ती है और नहीं चरित्र चित्रण होता है। कथोपकथन का संबंध कथावस्तु एवं पात्र दोनों से जुड़ा हुआ है। कथोपकथन की सार्थकता हेतु प्रेमचंद जी के

विचार है– "उपन्यास में वार्तालाप जितना अधिक हो और लेखक की कलम से जितना कम लिखा जाये उतना ही उपन्यास सुंदर होगा। वार्तालाप केवल सुंदर ही नहीं होना चाहिए, प्रत्येक वाक्य को जो किसी चरित्र के मुँह से निकले उसके मनोभावों और चरित्र पर कुछ न कुछ प्रकाश डालना चाहिए। बातचीत का स्वाभाविक परिस्थितियों के अनुकूल सरस और सूक्ष्म होना जरूरी है" ।[22]

उपन्यास के संवाद तीन प्रकार के कार्य करते है–

(अ) संवाद उपन्यास की कथावस्तु के विकास के साथ आकर्षण को बढ़ाता है।

(आ) संवाद पात्र व पात्र के व्यक्तित्व से परिचित कराता है।

(इ) संवाद द्वारा उपन्यासकार अपने आदर्शों व अपने विचारों को रखते हुए सामाजिक विकृतियों पर तीखा व्यंग्य भी करता है।

कथोपकथन के दो रुप होते है– विश्लेषणात्मक और अभिनयात्मक। विश्लेषणात्मक में बातचीत द्वारा पात्रों का परिचय दिया जाता है। जबकि अभिनयात्मक में पात्र स्वयं बोलते है। उनके संवाद से ही उनका परिचय हो जाता है। संवाद जितने छोटे, व्यंग्यपूर्ण एवं मर्मस्पर्शी होते है, उतना ही उपन्यास अधिक रोचक व सार्थक बनता है। कथोपकथन की स्वाभाविकता व प्रंसगानुकूलता ही पाठकों की विश्वसनीयता के अधिकारी है।

1.2.1.4 देशकाल और वातवरणः–

उपन्यास के निर्माण में देशकाल एवं वातावरण का महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि प्रत्येक उपन्यास देशकाल और वातावरण से किसी न किसी रूप में संबंध रखता है। उपन्यास की स्वाभावित्का व सजीवता हेतु देशकाल का मुख्य स्थान होता है। देशकाल शब्द, समय और स्थल का बोधक है। मनुष्य पूर्णतः देशकाल की उपज होता है। अर्थात मानव जिस समाज में जीवन जीता है उस समाज के रीति–रिवाज, विचार, संस्कार, भाषा, वेशभूषा आदि को वह अपने जन्म के साथ सहजता से अपना लेता है।

बाबू गुलाबराम के शब्दों में– "व्यक्तित्व के निर्माण में वातावरण का बहुत कुछ हाथ होता है। जिस प्रकार बिना अंगूठी के नगीना शोभा नहीं देता उसी प्रकार बिना देशकाल के पात्रों का व्यक्तित्व भी स्पष्ट नहीं होता है और घटनाक्रम को समझने के लिए भी इसकी आवश्यकता होती है। आजकल बढ़े हुए वस्तुवाद के समय में देशकाल का महत्व और भी बढ़ गया है।"[23]

उपन्यास में देश व काल के अनुरुप देशकाल और वातावरण को दर्शाना अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है। उपन्यासकार को अपने उपन्यास को सफल बनाने एवं उपन्यास में घटित घटनाओं की यथार्थता को परखने हेतु उसमें कथानक को तत्कालीन देशकाल व

परिवेश के संदर्भ में सजीवता, यथार्थता व सुसंगतता का प्रकटीकरण करना होता है। तभी हर पाठकों के सामने सम्पूर्ण युग प्रकाशमान होगा।

देशकाल व वातावरण के तीन रूप माने गए है –

(अ) ऐतिहासिक

(आ) सामाजिक

(इ) प्राकृतिक

(अ) ऐतिहासिक उपन्यासों में देशकाल के संबंध में अधिक सचेत रहना होता है। ताकि उसमें समय का दोषारोपण ना हो तथा घटनाओं का वर्णन इतिहास के प्रतिकूल ना हो।

(आ) सामाजिक उपन्यासों में समाज की यथार्थता का वर्णन किया जाता है। समाज से संबंधित धर्म, संस्कार, वेशभूषा, संस्कृति, शिक्षा आदि का चित्रण किया जाता है।

(इ) प्राकृतिक उपन्यासों में प्रकृति के साथ पात्रों के तालमेल को बड़े सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इससे घटनाओं का सार्थक प्रभाव व वातावरण की अनुकूलता दृश्यमान होती है।

1.2.1.5 भाषा शैली –

साहित्य की विधाओं में भावों की अभिव्यक्ति का सर्वश्रेष्ठ माध्यम भाषा है। भाषा द्वारा अभिव्यक्ति के स्वरूप को शैली कहते है। भाषा मानव के व्यक्तित्व की सरल पहचान है। भाषा जितनी सरल, भावाभिव्यंजक एवं बोधगम्य होती है वह उतनी ही प्रभावकारी होती है। भाषा ही उपन्यासकार की सफलता का आधार है। उपन्यासकार को अपनी अभिव्यक्ति हेतु सरल व सहज भाषा–शैली को अपनाना चाहिए। भाषा का प्रयोग वातावरण व सामाजिकता के अनुकूल होना चाहिए जिससे पाठक को समझने में कोई कठिनाई न हो।

हिन्दी उपन्यासों में शैली के पाँच रूप माने गये है –

(अ) वर्णात्मक शैली

(आ) आत्म कथात्मक शैली

(इ) पत्रात्मक शैली

(ई) डायरी शैली

(उ) मिश्रित शैली

इसी प्रकार शैली पर उपन्यासों की सरलता, रोचकता निर्भर है। उपन्यास में कथानक, पात्रों का चरित्र चित्रण, घटनाओं का प्रकटीकरण व वातावरण को व्यक्त करने में भाषा शैली का अहम स्थान है। भाषा शैली के माध्यम से हम उपन्यास में विभिन्न रस शब्दशक्तियों, गुणों का समावेशन कर सकते है।

शैली उपन्यासकार की पहचान है। शैली के माध्यम से उपन्यासकार के व्यक्तित्व को परखा जा सकता है। उपन्यासकार जिन विचारों का वाहक होता है। उसके अनुकूल उसकी भाषा–शैली होती है। अर्थात साहित्य की प्रत्येक विधा की सफलता उसकी भाषा शैली द्वारा स्थापित होती है। इस प्रकार अन्य तत्वों की तरह भाषा शैली अपना अलग महत्व रखती है।

1.2.1.6 उद्देश्य –

मानव द्वारा प्रत्येक कार्य किसी न किसी कारण से किया जाता है। वैसे ही उपन्यासकार का भी उपन्यास की रचना हेतु एक विशिष्ट उद्देश्य होता है। उद्देश्य से तात्पर्य जीवन की यथार्थता से परिचय है।

उपन्यास का मुख्य उद्देश्य जीवन की यथार्थता का चित्रण करते हुए जीवन के विभिन्न पहलुओं का उद्‌घाटन करना है। अधिकांश उपन्यास में आदर्श को आधार मानकर समाज के यथार्थ को उजागर किया जाता है। उपन्यास जैसा विषय लेगा, उसका उद्देश्य भी वैसा ही होगा। उपन्यास द्वारा उपन्यासकार भूत को परिवर्तित कर भविष्य के निर्माण की नींव रखता है। अतः उपन्यास कल्पना के द्वारा जीवन की यथार्थता को प्रकट करने वाला एक गद्य है।

1.2.2 उपन्यास का विकासः–

उपन्यास वर्तमान युग की यथार्थता से परिचय कराने में सबसे सरल माध्यम के रूप में प्रकट हुआ है। हिन्दी में इस परम्परा का उदय 1870 से माना जाता है। उपन्यास द्वारा उपन्यासकार अपने विचारों का प्रकटीकरण करता है। हिन्दी साहित्य में उपन्यास का आविर्भाव उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में हुआ। उपन्यास पश्चिम की देन होने के कारण बंगला व मराठी जो कि पश्चिमी भाषा के सम्पर्क में थी, उन भाषाओं में इसका विकास सबसे पहले हुआ। उनमें उपन्यास की लोकप्रियता से हिन्दी में भी उसका शुभारम्भ हुआ।

हिन्दी के प्रथम मौलिक उपन्यास को लेकर विद्वानों में दो उपन्यासों– श्रद्धाराम फुल्लोरी कृत 'भाग्यवती' (1877) तथा लाला श्रीनिवास दास कृत 'परीक्षा गुरु' (1882) में मतभेद रहा है। भाग्यवती में शिक्षा के द्वारा सेवा के महत्व को चरितार्थ करते हुए सामाजिक अंधविश्वासों, पाखंडों, कुरीतियों से समाज के रक्षण को परिलक्षित किया है। परीक्षा गुरु में मध्यमवर्गीय समाज की समस्याओं से अवगत कराते हुए भारतीय सभ्यता व संस्कृति की श्रेष्ठता को प्रमाणित किया है। इस हेतु अधिकांश विद्वान परीक्षा गुरु को हिन्दी का प्रथम

उपन्यास मानते है। आचार्य रामचंद शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में उसकी मौलिकता को प्रमाणित कर 'परीक्षा गुरु' को हिन्दी का प्रथम उपन्यास मानते हुए उपन्यास जगत में क्रांति ला दी है। अतः उन्हें आधार मानते हुए उपन्यास के विकास को चार भागों में विभाजित किया है–

(1) प्रेमचंद पूर्व युग का उपन्यास साहित्य

(2) प्रेमचंद युग का उपन्यास साहित्य

(3) प्रेमचंदोत्तर युग का उपन्यास साहित्य

(4) समकालीन उपन्यास साहित्य

1.2.2.1 प्रेमचंद पूर्व युग का उपन्यास साहित्य –

प्रेमचंद पूर्व युग की धारा को दो मुख्य धाराओं में विभाजित किया जा सकता है– (1) मनोरंजन प्रधान (2) उपदेश या उद्देश्यप्रधान। मनोरंजन प्रधान उपन्यासों में जासूसी, तिलस्सी व एय्यारी उपन्यासों को शामिल किया जा सकता है। उद्देश्य प्रधान उपन्यासों में सामाजिक व ऐतिहासिक उपन्यासों को शामिल किया जा सकता है। हिन्दी उपन्यासों के प्रथम युग का आरम्भ भाग्यवती के रचनाकाल 1877 ई. से होता है। श्रद्धाराम फुल्लोरी कृत भाग्यवती में नायिका की बुद्धिमता से परिचय कराते हुए पारिवारिक सौहाद्रता को प्रकट किया है। भाग्यवती एक सामाजिक उपन्यास है। श्रीनिवासदास कृत 'परीक्षा गुरु' उद्देश्यप्रधान उपन्यास है। इसमें नायक द्वारा कुसंगति में वास्तविक चरित्र खोने के पश्चात मित्र के प्रयासों से अपना चरित्र अर्जित करता है। पं. बालकृष्ण भट्ट ने 'नूतन ब्रह्मचारी' व 'सौ अजान एक सूजान' में नैतिकता के पाठ को चरितार्थ किया है। राधाकृष्णदास ने 'निस्सहाय हिन्दु' (1890) में गोरक्षा की भावना को प्रेरित किया है। किशोरीलाल गोस्वामी के 'राजकुमारी, त्रिवेणी, आदर्शशती, पुनर्जन्म' आदि सामाजिक उपन्यास है। अयोध्यासिंह उपाध्याय का 'ठेठ हिन्दी का ठाठ', अधखिला फूल' व राधाकृष्ण गोस्वामी का 'कल्पलता' और विधवा विपत्ति आदि मुख्य सामाजिक उपन्यास है। इनमें समाज की वास्तविकताओं का वर्णन करते हुए उनके समाधानों से भी परिचय कराया है।

इस युग में मनोरंजन के उद्देश्य से जासूसी व तिलस्मी उपन्यास लिखे गये है। तिलस्मी उपन्यासों में विचित्र घटनाओं के घटने के बीच प्रेमकथा को आधार बनाया है जिसमें रोमांच व कौतुहल की अधिकता होती है। देवकीनंदन खत्री के 'चंद्रकांता, चंद्रकांता संतति, भूतनाथ, गोपालराम गहमरी के 'अदभूत लाश' 'गुप्तचर', 'बेकसुर की फाँसी' आदि उपन्यासों में तिलस्सी व जासुसी उपन्यास के प्रमुख तत्व है। किशोरीलाल गोस्वामी कृत 'तिलस्सी शीश महल, रामलाल वर्मा कृत 'पुतली महल' इसी कोटी के उपन्यास है।

1.2.2.2 प्रेमचंद युग का उपन्यास साहित्य –

1918 से 1936 तक का समय प्रेमचंद युग का है। इसे भारतीय समाज के नवजागरण का युग कहा गया है। प्रेमचंद जी से पूर्व हिन्दी उपन्यास जासुसी तिलस्मी उपन्यासों की दुनिया में खोया हुआ था। प्रेमचंद युग के उपन्यासकारों ने समाज की हीन अवस्था को देख उनमें सुधार लाने हेतु सामाजिक उपन्यास की रचना की तथा समाज की व्यवस्था में सुधार हेतु अपने विचारों को पाठकों के सामने रखा।

प्रेमचंद साहित्य को मनोरंजन व विलासिता की वस्तु नहीं समझते थे। वे साहित्य में उच्च विचार, जीवन की यथार्थता, चिंतन के पक्षधर थे। इनके उपन्यासों में भारतीय ग्रामीण जन जीवन का चित्रण है। इनके गोदान व प्रतिज्ञा में भारतीय किसान की दयनीयता, नारी की दुर्दशा व लाचारी, वर्ग संक्रमण, कृषक से मजदूर का सफर आदि को दर्शाया है। निर्मला में अनमेल विवाह व दहेज की समस्या को दिखाया है। कायाकल्प में सांमतो द्वारा किसानों का अत्याचार व धन की फिजुल बर्बादी पर प्रकाश डाला है। गबन में झुठ, दिखावा, धोखाधड़ी व वेश्यावृति आदि के द्वारा उत्पन्न समस्याओं को विस्तारपूर्वक बताया है। रंगभूमि व प्रेमाश्रम में युवा विधवाओं की दयनीय दशा का वर्णन किया है। सामाजिकता के साथ–साथ राष्ट्रीय भावना व राजनीतिक आंदोलनों का भी वर्णन इनके उपन्यासों में परिलक्षित होता है। कर्मभूमि में राजनैतिक व सामाजिक स्तर पर व्याप्त अव्यवस्था को दिखाया है। इनके उपन्यासों में सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन की मांग को उठाया है। सच्चे अर्थो में प्रेमचंद का साहित्य एक सच्चा व मार्गदर्शक साहित्य है।

प्रेमचंद के अतिरिक्त उनके समकालीन अन्य लेखकों ने भी सामाजिक व ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की है। विश्वंभरनाथ कौशिक के 'माँ' में माँ के आदर्श के साथ वेश्यावृति की बुराइयों व 'भिखारिणी' में अंतरजातीय विवाह से उत्पन्न समस्या व समाज की मानसिकता को दिखाया है। वृंदावन लाल वर्मा ने 'गडकुंडार, झांसी की रानी, लक्ष्मीबाई, विराटा का पद्मिनी, मृगनयनी, कचनार' आदि ऐतिहासिक व 'लग्न, अमरबेल, कुंडली चक, संगम, प्रत्यागत' आदि सामाजिक उपन्यासों की रचना करके अपनी एक अलग पहचान परिलक्षित की है। चतुरसेन शास्त्री ने 'हृदय की प्यास, अमर अभिलाषा, आत्मदाह' में सामाजिक यथार्थता को परोसा है। 'वैशाली की नगरवधू व सोमनाथ, सिंहगढ़' इनके ऐतिहासिक उपन्यास है। उषा देवी मित्रा ने भारतीय नारी के विभिन्न रूपों का वर्णन कर अपने उपन्यास साहित्य द्वारा नारी गुणों का परिचय दिया है। विभिन्न स्तरों पर अपमानित व असमानता का शिकार नारी की पीड़ा व रोष को व्यक्त किया है। 'मीठी चुटकी, निमंत्रण,

पिपासा' आदि उपन्यासों के द्वारा सामाजिक संघर्ष की गुंज भगवती प्रसाद वाजपेयी ने कराई है। जयशंकर प्रसाद ने कंकाल व तितली उपन्यासों द्वारा समाज के उत्थान व पतन का चित्रण किया है। इस प्रकार प्रेमचंद युगीन उपन्यासकारों का उद्देश्य मनोरंजन के साथ भारतीय समाज के कुछ वर्ग विशेष की यथार्थता को प्रकट करना है।

इस युग में उपन्यास की दो शैलियों का विकास हुआ– एक प्रेमचंद शैली व दुसरी प्रसाद शैली। प्रेमचंद शैली में घटना विशेष के साथ–साथ गांधीवादी विचारधारा व प्रगतिशीलता को महत्व दिया गया और प्रसाद शैली में मानवीय मन के विश्लेषण पर जोर दिया गया। प्रेमचंद व प्रसाद ने उपन्यास साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की है। भारतीय समाज में व्याप्त समस्याओं पर गंभीरता से विचार कर अपनी रचना द्वारा मानवीय संबंधों को उजागर किया है। प्रेमचंदयुगीन उपन्यास साहित्य में भावुकता व यथार्थता के साथ भारतीय आदर्श को सामने रखा है।

1.2.2.3 प्रेमचंदोत्तर युग का उपन्यास साहित्य –

यह युग उपन्यास साहित्य की दृष्टि से अनुठा युग है। यह युग आंदोलनों का युग रहा है। इस युग में कथानक, भाव–विचार, घटनाक्रम व भाषा की दृष्टि से कई बदलाव दिखाई दिए। इस युग में मनोवैज्ञानिक, आंचलिक, प्रगतिवादी, ऐतिहासिक आदि अनेक विषयों पर उपन्यासों की रचना हुई है। प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों ने शिल्प व कथावस्तु की महत्ता के माध्यम से उपन्यास को एक नई दिशा दी है। इस नयी दिशा में प्रमुख दिशा मनोवैज्ञानिक उपन्यास है।

1.2.2.3.1 मनोवैज्ञानिक उपन्यास –

मनोवैज्ञानिक उपन्यास से तात्पर्य उन उपन्यासों से है जो मनोविश्लेषण पर आधारित होते है। इन उपन्यासों में मानव के मन के असामान्य तत्वों का विश्लेषण किया जाता है। यद्यपि प्रेमचंद के उपन्यासों से ही मनोविज्ञान का प्रारम्भ हो गया था परन्तु आलोचकों ने प्रेमचंद के सामाजिक यथार्थ को मनोविज्ञान के स्थान पर ज्यादा महत्व दिया।

हिन्दी साहित्य में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की शुरुआत जैनेन्द्रकुमार के प्रथम उपन्यास 'परख' से हुई। इसके अतिरिक्त 'सुनीता, कल्याणी, सुखदा, त्यागपत्र जय–वर्धन' आदि इनके प्रमुख मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। इनके उपन्यासों में व्यक्ति के जीवन से जुड़े तनाव, कुंठा, अंतर्द्वंद आदि मानसिक प्रवृतियों को उजागर किया है। जैनेन्द्र ने समाज में स्त्री जीवन से जुड़े तनाव, आत्मपीड़ा व स्वतंत्र अस्तित्व की मांग को बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

इलाचंद जोशी के उपन्यासों में विचार पक्ष की प्रधानता है। 'लज्जा', 'संन्यासी' 'परदे की रानी', 'प्रेत और चाय', 'मुक्ति पथ', 'निर्वासित', जहाज का पंछी, जिप्सी आदि इनके प्रमुख उपन्यास है। इन्होंने अपने उपन्यासों द्वारा पाशविकता, अहमवादिता, काम—कुंठा, आदि मनोविकृतियों के माध्यम से व्यक्ति की पीड़ा और मानसिक द्वंद को प्रस्तुत किया है।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में सर्वप्रमुख नाम है— सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'। 'शेखर एक जीवनी' नदी के द्वीप, अपने—अपने अजनबी इनके उपन्यास है। इनके उपन्यास मनोवैज्ञानिकता के साथ—साथ दर्शनिकता, प्रकृतिवाद व असमाजिकता का पुट लिए है।

डॉ. देवराज के 'पथ की खोज, बाहर भीतर, रोड़े और पत्थर, अजय की डायरी में वे और आप, दुसरा सूत्र', आदि उपन्यास है। इन्होंने पुरुष की अहमवादी दृष्टि, स्त्री की उपेक्षा, विवाह से उत्पन्न कुंठा, व्यक्ति स्वतंत्रता आदि विषयों पर उपन्यास की रचना की है। धर्मवीर भारती ने 'गुनाहों का देवता, सूरज का सातवाँ घोड़ा' आदि उपन्यास लिखे है। गुनाहों के देवता में रोमानी तत्वों की अतिशयोक्ति है तथा सूरज का सातवाँ घोड़ा में मध्य वर्ग की प्रत्येक स्थिति के बाद आशावान दृष्टि को दर्शाया है।

इसी क्षेत्र में लक्ष्मीनारायण लाल का 'धरती की आँखे', बया का घोंसला, काले फूल का पौधा', नरेश मेहता का 'डूबता मस्तूल', प्रभाकर माचवे का 'द्वाभा और साँचा', गिरधर गोपाल का 'चाँदनी के खंडहर', भारत भूषण अग्रवाल का 'लौटती लहरों की बांसुरी', लक्ष्मीकांत वर्मा का 'खाली कुर्सी की आत्मा', 'टेरिकोटा', मोहन राकेश का 'अंधेरे बंद कमरे', उषा प्रियवंदा का 'पचपन खंभे लाल दीवारें' आदि उपन्यास आते है। इन सभी उपन्यासकारों ने कल्पना के स्थान पर व्यक्ति व समाज को केन्द्र में स्थान देकर व्यक्ति के मन की वासना, प्रेम, कुंठा, घृणा, दमित भावनाओं के प्रकट किया है।

1.2.2.3.2 सामाजिक उपन्यास —

सामाजिक उद्देश्य से युक्त उपन्यास लेखन की परम्परा प्रेमचंद युग से प्रारम्भ हो गई थी। परन्तु प्रेमचंद युग के उपन्यास आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के दायरे में ही रहे। प्रेमचंदोत्तर युग में सामाजिक यथार्थ की पृष्ठभूमि पर उपन्यास की रचना की गई। इस युग के उपन्यासकारों का उद्देश्य मानवतावाद की भूमि तैयार कर व्यक्ति को स्वार्थ से ऊपर उठाकर समष्टि के हित की ओर प्रेरित करना था।

पाण्डेयबेचन शर्मा 'उग्र' के 'चाँद हसीनों के खतूत', 'दिल्ली का दलाल', 'बुधुवा की बेटी', 'शराबी', 'सरकार तुम्हारी आँखो में', 'काँटा' आदि उपन्यास है। इन्होंने वेश्यावृति,

पुरुष मानसिकता, हिन्दु–मुस्लिम द्वेष, चारित्रिक पतन आदि समस्याओं को उजागर किया है। निराला के 'अप्सरा', 'अल्का', 'प्रभावती', 'निरूपमा', 'कुल्लिभाट', 'बिल्लेसुर बकरिहा', आदि उपन्यास है। इनके उपन्यासों में नारी पीड़न, नारी मुक्ति, परतंत्र नारी व ग्राम्य समाज की रूढ़ियों का यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुतीकरण है। भगवती चरण वर्मा ने 'पतन', 'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'टेढ़े–मेढ़े रास्ते', 'भूले बिसरे चित्र', 'सबहि नचावत राम गोसाई', आदि उपन्यास लिखे। इन्होंने स्वतंत्रता पश्चात व्याप्त सामाजिक व राजनैतिक परिस्थितियों का प्रस्तुतीकरण अपने उपन्यासों में किया है। अमृतलाल नागर ने अपने उपन्यास 'महाकाल', 'सेठ बांकेमल', 'बूंद और समुद्र', 'शंतरंज के मोहरे', 'नाच्यों बहुत गोपाल', 'ये कोठेवालियां', 'सुहाग के नूपुर' आदि समाज के विभिन्न स्तरों को परिभाषित करते हुए व्यक्ति व समाज दोनों की बराबर महत्ता को स्वीकार किया है। उपेन्द्रनाथ अश्क ने भी कई उपन्यास लिखे। 'गर्मराख', 'बड़ी–बड़ी आँखे', 'पत्थर–अल–पत्थर', 'निमिषा', 'शहर में घूमता आईना', 'बंधो न नाव इस ठावं' आदि में मध्यमवर्गीय समाज व उसमें व्याप्त कुप्रवृतियों और कुंठित व दमित इच्छाओं का चित्रण किया गया है। नरेश मेहता ने 'डूबते मस्तूल', 'यह पथ बंधु था', उत्तरकथा उपन्यासों में सामाजिक दृष्टि के अनुरूप जीवन के विविध पहलुओं का यथार्थ रूप में चित्रण किया है।

चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने 'चन्दन चाँदनी' में लेखिका ने कामकाजी महिलाओं की समाज व परिवार में दोहरी भूमिका को दर्शाते हुए इससे उत्पन्न संघर्षो से जूझते हुए दिखाया है। इस तरह इस युग के सामाजिक उपन्यासों में नारी का शोषण व संघर्ष, सामाजिक रूढ़ियों, धार्मिक कुप्रथाओं, आर्थिक शोषण व आधुनिकता के दौर में समाज का पतन आदि विषयों पर उपन्यास लिखे गये है।

1.2.2.3.3 प्रगतिवादी उपन्यास –

हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद का मूल पूंजीवादी व सर्वहारा वर्ग का संघर्ष है। इन उपन्यासों में पूंजीवाद के प्रति आक्रोश, सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूति व सामाजिक विषमताओं पर प्रहार करते हुए सामाजिक बदलाव पर जोर दिया है। प्रगतिवादी उपन्यासकार एक शोषण विहीन समाज व सभी भेदभावों से मुक्त समाज की स्थापना करना चाहते थे।

प्रगतिवादी उपन्यासकारों में प्रमुख है– यशपाल, राहुल सांकृत्यायन, नागार्जुन, भैरवप्रसाद गुप्त, रांगेय राघव, अमृतराय, भीष्म साहनी आदि। इन उपन्यासकारों ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण के माध्यम से जीवन को परिभाषित व विश्लेषित किया है। यशपाल के 'दादा कामरेड, देशद्रोही, दिव्या, पार्टी कामरेड, बारह घंटे, झूठा सच, मेरी तेरी उसकी

बात' आदि उपन्यासों में समाजवादी, प्रगतिवादी जीवन का दर्शन है। इनके उपन्यासों में नारी की समाज में दशा, राजनैतिक आंदोलन, सांमतशाही, भारत विभाजन से व्युत्पन्न त्रासदी का वर्णन मिलता है। राहुल सांकृत्यायन के उपन्यास 'जय यौधेय', 'जीने के लिए', 'सेनापति', 'मधुर स्वप्न', 'दिवोदास', 'विस्मृत यात्री' आदि में जीवन के विभिन्न पहलुओं का यथार्थ रूप में चित्रण किया है।

नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा', 'बाबा बटेसरनाथ', 'दुखःमोचन', 'वरुण के बेटे', 'हीरक जंयती', 'जमनिया के बाबा', आदि उपन्यासों में स्त्री से संबंधित समस्याएँ, पारम्परिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह व पतन, वर्ग–संघर्ष आदि अनेक विषयों पर उपन्यास की रचना की है। भैरवप्रसाद गुप्त एक मंजे प्रगतिवादी लेखक है। इन्होंने अपने उपन्यासों में सामंतवादी व्यवस्था व मजदूर वर्ग के बीच संघर्ष, जमीदारों द्वारा जनता का शोषण आदि मूल संवेदना को वाणी दी है। इनके प्रमुख उपन्यास 'शोले', 'मशाल', 'जंजीरे और नया आदमी', 'कांलिदी', 'सती मैया का चौरा', 'भाग्यदेवता' आदि है। रागेय राघव ने 'घरोंदे', 'हुजूर', 'सीधा–साधा रास्ता', 'कब तक पुकारु', 'धरती मेरा घर', 'मुर्दों का टीला', 'अंधेरे के जुगनू', 'रत्ना की बात', 'लखिमा की आँखे आदि उपन्यासों में समाज को विभिन्न स्तर पर भिन्न–भिन्न समस्याओं से लोहा लेते हुए चित्रित किया है। भीष्म साहनी ने 'झरोखे', 'कुंतो', 'कड़ियाँ', 'तमस', 'बसंती', आदि उपन्यासों में सामाजिक संदर्भों व नारी उत्पीड़न को दर्शाया है।

1.2.2.3.4 आंचलिक उपन्यास –

आंचलिक उपन्यास उन उपन्यासों को कहा जाता है, जिनमें किसी विशेष जनपद, अंचल के जनजीवन का समग्र चित्रण होता है। हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में आंचलिकता की परंपरा का प्रारंभ सन 1950 में हुआ। आंचलिक उपन्यासों ने हिन्दी कथा साहित्य को एक नवीन गतिशीलता प्रदान की है। इनके द्वारा उपन्यासकारों ने अंचल विशेष की समसामयिक समस्याओं, जीवन के संघर्ष, परस्पर अंतर्विरोध, टूटन व नवीन संबंधों के तानेबाने को प्रकट किया है। हिन्दी के प्रथम आंचलिक उपन्यासकर नागार्जुन व उनके उपन्यास बलचनामा को हिन्दी का प्रथम आंचलिक उपन्यास माना है, परंतु पूर्ण रूप से आंचलिकता को परिभाषित करने वाला कोई उपन्यास है तो वह फणीश्वरनाथ रेणु का "मैला आंचल'' है। इस उपन्यास ने जन–जीवन की विषमताओं व विसंगतियों को उदघाटित कर शिल्पविधा को एक नई दिशा दी है। आंचलिकता की दृष्टि से इनके अन्य उपन्यास 'परती परिकथा, दीर्घतमा, जुलूस, कितने चौराहे' आदि है

दशरथ मिश्र 'पानी के प्राचीर', 'जल टूटता हुआ', में बाढ़ के तांडव व उससे उत्पन्न पानी व अन्य समस्याएँ व ग्रामीण जीवन की समस्याओं से अवगत कराया है। राही मासूम रजा के 'आधा गाँव, हिम्मत जौनपुरी, ओस की बूँद, दिल एक सादा कागज' आदि उपन्यास है। उदयशंकर भट्ट ने 'सागर लहरें और मनुष्य' में मछुआरों का जीवन और उससे जुड़ी विभिन्न समस्याओं पर प्रकाश डाला है। विवेकी राय के 'बबूल', 'पुरुष पुराण', 'श्वेत–पत्र', 'मंगल भवन', 'समर–शेष', आदि उपन्यास है। शैलेष मटियानी के 'हौलदार', 'चोथी मुठठी', कुमाऊनी के जीवन पर आधारित उपन्यास है। राजेन्द्र अवस्थी के 'सूरज किरण की छाँव', जंगल के फूल', आदिवासी समाज पर आधारित उपन्यास है।

अतः इन उपन्यासों में जीवन की यथार्थता व उससे जुड़ी समस्याएँ, मूल्य, परस्पर संबंधों का द्वंद, भू–भागों की स्थिति का सफलतापूर्वक निर्वहन किया है। आंचलिक उपन्यासों में खानपान, भाषा, आचार–विचार, रहन–सहन आदि सभी का वर्णन अंचल विशेष के अनुसार किया गया है।

1.2.3 महिला उपन्यासकारों की भूमिका –

आधुनिक हिन्दी उपन्यास के विकास में महिला उपन्यासकारों की भूमिका उल्लेखनीय है। महिला उपन्यासकारों ने यथार्थ भोगे हुए अनुभवों और तीक्ष्ण विचारों तथा सुक्ष्म दृष्टि को अपनी लेखनी में उतारा है। महिलाओं द्वारा उपन्यास लेखन का आरम्भ उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में हुआ। पहली महिला उपन्यासकार के रूप में प्रख्यात नाम है– उषा देवी मित्रा। उषा देवी मित्रा ने अपने उपन्यास 'वचन का मोल, पिया, जीवन की मुस्कान, पथचारी, साहनी' आदि में नारी को केन्द्रित रख स्त्री की कारुणिक दशा को प्रस्तुत किया। डॉ. शैल रस्तोगी के अनुसार– "श्रीमति उषा देवी मित्रा का उपन्यास क्षेत्र में आगमन ठीक वैसी ही घटना है जैसी प्रेमचंद के आगमन से प्रारम्भिक युग के बाद हिन्दी उपन्यासों में हुई थी"।[24]

स्त्री विचारों को प्रस्तुत करने में दूसरी प्रतिभा है– कंचनलता सब्बरवाल। इन्होंने अपने उपन्यास 'मूकप्रश्न, भोली भूल, संकल्प, मुक तपस्वी, त्रिवेणी, भटकती आत्मा, स्वतंत्रता की ओर, पुनरुद्दार, अनचाहा, नया मोड, स्नेह के दावेदार, फूलों की सुंगध, काँटों की चुभन' आदि में सामाजिक व राजनैतिक विषमताओं, प्रेम की उदात्त भावना, सांमतवादी व्यवस्था, मन सौन्दर्य की उत्कृष्टता, पारिवारिक समस्या जैसे विभिन्न विषयों पर उपन्यास लेखन किया है।

1.3 स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास– विकास की दशाएँ –

सन 1950–60 के दशक को स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास का दशक माना गया है। यह दशक नए मुक्ति आंदोलनों से जुड़ा है। यह मुक्ति वैयक्तिक व सामाजिक दोनों स्तर पर है। समाज व व्यक्ति पुराने नैतिक मूल्यों के बंधन से मुक्त होकर नयी हवा में सांस लेना चाहता था। देश विभाजन के पश्चात उत्पन्न समस्याओं व चिंता भी उपन्यासों का विषय रहा है। 1950–60 के दशक के उपन्यासों में अनेक प्रयोगात्मक विशेषताएँ भी मिलती है। प्रेमचंदोत्तर युग के व्यक्तिवादी, मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक, सामाजिक उपन्यासों की रचना करने वाले उपन्यासकार स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी सक्रिय रहे। स्वतंत्रता के बाद उपन्यास के क्षेत्र में कई बदलाव हुए जैसे स्वतंत्र भारत की पारिस्थितियों में हुएँ। हिन्दी उपन्यास की इसी नवीनतम धारा को प्रयोगवादी उपन्यास या आधुनिकता बोध के उपन्यास कहा गया है। भ्रष्ट व्यवस्था, बदलता परिवेश, औद्योगिकीकरण, आधुनिक सभ्यता के दुष्परिणाम नगरीय जीवन का अकेलापन, निराशा, अवसाद, तनाव आदि अनेक विषयों व भावों में लिप्त हिन्दी उपन्यास की विषय वस्तु और प्रक्रिया नवीन होती गई। भारत को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। स्वतंत्रता के पश्चात जिन उपन्यासों की रचना हुई उसमें उपन्यासकारों ने जीवन की सत्यता व देश के उपेक्षित अंचलों पर प्रकाश डाला है।

अमृतलाल नागर ने 'नवाबी मसनंद, सेठ बांके मल, महाकाल, बूंद और समुद्र, सुहाग के नूपुर, शंतरज के मोहरे, अमृत और विष, बिखरे तिनके, नाच्यों बहुत गोपाल, मानस के हंस, खंजन नयन एकदा नेमिषारण्ये और करवट' आदि उपन्यासों में व्यक्ति और समाज के सापेक्षित संबंध को चित्रित किया है।

भगवती चरण वर्मा के 'भूले बिसरे चित्र', सामर्थ्य और सीमा, सबही नचावत राम गोसाई, सीधी सच्ची बातें', उपेन्द्रनाथ अश्क के 'गिरती दीवारे, गर्म राख, शहर में घूमता आईना, बांधो व नाव इस ठाव बंधु' जैसे अनेक सामाजिक उपन्यासों लिखे है। निर्मल वर्मा के 'वे दिन, लाल टीन की छत, एक चिथड़ा सुख, रात का रिपोर्टर आदि अनेक उपन्यास है। वे दिन उपन्यास में युद्ध के बाद नगर में व्याप्त अकेलेपन की संवेदनशीलता को उजागर किया है। मुक्तिबोध के 'विपात्र' में युवा के भटकाव को दर्शाया है। राजेन्द्र यादव के 'प्रेत बोलते है, सारा आकाश, उखड़े हुए लोग, राह और मात, अनदेखे–अनजाने पुल', आधुनिक जीवन के परिवर्तनशील जीवन मूल्यों को उद्‌घाटित करते है। 'झूठा सच' यशपाल का भारत विभाजन से उत्पन्न दयनीय स्थिति को उद्‌घाटित करता है। भगवतीचरण वर्मा का 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास वर्ग संघर्ष का साक्षी है।

इस युग के कुछ उपन्यासकारों ने शहरी जीवन पर आधारित उपन्यास की रचना की है। जो निम्नलिखित है– राजेन्द्र यादव (उखड़े हुए लोग), उपेन्द्रनाथ अश्क (शहर में घूमता आईना), भीष्म साहनी (कड़िया), अमृतराम (धुआं), प्रभाकर माचवे (किसलिए), कमलेश्वर (एक सड़क सत्तावन गलियाँ) आदि।

इस युग के मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों में इलाचन्द्र जोशी के 'मुक्ति पथ, जिप्सी, जहाज का पंछी, भूत का भविष्य', अज्ञेय के 'नदी के द्वीप, अपने–अपने अजनबी इस युग की प्रमुख कृतियाँ है। कुछ अन्य उपन्यासकार देवराज का (पथ की खोज), नागार्जुन का (बलचनमा), धर्मवीर भारती का (सूरज का सातवाँ घोड़ा) रुद्र का (बहती गंगा) और फणीश्वरनाथ रेणु का मैला आँचल इसी युग के उपन्यास है। इन सभी उपन्यासों में समाज की अवस्थाओं में आदमी की जदोजहद को दर्शाया है।

1.3.1 स्वातंत्र्योत्तर ऐतिहासिक उपन्यासः–

हिन्दी के उपन्यासकारों ने ऐतिहासिक उपन्यास के माध्यम से अपनी संस्कृति व मानव इतिहास को प्रकट किया है। इन उपन्यासों में भारत की दुर्दशा, मानवीय संबंध, राजनैतिक व्यवस्था, जमींदारी प्रथा आदि को अतिमानवीय घटना व पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। स्वातंत्र्योत्तर ऐतिहासिक उपन्यासों में सर्वप्रथम रांगेय राघव के उपन्यास "मुर्दों का टीला"–1948 व "महायात्रा"–1960 को समाविष्ट किया है।

रामायण को आधार बनाकर भी कई उपन्यास लिखे गए है जो इस प्रकार है– राहुल सांकृत्यायन का (दिवोदास), राजीव सक्सेना का (पणिपुत्री सोमा), हजारी प्रसाद द्विवेदी का (अनाम–दस का पौथा), चतुरसेन शास्त्री का (वयंरक्षाम) आदि।

इतिहास में व्याप्त अंधकार से संबंधित रागेय राघव ने 'अंधेरे के जुगनू व महायात्रा गाथा, रैन और चन्दा उपन्यास' लिखे है। ऐतिहासिक उपन्यासों में मौर्य काल के कथानक को लेकर भी उपन्यासों की रचना हुई है। चाणक्य की राजनीति से संबंधित डॉ. यतीन्द्र का (आचार्य चाणक्य), सत्यकेतु विध्यालंकार का (आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य) प्यारेलाल बेदिल का (प्यारा भारत) व सत्यनारायण कस्तूरिया का (सम्राट चन्द्रगुप्त) तथा अशोक केन्द्रित उपन्यास हरिभाऊ उपाध्याय का (प्रियदर्शी अशोक) व रमेशचन्द्र झा का (जीवनदान) तथा यशपाल का (अमिता) है।

इसी तरह राजपूत काल पर आधारित अनेक उपन्यास की रचना हुई है। राजबहादुर सिंह का (जब आकाश रो पड़ा), चन्दवरदाई का (पृथ्वीराज रासो), रघुवीरशरण मिश्र का (पहली हार), चतुरसेन शास्त्री का (रक्त की प्यास व हरण निमंत्रण) आदि है।

मुगलकाल पर आधारित भी कुछ उपन्यास लिखे गए है। गोविन्द सिंह का (जौहर), उमादेवी का (आंलिगन), जगदीश कुमार निर्मल का (साका), वाल्मिकी राणा का (विकलांग व जय विजय), चतुरसेन शास्त्री का (लाल किला) आदि है।

ऐतिहासिक उपन्यासों में महाराणा प्रताप को केन्द्रित कर अनेक उपन्यास लिखे गए है। चन्द्रशेखर पाठक का (महाराणा प्रतापसिंह), गोविंद सिंह का (जय मेवाड़), गुरुदत्त का (गंगा की धारा) आदि है।

भारत की स्वंतन्त्रता के इतिहास में 1857 की क्रांति व अंग्रजों की कूटनीति पर आधारित कुछ उपन्यास लिखे गए है। अमृतलाल नागर का (शंतरज के मोहरे), आनंद प्रकाश का (कठपुतली के धागे), शांति नारायण का (महारानी झाँसी), श्याम सुंदर का (मंगल पांडे), रमेश चन्द्र का (आजादी की राह में) आदि है। इस तरह हिन्दी के स्वातन्त्रयोत्तर ऐतिहासिक उपन्यासों में कई उपन्यासों की रचना हुई। अतः हिन्दी उपन्यासों का इतिहास स्वर्णिम है।

1.3.2 महिला उपन्यासकारों की भूमिकाः—

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास लेखन में महिला उपन्यासकार भी अग्रणी है। उन्होंने अपने यथार्थ जीवन के अनुभव व सुक्ष्म दृष्टिकोण द्वारा उपन्यास की रचना की है। स्वातन्त्रयोत्तर महिला उपन्यासकारों में अग्रणी है— रजनी पनिकर। इनके प्रमुख उपन्यास है— मोम की बत्ती, पानी की दीवार, काली लड़की, जाड़े की धूप, प्यासे बादल, सोनाली दी, अपने—अपने दायरे आदि इनके उपन्यासों में पुरुष की कामुकता, कार्यरत नारी की समस्याएँ, अपने अस्तित्त्व की लड़ाई आदि अनेक समस्याओं को उजागर किया है। चन्द्रकिरण सौनरक्सेना ने (चंदन चांदनी) व लीला अवस्थी ने (दो राहें) आदि उपन्यास लिखे है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में महिला लेखिकाओं ने नारी की मानसिकता को उपन्यासों में उतारा है। नारी शिक्षा, नारी के उत्थान व विकास आदि पर बल देकर नारी को सशक्त बनाने पर जोर दिया गया है। अतः परंपरागत मूल्य व आधुनिक मूल्य में नारी का संघर्ष इनके उपन्यास का विषय रहा है।

हिन्दी साहित्य में सबसे अधिक चर्चित व विवादास्पद लेखिका है— कृष्णा सोबती। 'डार से बछुडी, मित्रों मरजानी, सूरजमुखी अंधेरे के व जिंदगीनामा' आदि इनके उपन्यास में नारी मन की जटिल समस्याओं को चित्रित किया है।

शशिप्रभा शास्त्री के 'नाँवें, सीढ़ियाँ, क्योंकि, कर्करेखा, परसों के बाद, उम्र एक गलियारे की' आदि उपन्यासों में अनमेल विवाह, मानसिक स्थिति व घुटन पर दृष्टिपात किया है।

मेहरुन्निशा परवेज के 'आँखों की दहलीज, उसका घर, कोरजा, अकेला पलाश' आदि उपन्यास है। जिनमें प्रेम, विवाह, तलाक, अवैध संबंध आदि नारी की विवशता से जुड़े संदर्भ समाहित है।

मृदूला गर्ग बोल्ड लेखिका के रूप में जानी जाती है। इन्होंने नारी को एक नई परिभाषा व सोच के द्वारा नारी की नवीन छवि को उजागर किया है। 'उसके हिस्से की धूप, चित्तकोबरा, मैं और मैं, वंशज, अनित्य', आदि इनके प्रमुख उपन्यास है।

ममता कालिया के उपन्यास 'बेघर', 'नरक दर नरक' एवं 'प्रेम कहानी' आदि में पति–पत्नी के संबंधों, महानगरीय जीवन व पुरुषों की मानसिकता को दर्शाया है।

1.4 समकालीन उपन्यासः–

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश में नवजागरण की लहर उठने लगी। देश गुलामी से स्वतंत्र हो गया। परन्तु देश प्राचीन मान्यताओं व रूढ़ियों में फंसा होने के कारण सम्पूर्ण मानवीय व्यवस्था अस्त व्यस्त हो चुकी थी। पाश्चात्य सभ्यता के सम्पर्क में आने से समाज में नवीन दृष्टिकोण का प्रादुर्भाव हुआ। समाज के हर स्तर पर उसकी प्रतिछवि को देखा जा सकता था। ऐसे में साहित्य का क्षेत्र इन परिस्थितियों से अनछुआ कैसे रह सकता था। ऐसे में साहित्य में भी नवीन विधा समकालीन उपन्यासों का प्रादुर्भाव हुआ। यह युग अपनी अलग पहचान व विशेषता के कारण सदैव विचारणीय व बहुविध सौन्दर्य का परिचायक रहा। समकालीन पत्रिकाओं व समीक्षकों द्वारा समकालीन हिन्दी उपन्यास पर विशेष चर्चा होती रही है। क्योंकि स्वतंत्रता के बाद सत्ता के मूल्यों का पतन व भ्रष्टाचार के कारणों ने भारतीय समाज, सम्पूर्ण राजनैतिक व सामाजिक व्यवस्था तथा व्यक्ति व परिवार की अस्मिता को पतन की ओर अग्रसर कर दिया। परिणामतः समकालीन उपन्यासकारों ने इसकी प्रतिक्रिया हेतु आक्रोश व विद्रोह की अभिव्यक्ति अपनी रचनाओं में की है।

समकालीन उपन्यासकारों ने उपन्यास के क्षेत्र में नवीन प्रयोग किये है। व्यक्ति व उसकी सूक्ष्म व संकीर्ण मानसिकता से उत्पन्न समस्याओं व विशिष्ट चेतना को उजागर करना समकालीन उपन्यास का लक्ष्य है। आधुनिक जीवन की विभीषिकाओं व विसंगतियों को इन रचनाकारों ने स्वयं भोगा है। अतः उन परिस्थितियों का बड़ी कलात्मकता व सजीव यथार्थता के साथ चित्रण किया है। इस तरह उन्होंने यथार्थ के नए आयाम स्थापित किये है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में समकालीन उपन्यासों के नानाविध रूप देखने को मिलते है। आधुनिकता के दौर में उपभोक्तावाद, सांप्रदायिकतावाद, मध्यवर्गीय निम्न जीवन, संकुचित

मानसिकता, संकीर्णतावादी दृष्टिकोण, एकाकी जीवन, तनाव व कुंठा, नारी मुक्ति, पितृ—सत्तात्मकता, समाज में नारी की स्थिति, युवा भटकन, पारिवारिक विघटन व पलायन आदि विषयों से सराबोर समकालीन उपन्यास साहित्य तीव्र गति से विकासमान रहा है।

कृशन बलदेव वैद ने अपने उपन्यास "उसका बचपन, नसरीन, दर्द ला दवा, नर—नारी' में सामाजिक विसंगतियां, नारी जीवन की असहजता, समाज की रुग्ण मानसिकता को आधुनिकता से जोड़कर वर्णित किया है। राजकमल चौधरी ने 'एक अनार एक बीमार, मुर्गी खाना, मछली मरी हुई, देहगाथा, नदी बहती थी' उपन्यासों में परिवार, दांपत्यजीवन, प्रेम की निस्सारता व अलगाव को प्रकट किया है। इसी भाव से प्रेरित मोहन राकेश का (अंधेरे बंद कमरे), महेन्द्र भाल का (एकपति के नोट्स) है। गिरधर गोपाल के उपन्यास "कंदील और कुहासे" में नगरीय बोध व उससे उत्पन्न भटकाव व अनिश्चित जिन्दगी का चित्रण किया है। इस परम्परा में मन्नू भण्डारी के 'एक इंच मुस्कान, महाभोज, आपका बंटी' उपन्यास आते है।

प्रेमचंद युग में प्रवाहमान वृति पात्रों की सहज सजीव व स्वाभाविक प्रवृति द्वारा मनुष्य जीवन से जुड़ी छोटी—बड़ी सभी समस्याओं को कथानक का आधार बनाना। इसी परम्परा का निर्वाह शिव प्रसाद सिंह ने अपने उपन्यास 'अलग—अलग वैतरणी, गली आगे मुड़ती है, औरत, मंजूशिया आदि में किया है। मार्कंडेय ने 'अग्निबीज' द्वारा कांग्रेसी—शासन के प्रति मोहभंग की स्थिति को दर्शाया है। हरदेयेश ने 'एक कहानी अंतहीन, पुनर्जन्म, सफेद घोड़ा काला सवार, हत्या' आदि उपन्यासों में धर्म और संस्कृति, शिक्षा संस्थाओं व न्याय व्यवस्था आदि विषयों को उठाया है।

गिरिराज किशोर के उपन्यास "लोग, ढाई घर, चिड़िया घर, यात्राएं, प्रस्तावित" आदि में रचनात्मक कौशल का नवीन रूप निखर कर आया है। जगदीशचंद्र माथुर के 'यादों का पहाड़, आधा पुल, मुट्ठी भर कांकर, कभी न छोड़े खेत, धरती धन न अपना' उपन्यासों में जीवन की प्रति एक नई दृष्टि देखने को मिलती है।

समकालीन उपन्यासकारों ने सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक हर दृष्टि से समाज की सामयिक व बुनियादी समस्याओं को परखकर उपन्यास की रचना की। इन उपन्यासकारों ने पीढ़ी के बीच अंतराल से उत्पन्न समस्याएँ व वर्ग विशेष से संबंधित समस्याओं को अपने उपन्यास का विषय बनाया है। इसी परम्परा में असगर वसाहत का (सात आसमान), कामतानाथ का (काल—कथा), विद्यासागर नोटियाल का (सूरज सबका है), अलका सरावगी का (कलिकथा—वाया बाइपास) उपन्यास है जिसमें दो पीढ़ियों के विचारों में मतभेद से उत्पन्न टकराव को दर्शाया है।

वर्ग–विशेष की पुष्ठभूमि से संबंधित कई उपन्यास लिखे गये है। विनोद कुमार कृत 'नौकर की कमीज', एक क्लर्क की दिनचर्या पर आधारित है। अब्दुल बिस्मिल्लाह का 'झीनी–झीनी बीनी बदरिया' बनारस के बुनकर समाज के कठिन संघर्षो को दर्शाया गया है। रविन्द्र वर्मा के उपन्यास 'निन्यानबे' में परिवार के बिखराव से मूल्यों का पतन, मर्यादा, संस्कार, नीति व संबंधों सभी के बिखराव को तथा "जवाहर नगर' में 1975–77 आपातकाल व मध्यमवर्ग के पतन को दर्शाया है।

इस युग के उपन्यासकारों ने अंचल विशेष से संबंधित समस्याओं पर भी लेखनी को उतारा है। चंद्रकांता ने 'ऐलान गली जिंदा है' में कश्मीरी समाज की अच्छाइयों व बुराईयों को उजागर किया है। अमरकांत कृत "इन्हीं हथियारों से" उपन्यास में बलिया क्षेत्र में व्याप्त जीवन की विविधता को समेटा है।

समकालीन उपन्यासकारों ने समकालीन विषयों पर भी अपना कौशल दिखाया है। भगवानदास मोरवाल का (काला पहाड़) दुधनाथ सिंह (आखिरी कलाम, हमारा शहर उस बरस), तेजिंदर (काला पादरी), कमलेश्वर (कितने पाकिस्तान), जगदीशचन्द्र (नरक कुंड), नरेन्द्र कोहली (तोड़ो कारा तोड़ो), गिरिराज किशोर (पहला गिरमिटिया), संजीव (सूत्रधार) आदि उपन्यासकारों ने वर्तमान संदर्भों को सामान्य जीवन के प्रसंगो से जोड़कर समाज के सामने कई प्रश्न रखे है। इन प्रश्नों का हल अपने उपन्यास के अंत में दिखाकर पाठक वर्ग को सोचने पर मजबूर कर दिया है।

समकालीन उपन्यासकारों में महिला उपन्यासकारों की भूमिका भी सराहनीय है। किसी भी क्षेत्र में महिला उपन्यासकार पीछे नहीं है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र चाहे वह सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, पारिवारिक व समसामयिक संदर्भ आदि पर उन्होंने लेखनी को उतारा है। समकालीन काल में विस्मृत होते प्राचीन मूल्य, मान्यताएँ, निराशा–कुंठा की जकड़न, पारिवारिक विघटन, मानवीय संबंधों में अलगाव, एकाकी जीवन आदि सभी समस्याओं को अपने उपन्यास का विषय बनाया है। इस परम्परा के निर्वहन में ममता कालिया का (बेघर), कृष्णा सोबती का (सूरजमुखी अंधेरे में, जिंदगीनामा, दिलोदानिश), कांता भारती का (रेत की मछली), कृष्णा अग्निहोत्री का (कुमारिकाएँ) उपन्यास आते है, उषा प्रियंवदा का 'पचपन खम्भे लाल दीवारे, जय यात्रा, रुकोगी नहीं राधिका' उपन्यासों में नारी जीवन की विसंगतियों व नारी मन की दुविधा का चित्रण किया गया है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में नारी विमर्श को उत्कर्ष तक पहुँचाने में महिला लेखिकाओं की भूमिका सराहनीय है। चित्रा मुदगल का (आवां), मृदूला गर्ग का (कठगुलाब), मैत्रेयी पुष्पा का (चाक, इदन्नम), गीतांजली श्री का (तिरोहित) उपन्यासों में नारी अस्मिता से

जुड़े विभिन्न मुद्दो को उठाया है। भारतीय समाज पुरुष प्रधान होने से नारी भोगवाद, अन्याय व शोषण का शिकार बनती है। जिसके परिणाम स्वरूप वह विद्रोह का बिगुल बजा अपने अस्तित्व की लड़ाई की ओर अग्रसर होती है।

समकालीन महिला लेखन की सशक्त हस्ताक्षर है– प्रभा खेतान। इन्होंने 'आओ पे पे घर चले, तालाबंदी, छिन्नमस्ता, अपने–अपने चहरे, एड्स, अग्निसंभवा' आदि उपन्यासों में नारी को स्वतंत्र व्यक्तित्व प्रदान करने का प्रयास किया गया है।

इनके अतिरिक्त दिनेश नंदिनी डालमिया, मैत्रेयी पुष्पा, मृणाल पांडे, चित्रा मृदगल, निरुपमा सेवती, सूर्यबाला, नासिरा शर्मा, चंद्रकांता आदि महिला लेखिकाओं ने उपन्यास के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। अतः महिला लेखिकाओं ने अपने युग की समस्त संवेदना को जीवन की समग्रता के साथ प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है।

निष्कर्ष –

हिन्दी के उपन्यास का विकास विविध रंगी है। समय के साथ उपन्यास साहित्य का भी विस्तार होता गया है। उपन्यास चूंकि जीवन की अभिव्यक्ति का सर्वाधिक निकट व समृद्ध माध्यम है। अतः जीवन की अनेक अवस्थाएँ उपन्यास में समाहित होती गई है। जीवन की तरह उपन्यास भी अनेक विषयों, स्थितियों व परिस्थितियों से आंदोलित व प्रवाहमान होता चला गया।

संदर्भ सूची –

1. प्रगतिवादी हिन्दी उपन्यास, डॉ विजयलक्ष्मी पाण्डेय, पृष्ठ सं. 69
2. साहित्यिक निबंध, डॉ उमेशचन्द्र मिश्र, डॉ लक्ष्मीकांत पाण्डेय, पृष्ठ सं. 11
3. प्रेमचंद एवं समकालीन भारतीय उपन्यासकार, डॉ कलावती प्रकाश, पृष्ठ सं. 2
4. काव्य के रूप, बाबू गुलाबराय, पृष्ठ सं. 12
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ सं. 513
6. साहित्यालोचन, डॉ श्यामसुंदर दास, पृष्ठ सं. 112
7. काव्य शास्त्र, भागीरथ मिश्र, पृष्ठ सं. 79
8. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, डॉ त्रिभुवन सिंह, पृष्ठ सं. 6
9. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास, मफतलाल पटेल, पृष्ठ सं. 3
10. साहित्यिक निबंध, डॉ उमेश चन्द्र मिश्र, डॉ लक्ष्मीकांत पाण्डेय, पृष्ठ सं. 11
11. साहित्यिक निबंध, डॉ उमेश चन्द्र मिश्र, डॉ लक्ष्मीकांत पाण्डेय, पृष्ठ सं. 12
12. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास, मफतलाल पटेल, पृष्ठ सं. 3

13. द आर्ट ऑफ फिक्शन, हेनरी जेम्स, पृष्ठ सं. 8
14. आस्पेक्ट्स ऑफ नॉवेल, ई. एम. फास्टर, पृष्ठ सं. 13–14
15. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास, मफतलाल पटेल, पृष्ठ सं. 3
16. साहित्यिक निबंध, डॉ उमेश चन्द्र मिश्र, डॉ लक्ष्मीकांत पाण्डेय, पृष्ठ सं. 2
17. द डेवलपमेंट ऑफ इंग्लिश नॉवेल, क्रॉस, पृष्ठ सं. 1
18. आज का हिन्दी उपन्यास, डॉ इंद्रनाथ मदान, पृष्ठ सं. 1
19. शिवप्रसाद के उपन्यासों में आँचलिकता, पीठिया प्रवीण, पृष्ठ सं. 18
20. कुछ विचार, प्रेमचंद, पृष्ठ सं. 85–86
21. वहीं, पृष्ठ सं. 92–93
22. वहीं, पृष्ठ सं. 103
23. काव्य के रूप, डॉ बाबू गुलाबराय, पृष्ठ सं. 168
24. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास का विकास, डॉ प्रभु शुक्ल,पृष्ठ सं. 13

द्वितीय अध्याय

डॉ प्रभा खेतानः व्यक्तित्व एवं कृतित्व

द्वितीय अध्याय

डॉ प्रभा खेतानः व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना

2.1 व्यक्तित्व

2.1.1 वैयक्तिक परिचय

2.1.1.1 जन्म

2.1.1.2 पारिवारिक परिस्थितियाँ

2.1.1.3 शिक्षा

2.1.2 कर्म क्षेत्र

2.1.3 सृजन के स्त्रोत एवं प्रक्रिया

2.1.4 सम्मान एवं पुरुस्कार

2.2 कृतित्व

2.2.1 उपन्यास

2.2.1.1 आओ पे पे घर चले

2.2.1.2 तालाबंदी

2.2.1.3 अग्निसंभवा

2.2.1.4 एड्स

2.2.1.5 छिन्नमस्ता

2.2.1.6 अपने–अपने चेहरे

2.2.1.7 पीली आँधी

2.2.1.8 स्त्री–पक्ष

2.2.2 कविता–संग्रह

2.2.3 चिंतनपरक साहित्य

2.2.3.1 सार्त्र का अस्तित्ववाद

2.2.3.2 शब्दों का मसीहा सार्त्र

2.2.3.3 अल्बेयर कामूः वह पहला आदमी

2.2.3.4 उपनिवेश में स्त्री– मुक्ति कामना की दस वार्ताएँ

2.2.3.5 बाजार के बीचः बाजार के खिलाफ भूमंडलीकरण और स्त्री के प्रश्न

2.2.3.6 भूमंडलीकरणः ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र

2.2.4 अनुवाद

2.2.4.1 सांकलों में कैद क्षितिज

2.2.4.2 स्त्री उपेक्षिता

2.2.5 संपादन

2.2.5.1 एक और पहचान

2.2.5.2 हंस पत्रिका के महिला विशेषांक का सम्पादन

2.2.6 आत्मकथा

2.2.6.1 अन्या से अनन्या

2.2.7 लेख

डॉ प्रभा खेतानः व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना –

हिन्दी महिला साहित्यकारों में प्रभा खेतान का एक अनुपम स्थान है। प्रभा खेतान बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में स्त्री विमर्श व नारीवादी सोच की लेखिका के रूप में उभर कर सामने आयी है। प्रभा खेतान एक संवेदनशील व दृढ़ संकल्पी रचनाकर होने के साथ–साथ एक कामयाब व्यवसायी महिला भी थी। उन्होंने नारी के बहुआयामी संबंधों को सामाजिक व पारिवारिक स्तर पर विश्वसनीय ढंग से प्रस्तुत किया और परम्परा व आधुनिकता के दौर में स्त्री की अस्मिता से हमें परिचित कराया है। प्रभा खेतान ने अपने उपन्यासों, कविता, आत्मकथा, चिंतन आदि साहित्यिक विधाओं में सामाजिक, आर्थिक वस्तु स्थिति को स्थापित करते हुए स्त्री की अस्मिता व उनके आर्थिक पहलुओं को सामने रखते हुए स्त्री को एक नई दिशा देने में सफल हुई है।

भारतीय नारी का जीवन प्रारम्भ से ही नारी मुक्ति आदोंलन के परिणामों से प्रेरित व प्रभावित होता रहा है। आधुनिक समय में भारतीय नारी शोषण के विरुद्ध व अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत रहते हुए अपनी अंतरात्मा की आवाज को स्वच्छंद रूप में कलम के माध्यम से प्रस्तुत करने में लगी है। हिन्दी कथा साहित्य में साठ के दशक से महिला लेखिकाओं का एक बड़ा दल उभरकर सामने आया जिसने स्वयं को पुरुष के समक्ष सृजन के क्षेत्र में स्थापित करने में सफलता हासिल की है। यह सत्य है कि स्त्री – पुरुष के मध्य जैविक अंतर होने के बावजूद स्त्री की मानसिक शक्ति साहित्य व कला के क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान रखती है, क्योंकि नारी स्वयं अपने निजी अनुभव और जीवन के बोध को वर्णित करती है तो उसका प्रभाव और वास्तविकता पूरी तरह भिन्न होते है।

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में उपन्यासों में अनेक महिला लेखिकाओं ने साहसपूर्ण, मौलिक जीवन के साथ जीवन की विसंगतियों व विषमताओं को अपनी दृष्टि से विश्लेषित किया है। उन लेखिकाओं में कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, सूर्यबाला, निरूपमा सेवती, दिनेशनंदिनी डालमिया, मणिका मोहिनी, मंजुल भगत, सुनीता जैन, शुभा वर्मा, मन्नू भंडारी, चित्रा मुद्‌गल, शिवानी, दीप्ति खंडेलवाल, मालती जोशी, शशिप्रभा शास्त्री, मैत्रेयी पुष्पा आदि का योगदान उल्लेखनीय है। इन लखिकाओं ने नारी की मनः स्थिति को स्वाभाविकता से व्यक्त कर नारी जीवन का प्रभावशाली और सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। पुरुषों के लेखन में अनुभूति का अभाव होने के कारण वह तन्मयता नहीं आती है जो महिला साहित्यकारों में संभव होती है। पुरुष मात्र नारी जीवन का दर्शक मात्र होता है और दर्शक केवल देख व सुन सकता है। इसी नारी लेखन की कड़ी मे जुड़नेवाला एक नाम है प्रभा

खेतान। जिन्होंने अपने उपन्यासों में सामाजिक रूढ़ियों, परम्पराओं, कुप्रथाओं, एवं विसंगतियों के प्रति विद्रोह के स्वर मुखरित करते हुए सामाजिक व नैतिक मूल्यों को नकारते हुए स्वतंत्रतापूर्वक जीने की कामना का समर्थन किया है।

प्रभा खेतान जी का व्यक्तित्व व कृतित्व बहुआयामी है। उनका सम्पूर्ण कृतित्व उनके व्यक्तित्व का प्रत्यक्ष व परोक्ष प्रतिबिंब है। प्रभा जी की साहित्यिक रचनाओं में निर्भीक विचारों वाले व्यक्ति को जानने के लिए हमें उनकी जीवन–यात्रा व परिवेश को जानने की आवश्यकता है। इस परिपेक्ष्य में प्रभा जी के व्यक्तित्व व कृतित्व का अध्ययन करने का प्रयास इस अध्याय मे किया गया है।

2.1 व्यक्तित्वः–

2.1.1 वैयक्तिक परिचयः–

2.1.1.1 जन्मः–

नारी मुक्ति आंदोलन व स्त्री–चिंतन की प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ प्रभा खेतान का जन्म 1 नवंबर 1942 को दक्षिण कोलकत्ता के सबसे प्रसिद्ध मुहल्ला लेक रोड़ के मकान न० 72 में सबसे धनाढ्य व मारवाड़ी उद्योगपति के घर में हुआ। उनके पिता का नाम श्री लादूराम जी खेतान तथा माता का नाम पुरन देवी खेतान था। प्रभा जी के परिवार में कुल सात भाई–बहन थे जिनमें पाँच लड़कियाँ और दो लड़के थे। प्रभा जी बेहद संकीर्णतावादी हिन्दू सनातनी मारवाड़ी परिवार में पाँचवी संतान थी। मारवाड़ी परिवार में लड़की के जन्म को जहाँ मनहूस घटना समझा जाता था वहाँ पाँचवी संतान के रूप में बेटी के जन्म से वे कैसे खुश होते। अतः उनका पूरा बचपन गर्दिश में बीता था। बचपन से ही वह माँ के द्वारा अपमानित व उपेक्षित जीवन जी रही थी परंतु वह पिता की सबसे लाड़ली बिटिया थी। वह भी अपने पिता से अधिक प्यार करती थी। प्रभा जी के पिता जुट के बहुत बड़े व्यापारी थे। एक बार उन्हें जुट के व्यवसाय में बहुत बड़ा घाटा हुआ। उन्हें अपनी मिल बेचनी पड़ी। बाद में एक सेठ के यहाँ पार्टनरशिप स्वीकार कर ली। बनवारी लाल सेठ ने उनके अनुभव का फायदा उठाकर जुट के व्यापार में बहुत लाभ कमाया, पर हिस्सेदारी के समय सेठ की नीयत डोल गयी और आखिर एक दिन बाबूजी के जिगरी दोस्त व समधी बालुराम जी और बनवारीलाल सेठ ने उन्हें जहर देकर मार डाला। दुर्भाग्यवश नौ वर्ष की अल्पायु में उनके पिता का हाथ उनके सर से उठ गया। प्रभा जी का बचपन यातनाओं से भरा था। प्रभा जी को बचपन से न प्यार मिला और न ही माँ का आँचल। माँ की उपेक्षा और भाई बहनों की नफरत सहती हुई प्रभा दाई माँ की गोद में पली–बड़ी। सुबह दाई माँ के कमरे में प्रवेश करने से ही प्रभा जी के दिन की शुरुआत होती थी। सुबह से लेकर रात तक प्रभा जी की

हर बात का ख्याल दाई माँ रखती। प्रभा जी के सारे दैनिक कार्य दाई माँ ही करती थी। परिवार के सभी सदस्यों का व्यवहार उनके प्रति भेदभाव वाला होने के कारण उनका बचपन बड़ा अनाथ था। वह अपने अनाथ बचपन के प्रति कहती है कि "कैसा अनाथ बचपन था अम्मा ने कभी मुझे गोद में लेकर चूमा नहीं। मैं चुपचाप घंटो उनके कमरे के दरवाजे पर खड़ी रहती। शायद अम्मा मुझे भीतर बुला ले। शायद .....हाँ, शायद अपनी रजाई में सुला ले। मगर नहीं, एक शाश्वत दूरी बनी रही हमेशा हम दोनों के बीच। अम्मा मेरी बातों को समझ ही नहीं पाती थी।"[1]

माँ से प्यार की उम्मीद रखना बच्चे का हक होता है। परंतु प्रभा जी ने अपनी तकदीर से समझौता कर लिया और दाई माँ को ही अपनी माँ मानने लगी। दाई माँ ने भी प्रभा को भरपूर प्यार दिया।

प्रभा का बचपन बेहद नीरस, उपेक्षित व घुटन भरा रहा परंतु उसकी किशोरावस्था अधिक दुखदायी थी, कारण था उम्र से जल्दी बड़ा होना। नौ वर्ष की उम्र में ही प्रभा का मासिक धर्म शुरू हो गया। किशोरावस्था में होने वाले सारे परिवर्तन दस वर्ष की प्रभा में दिखने लगे। प्रभा की माँ हर पल उसे ताना मारकर इस बात का एहसास कराती, कि प्रकृति की असमय देन के कारण प्रभा को प्यार के बजाय गालियां मिलती है। प्रभा लिखती है – "भटा पत्थर, बोकी गधी, भंगन उपाधियों से विभूषित होकर मैं कपड़े बदलने गई।"[2] प्रभा की माँ उनके साँवले रंग को लेकर भी सदैव परेशान रहती थी और कहती थी कि– "हे रामजी इसकी नैया कौन–सी घाट पर लगेगी ?"[3]

अपनी माँ द्वारा बार बार उपेक्षित शब्दों को सुन वह कहती है कि "मैं ब्याह नहीं करूँगी।"[4] प्रभा के अनुसार विवाह एक ओवरडेटेड संस्था है। वह उसे ज्यादा महत्व नहीं देना चाहती है। वह कहती है "मेरी राय में विवाह एक ओवरडेटेड संस्था है मैं इस संस्था को ज्यादा तरजीह देने से इंकार करती हूँ।"[5]

हर समय माँ की उपेक्षा व मातृत्व के अभाव में प्रभा दाई माँ को ही अपना संरक्षक मानती थी व उनके बिना वह अपने आप को असहाय समझती थी। प्रभा लिखती है– "मुझे मालूम नहीं कि अब क्या करना चाहिए। दाई माँ दिखलाई नहीं देती, मैं कितनी असहाय हूँ। दाई माँ के अलावा मेरा कोई नहीं।"[6]

दूसरी जगह प्रभा लिखती है– "दाई माँ मेरा सहारा, मेरा आश्रय थी। अम्मा के क्रोध, भाई–बहनों का तूफानी वेग, गरजते बादल, कड़कती बिजलियाँ, दाई माँ इन सबसे मुझे बचाकर रखती।"[7]

माँ व भाई बहनों से उपेक्षित प्रभा को हर चीज के लिए अपमानित और तरसना पड़ता था। बीमारी के वक्त दवाइयों के लिए भी तरसना पड़ता था। परिवार के सदस्यों के साथ घर के नौकर भी प्रभा की उपेक्षा करते थे। आया राधा मालिश करते समय कहती "एक तो प्रभा बाई ऐसे ही काली है, फिर यह सरसों के तेल की मालिश से कहां से गौरी होगी?"[8]

इस तरह प्रभा जी का बचपन उपेक्षा व अपमान के साथ में गुजरता है।

2.1.1.2 पारिवारिक परिस्थितियाँः–

प्रभा खेतान का परिवार दकियानूसी व संकीर्ण हिन्दू परिवार था। प्रभा के जन्म का समय गांधीजी के प्रभाव व राष्ट्रीय नेतृत्व का था। प्रभा जी के पिता जी भी गांधीवादी विचारधारा वाले थे। प्रभा जी लिखती है– "बाबूजी अपनी ससुराल राजगड़िया हाऊस जीमने गये थे। गांधीजी की आलोचना सुनकर बिना भोजन किए ही चले आए।"[9]

मारवाड़ी समुदाय में हर पल व्यापार व पैसा की ही चर्चा होती रहती थी। ऐसे ही वातावरण में प्रभा जी का बचपन व किशोरावस्था बीती थी। प्रभा जी ने लिखा है कि– "हमारे परिवार का सुख था रुपया! अधिक से अधिक रुपया।"[10]

प्रभा के पिता व्यापारी थे। उनकी अपनी जुट की मिल थी। प्रभा का परिवार वृहद एवं सम्पन्न परिवार था। प्रभा के पिता उन्हें बहुत दुलार करते थे, परंतु दुर्भाग्यवश जब प्रभा नौ साल की थी तभी उनके पिताजी की एक साजिश के तहत जहर देकर हत्या कर दी गई। प्रभा जी लिखती है– "दूसरे दिन अखबार में सुर्खियाँ थी– प्रसिद्ध उद्योगपति लादुराम खेतान की रहस्यमयी मौत। मृतदेह सोनागाछी के बाथ हाऊस में मिली।"[11] उनके पिता के देहांत के बाद परिवार की स्थिति ही बदल गई।

मारवाड़ी परिवारों में शिक्षा को अधिक महत्व नहीं दिया जाता है। उनके लिए व्यापार ही सर्वोपरि है। मारवाड़ी परिवारों में शिक्षा की महत्ता कम होने से लड़कियों को शिक्षा प्राप्त होना मुश्किल था। प्रभा की माँ सदैव उनके स्कूल जाने के खिलाफ रहती थी परंतु इनके पिता लड़कियों को भी पढ़ाना चाहते थे। उनके शब्द प्रभा जी लिखती है– "इन लड़कियों को पढ़ने भेजो इन्हें मैं ऊँची शिक्षा दिलाना चाहूँगा।"[12]

पिताजी के गुजरने के पश्चात जैसे वह घर प्रभा के लिए असुरक्षित हो गया। प्रभा को जीवन की एक बहुत बड़ी त्रासदी से गुजरना पड़ा। प्रभा के सगे बड़े भाई ने उसका शारीरिक शोषण किया। प्रभा ने जब अपने शोषण से इंकार व विरोध किया तो उसकी फीस आदि पर पाबंदी लग गई।

पिताजी के देहांत के बाद प्रभा ने अपनी माँ को सदैव विचलित व परेशान ही देखा। उनकी परेशानी का मूल था सामाजिक मर्यादाएं निभाना। प्रभा की बहनें व भाभी सदैव कपड़ों व गहनों में खोई रहते थी। आर्थिक परेशानियों व हकीकत से उनका कोई सरोकार नहीं था। प्रभा का परिवार अंदर से खोखला होते हुए भी सामाजिक रूप से धनी उद्घोषित था। प्रभा की माँ घर की इज्जत और आर्थिक रूप से कमजोर स्थिति को छुपाये रखने के लिए सदैव दोगला व्यवहार बनाए रखती थी। जहाँ रुपया इंसान को भौतिक सुविधाएँ देता है वहीं उनके छिन्न जाने से असुरक्षा की भावना व तनाव भी उत्पन्न करता है। परिवार बाहर से जितना सुखी दिखाई देता है, उतना ही अंदर से भयभीत होता है। प्रभा इन्हीं परिस्थितियों मे पल रही थी।

2.1.1.3 शिक्षा –

शिक्षा का जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। शिक्षा सभी के जीवन में उसके उतरोत्तर विकास व नव सृजन की प्रेरणा का माध्यम होती है। व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन ही शिक्षा का पर्याय है। प्रभा जी के जीवन में सृजन का माध्यम शिक्षा है। प्रभा जी की प्रारम्भिक शिक्षा गोखले मेमोरियल कान्वेंट स्कूल कलकत्ता में हुई। कुछ समय बाद प्रभा जी लिखती है– "अम्मा ने गोखले मेमोरियल कान्वेंट स्कूल से गीता और मेरा नाम कटा दिया, घर में बैठो, राई जीरा चुनो, सिलाई–कढ़ाई करो।"[13] पिता उच्च आदर्शवादी थे और वह अपनी बेटियों को ऊँची शिक्षा दिलाकर स्वावलंबी बनाना चाहते थे। चौथी से ग्याहरवीं कक्षा तक की उनकी स्कूली शिक्षा बालीगंज शिक्षा सदन कोलकत्ता में हुई। प्रभा की शिक्षा की राह भी बड़ी कठिनाइयों से ओतप्रोत रही। कई बार स्कूल के लिए समय पर तैयार नहीं हो पाती थी और स्कूल बस चली जाती थी। दाई माँ की मिन्नतों के बाद उन्हें स्कूल भेजा जाता था। परेशानियों और उनका चोली दामन का साथ था परंतु इसके बावजूद भी उनकी शिक्षा का माहौल बहुत अच्छा रहा क्योंकि उन्हें शिक्षक सदैव अच्छे मिले। जिन्होंने सदैव उन्हें आगे शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। उनके जीवन में हिन्दी की सुप्रसिद्ध लेखिका मन्नू भण्डारी का बड़ा योगदान रहा है। चौथी से ग्याहरवीं कक्षा तक प्रभा को पढ़ने में उनका योगदान रहा। शालेय जीवन में मन्नू भण्डारी और राजेंद्र यादव जी के योगदान से उनके बौद्धिक व्यक्तित्व को सँवारने में मदद हुई। स्कूली जीवन से ही प्रभा ने कविता लिखना प्रारम्भ किया। असहाय बचपन में पक्षियों, पेड़ों से बातें कर व घंटों कल्पनाओं में खोकर कविताएँ लिखती थी। जब प्रभा सातवीं कक्षा में पढ़ती थी तब 'सुप्रभात' में उनकी पहली कविता "दैनिक" छपी।

स्कूली शिक्षा के समापन के बाद प्रभा ने प्रेसीडेंसी कॉलेज में दर्शनशास्त्र पढ़ने की अपनी इच्छा को प्रकट किया तो घरवालों ने इनकी इच्छा को नकार दिया। परंतु प्रभा की दृढ़ इच्छाशक्ति के सामने घरवालों को झुकना पड़ा और उन्होंने प्रेसीडेंसी कॉलेज कलकत्ता में प्रवेश लिया। यह वही कॉलेज था जहाँ सुभाषचन्द्र बोस भी पढ़ा करते थे। उन्हें इस बात का गर्व था कि वह भी उस महान परम्परा की अगली कड़ी में जुड़ गई है।

कॉलेज में दर्शनशास्त्र पढ़ते—पढ़ते प्रभा की समझ विकसित हो रही थी। उनका युगीन परिवेश स्वातंत्र्योत्तर काल में कम्युनिस्टों की राजनीति और देश में साम्यवाद व बाजारवाद प्रभाजी को सोचने पर आतुर कर रहे थे। कॉलेज में दर्शनशास्त्र पढ़ते—पढ़ते प्रभा की समझ विकसित हो रही थी। ऐसे में 1934 में प्रभा जी का एम.ए. फाइनल और लॉ इंटरमीडियेट भी हो गया। प्रभा जिज्ञासु प्रवृति वाली छात्रा थी। किताबे पढ़ना उन्हें शुरू से ही रुचिकर था। उनकी इसी अध्ययन प्रवृति के कारण उनकी दर्शनशास्त्र में रुचि बढ़ी। दर्शनशास्त्र की पुस्तकों में छिपे गूढ रहस्यों ने मन की जिज्ञासा को बहुत बढ़ा दिया और उन्होंने दर्शनशास्त्र का गहन अध्ययन किया। आगे चलकर दर्शनशास्त्र में उन्होनें डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। उनकी पी.एच.डी. का विषय था— ज्यां पॉल सार्त्र का अस्तित्ववाद। सार्त्र के अस्तित्ववाद पर शोध कार्य करते हुए 'सिमान द बोऊवार' की प्रसिद्ध कृति 'द सेकंड सेक्स' से भी काफी प्रभावित हुई।

प्रेसीडेंसी कॉलेज से प्रभा के जीवन में आमूल—चूल परिवर्तन आया। उच्च शिक्षा में अध्ययन हेतु लगातार उन्हें पारिवारिक विरोध सहना पड़ा। उन्हें अपनी एम. ए. की फीस भरने के लिए अपनी सहेली से पैसे उधार लेने पड़े क्योंकि माँ ने पढ़ाई के खर्च हेतु असमर्थता दिखाई। बड़े भैया भी धन्नु और गीता को हर महीने रुपये देते परन्तु प्रभा को पैसे देना नहीं चाहते थे। प्रभा अपनी माँ से कहती है— "माँ ! भैया, गीता को पैसा देने में कभी मना नहीं करते, मैं ही आप सबकी परेशानी का कारण हूँ, ठीक है आज के बाद में आप से पैसा नहीं मांगूगी।"[14]

प्रभा ने शिक्षा प्राप्त करने के साथ—साथ कुछ छोटे—छोटे कोर्स भी किये थे। अमेरिका में लॉस एंजेल्स में लोयंस क्लब के 'यूथ एक्सचेंज प्रोग्राम' के तहत ब्यूटी थैरेपी कोर्स में डिप्लोमा किया। साथ ही स्पीड—रींड़िग का कोर्स भी किया।

महाविद्यालयी जीवन से ही प्रभा ने तय कर लिया था कि "मुझे अम्मा की तरह नहीं होना, भाभी की घुटन भरी जिंदगी को मैं नियति मानकर कदापि स्वीकार नहीं कर सकती। मैं अपने जीवन को आँसूओं में नहीं बहा सकती क्या एक बूंद आँसू में स्त्री का सारा ब्रह्मांड समा जाए? क्यों? किसलिए रोना और केवल रोना आँसूओं का समंदर, आँसूओं का दरिया

और तैरते रहो तुम।"[15] अर्थात कॉलेज जीवन से ही प्रभा के मन में यह गहरी बात घर कर गई थी कि नारी का घुट–घुटकर जीना उसे असहाय बना देता है। साथ ही यह भी अनुभव किया कि मन्नु भंडारी जैसी एक बहुत बड़ी व प्रसिद्ध लेखिका को भी अपने पति के कारण किस तरह अपमानित व रोना पड़ता है। उन्होंने महसूस किया कि गलत पुरुष के हाथों में पड़कर औरत कितनी असहाय व मजबुर हो जाती है। अर्थात नारी व्यथा पर लिखने की प्रेरणा प्रभा को कॉलेज जीवन से ही मिली। कॉलेज जीवन में ही उन्होंने अपनी पहली कविता लिखी– "मैं कोलतार की काली सड़क।" तब से वह फिर लगातार लिखती रही।

2.1.2 कर्म क्षेत्र –

प्रभा जी बचपन से ही कर्मठ व दृढ़ संकल्पी थी। वह अपने जीवन के प्रति सजग व सतर्क थी। प्रभा जी अपनी भूमिका के निर्वाह के लिए तत्पर थी। प्रभा जी एकाकी जीवन जीते हुए जीवन में नई बुलंदियों को छूना चाहती थी। क्योंकि प्रभा जी ने बचपन से अपने परिवार में स्त्री की दयनीय स्थिति व शोषण को देखा था तथा पुरुष मानसिकता को भोगा था। अतः प्रभा जी ने यह संकल्प लिया कि वह अपनी जमीन की तलाश स्वयं करेगी और आत्मनिर्भर बन अपने पैरों पर खड़ी होगी। फलस्वरूप सर्वप्रथम "ब्यूटी थैरेपी" का कोर्स करने हेतु अपने मित्र डॉ सराफ की सहायता से लॉस एजेंल्स (अमरीका) गई। वहाँ से ब्यूटी थैरेपी में डिप्लोमा प्राप्त कर कलकत्ता में "फिगरेट" नामक महिला स्वास्थ्य केंद्र की स्थापना की। कुछ सालों तक इसका संचालन का कार्यभार भी संभाला। प्रभा जी का जीवन मारवाड़ी व्यावसायिक परिवार में गुजरने के कारण उनके रगों में भी व्यावसायिक रक्त धारा प्रवाहित होती थी। अतः उनका मन भी व्यवसाय की ओर प्रेरित हुआ। वह चमड़े से तैयार सामान को विदेशों में निर्यात करती थी। अपनी कड़ी मेहनत व लगन के कारण इस व्यवसाय में उन्होंने अपार सफलता हासिल की। इसी व्यापार के सिलसिले में उन्होंने कई विदेश यात्राएं भी की। 1976 में वे चमड़े से निर्मित सामान को निर्यात करने वाली अपनी कंपनी "न्यूहोराइजन लिमिटेड" की प्रबंध निर्देशक बनी।

138 वर्ष से प्रतिष्ठित और एशिया में सबसे प्राचीन संस्था "कलकत्ता चेम्बर ऑफ कॉमर्स" की अध्यक्षा बनने वाली प्रथम महिला थी– प्रभा खेतान। जिसके तहत उन्होंने नारी से संबंधित कई कार्यक्रमों व कार्यो में सहभागिता दर्ज करायी। कलकत्ता ऑफ चेम्बर्स की अध्यक्षा होने पर उन्होंने अपने क्षेत्र विशेष में विशेष योग्यता व योगदान करने वालों के लिए 'प्रभा खेतान पुरुस्कार' की शुरुआत की। इसके तहत एक लाख रुपये व प्रशस्ति पत्र दिया जाता था।

तत्पश्चात भूतपूर्व निर्वाचन आयुक्त श्री टी० एन० शेषन के साथ "देशभक्त ट्रस्ट रेड क्रॉस जिला सैनिक बोर्ड" की सदस्य भी बनी। इसके अलावा अंतराष्ट्रीय मारवाड़ी सम्मेलन युवा शाखा के साथ मिलकर "सभी के लिए शिक्षा" कार्यक्रम का संचालन किया। जिसके तहत उन्होंने मेधावी व गरीब छात्र–छात्राओं के लिए विशिष्ट सुविधाएं प्रदान कराने का प्रावधान किया। व्यवसाय मे संलग्नता व विदेश भ्रमण के साथ–साथ सामाजिक कार्यो में भी उनकी सहभागिता समान रूप से संचालित होती रही।

अतः स्पष्ट रूप से अपने कर्म क्षेत्र में कर्मठ रहते हुए उन्होंने कई मूकाम हासिल किए और अपनी धरा के दम पर आसमान की बुलंदियों को छुआ।

2.1.3 सृजन के स्त्रोत एवं प्रकिया –

रासायनिक अभिकिया में अभिहित नहीं होते हुए भी जो उसकी गति को बढ़ाते है, उन्हें उत्प्रेरक कहते हे। उत्प्रेरक संभवत दो प्रकार के होते है– (1) बाह्य उद्दीपक (2) आंतरिक उद्दीपक। बाह्य उद्दीपक सदैव प्रेरित करते है तो आंतरिक उद्दीपक मन के भीतर छुपे ज्ञान व भावनाओं को बढ़ाने व उन्हें प्रकट करने का मार्ग प्रशस्त करते है। प्रेरणा सदैव किसी कार्य के सृजन में उत्प्रेरक का कार्य करती है।

प्रभाजी ने भी विविध विविधताओं व स्त्रोत से प्रेरणा ग्रहण कर साहित्य रचना आरंभ की। प्रभा जी को कभी प्रकृति ने तो कभी उनके शिक्षकों, तो कभी उनके अपनों ने व विपरीत परिस्थितियों ने प्रेरित किया तथा कभी–कभी अपने मन की प्रेरणा से प्रेरित होकर साहित्य सृजन किया।

विद्यालयी जीवन से ही उन्हें विख्यात लेखिका मन्नु भंडारी का साथ प्राप्त हुआ। जिनसे वह सात–आठ वर्षो तक शिक्षा के माध्यम से जुड़ी रही। तभी मन्नु भंडारी जी के जीवन व शिक्षा ने प्रभा के मानस में गहरी छाप अंकित कर दी। वह उनके द्वारा प्राप्त मागदर्शन से उन्हीं के पथ पर अग्रसर होना चाहती थी। प्रभाजी ने लिखा है– "मन्नु भंडारी जिन्होंने मुझे चौथी से ग्याहरवीं तक पढ़ाया, साहित्य की दुनिया में जिनके कदमों की छाप पर मैंने चलना चाहा।"[16]

स्कुली शिक्षा के पश्चात महाविद्यालयी जीवन में पदापर्ण करने के बाद वहाँ की परिस्थितियों व वातावरण के साथ–साथ कॉलेज के व्याख्याताओं ने भी उनकी प्रेरणा का मार्ग प्रशस्त किया। प्रभा वैसे ही ज्ञान पिपासु थी और दर्शनशास्त्र के अध्ययन ने प्रभा को अधिक चिंतनशील व जागरूक कर दिया। 'अस्तित्व' जैसे विषय ने तो उन्हें व उनके सोच विचारों को झकझोर कर रख दिया। दर्शनशास्त्र के जटिल से जटिल विषयों का अध्ययन

कर व उन पर चिंतन तथा मनन द्वारा अपनी बौद्धिक क्षमता व विचारों को बुलंद कर दिया।

प्रभा सदैव से विचारशील व मननशील सोच रखते हुई बड़ी हुई। उनकी इसी विचारधारा व अपने साथ हुए असमान व्यवहार के कारण वह सोचने पर आतुर हो उठी। इसी कारण घर के भीतर व बाहर हर जगह उन्हें असमानता परिलक्षित हुई। समाज के हर क्षेत्र में उन्हें स्त्री का स्थान दुसरा या गौण परिलक्षित हुआ। घर के भीतर नारी की स्थिति को देखा तो पाया कि धनवान व समृद्ध परिवारों मे घर की नारी महँगे वस्त्रों व गहनों से लदी एक कठपुतली है व घर की चारदीवारों में कैद व कुंठित जीवन जीने की अभिलाषी है। तो वही दुसरी तरफ समाज के निम्न वर्ग की स्त्रियाँ आर्थिक असमानता से पीड़ित है। इसी कारण जब उन्होंने स्त्री को केन्द्र में रखा तो उनकी नारीवादी विचारधारा प्रबल हुई और उन्होंने साहित्य सृजन शुरू किया। जिसने उनको एक नारीवादी चिंतन के रूप में पहचान दिलाई।

प्रभा को उनके आस–पास के वातावरण व तत्कालीन परिवेश में व्याप्त परिस्थितियों ने भी सदैव प्रेरित किया। प्रभा को राजनीति से कोई लगाव नहीं था। परंतु जिस राजनीतिक परिवेश में उनका जन्म हुआ, उस राजनीतिक दौर का उनके व्यक्तित्व पर विशेष प्रभाव पड़ा। जिसका प्रभाव उनके साहित्य सृजन में परिलक्षित होता है। बंगाल की राजनीतिक उथल–पुथल व साम्यवाद की हवा ने प्रभा के चिंतन को परोक्ष रूप से छुआ और उन्हें मार्क्सवाद व उनके विचारकों को पढ़ने के लिए उद्दीप्त किया। व्यापार के सिलसिले में होने वाली विदेश यात्राओं ने उन्हें भारतीय साहित्य के अध्ययन के साथ–साथ विदेशी साहित्य का अध्ययन करने का भी लाभ मिला। विदेश यात्रा के दौरान प्रभा को वहाँ के समाज व व्यक्तियों के बारे में नजदीक से जानने का मौका मिला तो उन्होंने पाया कि आर्थिक सम्पन्नता व भौतिक सुख प्राप्त करने की अंधाधुंध दौड़ में वह इंसानियत से कोंसो दूर चला गया है। वह व्यक्ति न होकर वस्तु बनकर रह गया है। मानवता व भावनाएँ, आपसी सौहार्द व सम्मान जैसे शब्दों से अनभिज्ञता ने उनके अंतर्मन को विचलित व उद्देलित कर दिया और इस विचलन से उद्देलित साहित्य सृजन ने उनको एक वैश्विक धरातल प्रदान किया।

प्रभा जी के व्यापार से प्राप्त अनुभवों ने भी उन्हें प्रेरित किया। प्रभा ने चमड़े से बनी वस्तुओं का एक छोटा–सा व्यापार शुरू किया जिसे उन्होंने अपनी पुरजोर मेहनत व लगन के द्वारा एक अथाह सागर में परिवर्तित कर दिया। उस मार्ग पर चलते हुए उन्हें कई समस्याओं से अवगत होना पड़ा व कई चुनौतियों को सामना करना पड़ा। परंतु वह

विचलित होकर हारी नहीं बल्कि हर बार वह एक नई सोच व जोश के साथ आगे बड़ी और अपने लक्ष्य को प्राप्त किया। अपने जीवन के इसी उतार–चढ़ाव के अनुभवों के सार को साहित्य में रचित कर एक श्रेष्ठ रचनाकार होने का परिचय दिया। प्रभा के जीवन तथा साहित्यिक जीवन में प्रेरणा का सबसे प्रबल स्त्रोत है उनके अंतर्मन की प्रेरणा। जिसने सदैव उन्हें विचारशील रखा। उसी विचारधारा ने उन्हें चिंतक का रूप दिया। उनके इसी चिंतन ने उन्हें साहित्यकार बनाया। जिसने उन्हें एक नारीवादी लेखिका के रुप में एक अलग पहचान दी। यदि उनकी अंतर्मन की प्रेरणा उन्हें विचारवान चिंतनशील बना जागृत नहीं करती तो वह भी किसी सामान्य महिला की तरह एक धनवान खानदान में गहनों से लदी एक कठपुतली समान होती।

प्रभा की आंतरिक प्रेरणा को जब बाह्य व तत्कालीन परिवेश का सहयोग मिला, तब उन्हें एक विशाल धरातल प्राप्त हुआ जिसमें उन्होंने एक उच्चकोटि के साहित्य का सृजन किया। इन्हीं आत्मप्रेरणा व विश्वास के सहारे प्रभा ने अपना सारा जीवन जिंदा दिली और प्रबल व मजबूत नारी बनकर जिया।

2.1.4 सम्मान एवं पुरुस्कार–

प्रभा खेतान जी का हिन्दी साहित्य जगह में अमूल्य योगदान रहा है। उनका कृतित्व बहु आयामी रहा है। स्वस्थ लेखन और समृद्ध व्यक्तित्व ही उनके जीवन की सफलता का परिचायक है। प्रभा जी नारी जीवन के लिए एक आदर्श है। उन्होंने उपन्यास, चिंतन, अनुवाद, कविताएँ, आत्मकथा आदि विधाओं द्वारा समाज का मार्ग प्रशस्त किया है। साहित्य जगत से लेकर व्यवसाय जगत तक प्रभा जी ने कई महत्वपूर्ण मंजिलें प्राप्त करते हुए अपनी एक अमिट पहचान कायम की और अपने प्रभावी व्यक्तित्व में चार चाँद लगाए है। इस हेतु उनको कई पुरुस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। उनका विवरण निम्नलिखित है–

इंटरनेशनल पुरुस्कार सम्मानः–

1) रत्न शिरोमणि, इंडिया इंटरनेशनल सोसायटी फॉर यूनिटी द्वारा।

2) इन्दिरा गांधी सालीडियोरीटि अवार्ड, इंडियन सालीडियोरीटि काउंसिल द्वारा।

3) टॉप पर्सनालिटी अवार्ड (उद्योग), लायन्स क्लब द्वारा।

4) उद्योग विशारद, उद्योग टेक्नोलोजी फाउंडेशन द्वारा।

भारतीय पुरस्कार सम्मानः–

5) प्रतिभाशाली महिला पुरुस्कार, केंद्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा।

6) बिहारी पुरुस्कार, के. के. बिरला फाउंडेशन द्वारा।

7) भारतीय भाषा परिषद व डॉ. प्रतिभा अग्रवाल नाट्य संस्थान द्वारा।

8) महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार, भारत निर्माण संस्था द्वारा।

2.2 कृतित्वः–

भव्य इमारत की सुंदरता की प्रशंसा सभी करते है, परंतु नींव के पत्थर को सराहने वाले बहुत कम होते है। लेकिन सच यह है कि बिना मजबूत नींव के इमारत खड़ी नहीं रह सकती। कुछ ऐसा ही साहित्य जगत में भी है। जितनी अधिक वेदना, उतनी ही श्रेष्ठ रचना। प्रभाजी का जीवन भी कुछ ऐसा ही है। कॉंटो से भरी राहों पर मुस्कराते हुए बड़ी संजीदगी व हिम्मत के साथ चलते हुए अपने जीवन में नई बुलंदियों को छुआ। उनके इस सफर में भागीदार रहा है उनका साहित्य जगत। जो की बहुआयामी व अनेक विविधताओं से विभूषित है। प्रभाजी के कृतित्व का विवेचन निम्नानुसार हैः–

2.2.1 उपन्यासः–

2.2.1.1 आओं पेपे घर चलेः–

वर्ष 1990 में प्रकाशित यह प्रभाजी का पहला उपन्यास है तथा यह उपन्यास विदेशी परिवेश पर आधारित है। यह प्रभाजी के अमेरिका की यात्रा के समय प्राप्त अनुभवों के कथ्य पर आधारित है। इस उपन्यास में आइलिन के माध्यम से विदेशी औरत के जीवन के भयानक यथार्थ को उजागर किया है। डॉ. उषा कीर्ति राणावत लिखती है– "विदेशी पृष्ठ भूमि पर लिखा यह उपन्यास वैश्विक स्तर पर स्त्री जीवन की भयावह सच को उजागर करता है। देश–विदेश के बीच साझी स्त्री की एक साझी मानसिकता और समाज में उनकी स्थिति का द्योतक है और अंत तक आइलिन के इस कथन के सत्य को निभाता है कि दुनिया में ऐसा कोई कोंना बताओं जहाँ औरत के आंसू नहीं गिरे।"[17] इस उपन्यास में विदेशी औरत की स्थिति का वहाँ की जीवन शैली के साथ वर्णन किया है। इसमें औरत की संवेदना, अकेलेपन व असहाय रूप को बड़ी संवेदनशीलता के साथ उजागर किया है। इसी संदर्भ में गोपालराय के शब्द– "प्रभा खेतान का 'आओं पे पे घर चले' अमरीकी औरत के जीवन के भयानक सच को प्रस्तुत करने वाला हिन्दी का पहला उपन्यास है। यह उपन्यास विश्व संदर्भ में नारी की नियति को पहचानने और उद्घाटित करने का यह उल्लेखनीय सर्जनात्मक प्रयास है। इसके साथ यह एक संवेदनशील भारतीय लेखिका की आँखो से देखी हुई अमरीकी जीवन की तस्वीर है।"[18]

2.2.1.2 तालाबंदी –

वर्ष 1991 में प्रकाशित यह प्रभा जी का दूसरा उपन्यास है। इस उपन्यास में श्यामबाबू के द्वारा व्यवसाय जगत में व्याप्त उतार–चढ़ाव के द्वारा उत्पन्न समस्याओं को उजागर किया गया है। इसमें रूढ़ मारवाड़ी समाज व परिवार के मध्य पनपते रिश्तों के यथार्थ, मालिक व मजदूर के बीच संघर्ष, मजदूरों की संवेदनाओं, मजदुर यूनियन के संघर्ष, आर्थिक सत्ता के लोभ आदि भावों को यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में श्यामबाबू के माध्यम से व्यवसाय जगत की व्यस्तता तथा अर्थ अर्जन की चाह के कारण परिवार के अलगाव व एकाकीपन को प्रकट किया है। इसी संदर्भ में पात्र हरिनारायण चट्टोपाध्याय कहते है– "अर्थ की व्यवस्था सारे मानवीय संबंधों को घुन की तरह खा जाती है।"[19]

इस उपन्यास में मारवाड़ी परिवार की समस्याओं को उजागर करते हुए मालिक व मजदुर के मध्य संघर्ष का चित्रण कर दोनों के मध्य साम्यता स्थापित कर समाजवादी विचारधारा व आदर्श को स्थापित करने का उद्देश्य स्पष्ट किया है।

2.2.1.3 अग्निसंभवाः–

मासिक पत्रिका हंस में मार्च 1992 से मई 1992 में प्रकाशित यह एक लघु उपन्यास है। इस उपन्यास का समग्र कथानक तीन दिनों के अन्दर समादृत है। प्रस्तुत उपन्यास के कथानक में चीनी महिला आइवी के जीवन के संघर्ष, चीनी क्रांति, मार्क्सवादी विचारधारा आदि दृष्टिकोणों को उजागर किया है। प्रस्तुत उपन्यास में आइवी के टेकसी ड्राइवर से ब्रांच मैनेजर तक संघर्षमय यात्रा का वर्णन कठोर परिश्रम, आत्मबल के द्वारा लक्ष्य को प्राप्त करने का उद्देश्य निरूपित किया है। इसी के माध्यम से प्रभाजी कहती है– "स्त्री में एक दैवी शक्ति है, यदि यह कुछ करने की ठान ले तो मारवाड़ी पारम्परिक घर की स्त्री हो या चीन की मामूली किसान की बेटी सफलता के परचम लहरा सकती है।"[20]

2.2.1.4 एड्स –

'आज' समाचार पत्र, कलकत्ता (पुजा वार्षिकांक) में 1993 में प्रकाशित यह एक लघु उपन्यास है। इसमें वैश्विक स्तर पर व्याप्त भयावह बीमारी 'एड्स' से पीड़ित इंसान की मनः स्थिति का वर्णन किया गया है। साथ ही साथ प्रभाजी के विदेश दौर के समय प्राप्त अनुभव, पति–पत्नी के संबंधों का यथार्थ, पारिवारिक विघटन व्यापार में संलग्न नारी की समस्याओं आदि से संबंधित ताना–बाना इस उपन्यास का कथ्य है। प्रभाजी ने इस कथानक के तानेबाने को उपन्यासिका कहा है परन्तु इसे पढ़ने के पश्चात इसे वृहद कहानी कहना

ज्यादा सार्थक प्रतीत होता है। डॉ.उषाकीर्ति राणावत लिखती है कि– "हे तो यह कहानी लेकिन लेखिका ने उसे उपन्यास बताया है।"[21]

2.2.1.5 छिन्नमस्ता –

वर्ष 1993 में प्रकाशित यह प्रभाजी का पाँचवा उपन्यास है। इस उपन्यास में 'प्रिया' नाम की लड़की के जन्म से लेकर विवाह तक तथा विवाह के पश्चात व्यवसाय जगत के भोगे हुए उत्पीड़न का यथार्थ चित्रण है। अर्थात यह एक समाज व परिवार संस्था में नारी के उत्पीड़न, शोषण व संघर्ष का सशक्त प्रमाण है। प्रस्तुत कथानक प्रभाजी का स्वयं अनुभूत यथार्थ है। इस कारण प्रारम्भ में इसे प्रभाजी की आत्मकथा समझा जा रहा था। परन्तु उपन्यास की पात्र प्रिया के विवाह से पूर्व का कथानक स्वयं प्रभा जी का भोगा हुआ यथार्थ है। इसी संदर्भ में डॉ. उषाकीर्ति राणावत लिखती है कि– "छिन्नमस्ता जिसे प्रारम्भ में उनकी आत्मकथा समझ लिया गया। लेकिन यह पूरी कहानी उनकी अपनी आत्मकथा नहीं है विवाह पूर्व तक की घटनाएँ उनकी अपनी भोगी व्यथा कथा है।"[22]

2.2.1.6 अपने–अपने चेहरे –

वर्ष 1994 में प्रकाशित यह प्रभा जी का छट्ठा उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास में भी प्रभा जी की आत्मकथा का अंश निर्मित है। इसमें स्त्री से जुड़े दूसरे पक्ष को उजागर करते हुए अपना अस्तित्व व जमीन की आकांक्षी नारी के यथार्थ की कहानी है। प्रस्तुत उपन्यास में प्रभा जी ने विवाह, बच्चे, पति आदि से परे औरत के अस्तित्व को स्वीकारते हुए नारी के जीवन व उसके अस्तित्व से जुड़े प्रश्नों व यथार्थ को संवेदनशील संजीदगी के साथ उभारा है। इसी संदर्भ में प्रभाजी कहती है– "भारतीय सामंती पुरुष की नजरों में औरत के तीन रूप है– पत्नी, रखैल और वैश्या। शायद वे स्वयं भी इसी रूप में स्त्री को देखती हो, पता नहीं या फिर उनकी चेतना का धरातल रूपांतरित हो रहा है। मगर चौथा रूप एक स्वतंत्र स्त्री का भी है जो पारस्परिकता का संबंध चाहती है, जो अपनी समूची मानवीय गरिमा के साथ पुरुष के साथ मानवीय संवाद चाहती है।"[23]

2.2.1.7 पीली आँधी –

वर्ष 1996 में प्रकाशित यह प्रभाजी का सातवाँ उपन्यास है। इस उपन्यास में मारवाड़ी समाज के परिवेश उसके उत्पीड़न व संघर्ष का वर्णन किया है। साथ ही मारवाड़ी परिवार की तीन पीढ़ियों के उजड़ने व बसने तथा अलगाव व विखराव की कथा है। यह उपन्यास मारवाड़ी समाज के संघर्ष का महाकाव्य माना जाता है। इसकी उत्कृष्टता के संबंध में जितेन्द्र धीरे लिखते है– "आओ पे पे घर चले उपन्यास से हिन्दी के पाठकों, बुद्धि

जीवियों और आलोचकों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने वाली डॉ प्रभा खेतान का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'पीली आँधी है।"[24]

2.2.1.8 स्त्री–पक्ष –

यह 'जनसत्ता सबरंग' पत्रिका कलकत्ता से वर्ष 14 फरवरी 1999 से 1 अगस्त 1999 तक प्रकाशित आठवाँ एक लघु उपन्यास है। यह उपन्यास वृंदा के जीवन की गाथा है। प्रस्तुत उपन्यास में मध्यवर्गीय परिवार में पली–बढ़ी लड़की के यौवनवस्था से प्रारम्भ होकर आत्मनिर्भर बनने के सफर को बड़ी कुशलता के साथ उजागर किया है। साथ ही में नारी के जीवन में आने वाले परिवर्तन से उत्पन्न समस्याओं को उजागर किया है। इस उपन्यास में इस बात को स्पष्ट किया है कि आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त होने पर नारी में भी पुरुष समतुल्य अवगुण उत्पन्न हो जाते है।

2.2.2 कविता संग्रह –

प्रभाजी के साहित्य पर उनके जीवन की परिस्थितियों व परिवेश का प्रभाव सदैव रहा परन्तु उनके विचार व भाव रूपी मूल संवेदनाएँ किसी भी परिवेश की झकड़ में नहीं रही। इनका प्रथम काव्य संग्रह वर्ष 1981 में प्रकाशित "अपरिचित उजाले" में कुल 64 कविताएँ संकलित है। मेरे और तुम्हारे बीच, कैसा अजीब यह अकेलापन, कुछ शब्दों को उधार ले, मिले हुए दर्दों की, काफी हाउस का कोंना आदि भिन्न भिन्न शीर्षकों से संकलित कविताओं में एक अनूठे भाव जगत के दर्शन होते है। कुछ शब्दों को उधार ले प्रेम के कई भावों को उजागर करता है।

"मेरे एक नहीं, तीन मन
एक कविता लिखता है,
एक प्यार करता है,
और एक केवल
अपने लिए जीता है।"[25]

इनका दुसरा काव्य–संग्रह वर्ष 1982 में प्रकाशित "सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मैं" में 61 कविताएँ संकलित है। अंकुर, चाह, एक उदास सुबह, ओ मेरे आत्मन, मुक्ति कहाँ है, अंधेरा खड़ा है, इंतजार, संभावना आदि शीर्षकों से संकलित कविताओं में समाज और व्यक्ति के बीच रिश्तों को चित्रित किया है और उन्होंने प्रेम विषय के द्वारा जीवन के यथार्थ को उद्घाटित किया है।

"प्रेम करने की शक्ति

क्या अपने आप में काफी नहीं
यानी आज भी जब तुम्हें चाह पाती हूँ
लगता है कि मैं जिंदा हूँ।"[26]

इनके तीसरे काव्यसंग्रह वर्ष 1985 में प्रकाशित "एक और आकाश की खोज मैं" में कुल 52 कविताओं का संकलन है। तुम्हारी प्रेम भरी आँखे, तूफानों से, जिंदगी फैली हुई है, कोई एक फूल खिला बगीचे में, मौत और जिंदगी के बीच, आखिर कब तक आदि शीर्षकों से संबंधित कविताओं के माध्यम से कवयित्री ने 'गागर में सागर' भर दिया है।

मैंने नाप लिए है हजारों आकाश
फिर भी, एक और आकाश खोज ने, चल पड़ी हूँ ....?[27]

इनके चौथे काव्य संग्रह वर्ष 1986 में प्रकाशित "कृष्णधर्मा मैं" एक दीर्घ कविता के माध्यम से अवतारी कृष्ण के द्वारा अकर्मण्य हीन जीवन को त्याग कर्मठ रहने की प्रेरणा दी है। इसकी भूमिका में लिखती है– "इस कविता का मैंने चुनाव नहीं किया बल्कि यों कहिए की इस कविता ने मुझको खोज निकाला। यह कविता खुद–ब–खुद टुकड़े–टुकड़े में कलम के सहारे कागज पर उतरती चली गई।"[28]

इनके पाँचवे काव्य–संग्रह वर्ष 1987 में प्रकाशित "हुस्नबानों और अन्य कविताएँ" में कुल 29 कविताएँ संकलित है। भीड़ के बीच, कविता की खोज में, सड़क कथा, कहाँ होंगे बच्चे, दो लड़कियां, कविता की सामूहिक हत्या, शब्दों की हार आदि शीर्षकों से संबंधित कविताओं के माध्यम से लेखिका ने समकालीन परिवेश में व्याप्त समस्याओं को उजागर किया है।

अब्बा।
अबकी तुम वीडियो मत लाना
अम्मा की साड़ियाँ मत लाना
मत लाना यह सब
बदल देना अपने बक्से को
एक छोटे से घर में ....।[29]

डॉ.प्रभा खेतान का अंतिम काव्य संग्रह वर्ष 1988 में प्रकाशित "अहल्या" के माध्यम से प्रभाजी ने सम्पूर्ण नारी जाति की मुक्ति का संदेश दिया है–

लौट आओ, अहल्या
मृत्यु के बाद भी जागो तुम।
गूँजता है आज भी

तुम्हारा ही दर्द

मेरे हृदय में।[30]

2.2.3 चिंतनपरक साहित्य –

2.2.3.1 सार्त्र का अस्तित्ववाद –

वर्ष 1984 में प्रकाशित यह प्रभा खेतान का पहल चिंतन ग्रंथ है। इस ग्रंथ में प्रभा जी ने प्रसिद्ध दार्शनिकों कामू, किकेगार्ड, यस्की, फेडरिक नित्शे, मार्टिन, हेडेगर आदि दार्शनिकों के विचारों के साथ सार्त्र के चिंतन की तुलना करते हुए दर्शन और साहित्य के मध्य सहसम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया गया है। इसी पक्ष हेतु प्रभा जी लिखती है– "इस पुस्तक में मैंने विद्वानों के उठाए हुए मुद्दो का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। जिनका अध्ययन – मनन करके सार्त्र ने उन्हें अपने दर्शन में उतारा, उसे आगे बढ़ाया या उसका विरोध किया है, उन्हें नकार दिया है।"[31]

2.2.3.2 शब्दों का मसीहा–सार्त्र –

वर्ष 1985 में प्रकाशित यह प्रभा खेतान का दुसरा चिंतन ग्रंथ है। इस उपन्यास में सार्त्र के सम्पूर्ण जीवन में भोगी गई पीड़ा, त्रासदी व संघर्षो का वर्णन किया गया है। साथ ही उनकी समग्र साहित्यिक कृतियों को रेखांकित करते हुए उनकी विवेचना की गई है। स्पष्टतः इस उपन्यास में सार्त्र के समग्र जीवन पर व्यापक प्रकाश डालते हुए उनके सिद्धांतों व चिंतन का विश्लेषण किया गया है।

2.2.3.3 अल्बेयर कामूः वह पहला आदमीः–

वर्ष 1993 में प्रकाशित यह प्रभा जी का तीसरा चिंतन ग्रंथ है। यह प्रसिद्ध चिंतनकार अल्बेयर कामू के व्यक्तित्व व जीवन से परिचय कराती है। यह पुस्तक कुल 15 अध्यायों में विभक्त है–

(i) जटिल होते संबंध

(ii) घर में किताब का सवाल

(iii) बीमार मेधावी

(iv) अशांत वैवाहिक संबंध

(v) शिक्षा एवं विचारभूमि

(vi) जगत साझे की जिन्दगी

(vii) जुझारू तेवर और राजनीति

(viii) यथार्थ से संवाद की स्थापना

(i) सृजन है या फिर नहीं है

(ii) संघर्षों से गुजरते हुए

(iii) गालीमार हाउस के लेखक

(iv) युद्ध निरस्त्रीकरण और कामू

(v) व्यक्ति की सत्ता के लेखक

(vi) विद्रोह का स्वर और आदमी की स्वतंत्रता

(vii) मानवीय चेतना का चितेरा

प्रस्तुत अध्यायों के माध्यम से प्रभाजी ने अल्बेयर कामू के जीवन के संघर्षो व चिंतन को संजीदगी के साथ विश्लेषित किया है।

2.2.3.4 उपनिवेश में स्त्रीः मुक्ति—कामना की दस वार्ताएँः—

वर्ष 2003 में प्रकाशित चिंतनपरक ग्रंथ उपनिवेश में स्त्री प्रभा जी के विचारात्मक लेखों का संग्रह है। इसमें स्त्री की मुक्ति की कामना से संबंधित दस निबंध संकलित है जिन्हें वार्ता नाम से संबोधित किया गया है। यह ग्रंथ जीवन के दो पक्षों से संबंधित है— स्त्री—पक्ष और उपनिवेश। इस पुस्तक में नारी से संबंधित विषय नारीवाद तथा स्त्री के जीवन से जुड़े यथार्थ पक्षों को सामने लाकर उन पर गहन अध्ययन व चिंतन को प्रस्तुत किया गया है—

(i) आधी दुनिया का श्रम और भूमंडलीकरण

(ii) स्त्री लेखन की जगह और आलोचना के भीष्म पितामह ?

(iii) संस्कृतिवाद के छल कपट और स्त्री का मानस

(iii) नारीवादी ज्ञान मीमांसा के उद्देश्य

(iv) बौद्धिक सरोकार, राष्ट्रवाद और नारीवाद की जमीन

(v) स्त्री का सारतत्व

(vi) क्रांति चेतना के नारी रूप

(vii) सामाजिक सरोकार या आक्रामकता की खोज

(i) यौनिकता की राजनीति

(ii) भाषा और विमर्श का संजाल

2.2.3.5 बाजार के बीचः बाजार के खिलाफ भूमंडलीकरण और स्त्री के प्रश्न —

वर्ष 2004 में प्रकाशित इस ग्रंथ के माध्यम से प्रभाजी ने भूमंडलीकरण व उससे संबंधित आर्थिक पहलुओं का स्त्री के जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों की विस्तृत रूप से विवेचना की गई है। प्रभा जी ने भूमंडलीकरण के विश्लेषण के द्वारा शास्त्रीय व आधुनिक

नजरिये को उभारा है तथा उन्होंने देश की अर्थव्यवस्था व नारी के जीवन पर भूमंडलीकरण के प्रभाव को छः खंड़ों में विभक्त किया है –

(i) एक प्रश्नवाची समय

(ii) श्रम के स्त्रीकरण की हकीकत

(iii) घुमड़ते हुए बादल

(iv) यौन कर्म की कीमत

(v) भोग और भोगा जाना

(vi) बहुलतावादी रणनीति

2.2.3.6 भूमंडलीकरणः ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र –

यह चिंतनपरक ग्रंथ 2007 में प्रकाशित हुआ है। इस चिंतन ग्रंथ द्वारा प्रभाजी ने संस्कृति व राष्ट्र से जुड़े यथार्थ से साक्षात्कार कराया है। इसमें भूमंडलीकरण से अवगत कराते हुए उसके देश पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण किया है। उन्होंने नारी के जीवन व उससे संबंधित समस्याओं को उजागर कर स्त्री विमर्श के द्वार खोल दिये है। भूमंडलीकरण से संबंधित उन्होंने 10 बिन्दुओं के माध्यम से अपने विचार अभिव्यक्त किये है–

(i) भूमंडलीकरणः धार्मिक समाज, पूंजीवादी समाज और राष्ट्र

(ii) सांस्कृतिक भूमंडलीकरण के द्वंद और राष्ट्र राज्य

(iii) ब्रांडः नव साम्राज्यवाद का नया हथियार

(iv) पूंजीवादः महामंदी से बाजारवाद तक

(v) अमेरिका और साम्राज्य

(vi) अमेरिका का वैश्विक अश्वमेघ

(vii) भूमंडलीकरण और स्त्रीश्रम –1

(viii) साम्राज्य और जनतंत्र

(i) भूमंडलीकरण और स्त्रीश्रम –2

(ii) भूमंडलीकरण मीडिया और स्त्री

2.2.4 अनुवाद –

2.2.4.1 सांकलों में कैद क्षितिज –

वर्ष 1988 में प्रकाशित यह प्रभाजी की अनुवादित पुस्तक है। जिसके अन्तर्गत उन्होंने अठारह अफ्रीकी कविताओं का हिन्दी में अनुवाद किया है। "इन कविताओं में अफ्रीकी जीवन की भयावहता, वर्गभेद, आर्थिक स्थिति, उनका शोषण चित्रित है। इसी के

साथ इन कविताओं में कारावास के भयंकर जीवन, मंडेला की प्रशंसा, शहीदों का स्मरण अन्तर्निहित है।"[32]

2.2.4.2 स्त्री उपेक्षिता –

वर्ष 1991 में प्रभा जी ने 'सिमोन द बोउवार' की कृति 'द सेकंड सेक्स' का अनुवाद 'स्त्री–उपेक्षिता' के नाम से किया। यह स्त्री–विमर्श का चिंतनपरक दस्तावेज है। स्त्रीवादी आंदोलन व नारी के लिए यह पुस्तक धर्मग्रंथ रूपी एक अनोखे वरदान स्वरूप है। यह पुस्तक दो खंड़ों में विभाजित है प्रथम तथ्य और मिथ और द्वितीय आज की स्त्री। प्रभा जी को इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा राजेन्द्र यादव जी से मिली है। लेखिका कहती है कि– "यादव जी ने मुझसे कहा सिमोन द बोउवार का सेकेंड सेक्स पढ़कर देखो सुधर जाओगी और मुझसे नफरत करना बंद कर दोगी।"[33]

2.2.5 संपादन –

2.2.5.1 एक और पहचान –

वर्ष 1986 में 'एक और पहचान' नाम से संपादित काव्य कृति में छः कवियों की रचनाओं का समावेश है। इसमें कवियों की संवेदनाओं को प्रकट करते हुए उनके कवि कर्म के उद्देश्य को स्पष्ट किया है। डॉ परवीन मलिक– "कविता प्रत्येक कवि के सत्य में ही एक निम्न पहचान बनाती है। जीवन में जिसको जो मिलता है उसका प्रस्तुतीकरण वह अपने ढंग से अपनी चेतना के आधार पर करता है। इसी चेतना की विशिष्टता को परखने के लिए प्रभा खेतान ने इन कवियों को पाठकों की संवेदनशील अदालत में लाकर खड़ा कर दिया है।"[34]

2.2.5.2 हंस पत्रिका के महिला विशेषांक का सम्पादन –

इसका सम्पादन इन्होंने मार्च 2001 में किया। जिसके अन्तर्गत उन्होंने भूमंडलीकरण के दौर में नारी से संबंधित विभिन्न समीकरणों को उजागर किया है। जिसमें यह स्पष्ट किया है कि नारी कितनी प्रतिशत व्यक्ति बनी है और कितने प्रतिशत वस्तु।

2.2.6 आत्मकथा

2.2.6.1 अन्या से अनन्या –

यह प्रभाजी द्वारा लिखित अंतिम पुस्तक है। इनकी आत्मकथा 'हंस' पत्रिका में धारावाहिक के रूप में प्रस्तुत हुई है। इस आत्मकथा में उपेक्षित बचपन, विकट व विरोधी परिवेश में शिक्षा, डॉ सरार्फ के साथ संबंध, विदेश यात्रा से प्राप्त अनुभव व विदेशी नारी व संस्कृति का चित्रण किया है। जिसमें उन्होंने अपने जीवन के यथार्थ को उद्घाटित करते

हुए अपने व्यक्तित्व को उभारा है। इस आत्मकथा के संदर्भ में राजेन्द्र यादव के शब्द– "जिस रचना ने उसे साहित्यिक बहसों के केन्द्र में रख दिया वह है उसकी आत्मकथा "अन्या से अनन्या"। वस्तुतः वह आत्मकथा नहीं, डॉ सरार्फ के साथ अपने संबंधों को लेकर विस्तार से दिया गया ट्रेजिक प्रेम–प्रसंग है।"[35]

2.2.7 लेख –

(1) स्त्री विमर्श पर महत्वपूर्ण लेख पितृ सत्ता के नये रूप2003

(2) सोफिया टोलस्टोय की डायरी– हंस पत्रिका 2008

मृत्यु –

हिन्दी की महान साहित्यकार, उद्यमी व समाज सेविका डॉ प्रभा खेतान का स्वर्गवास 20 सितम्बर 2008 को हुआ। 18 सितम्बर 2008 को सीने में तकलीफ होने पर कलकता के आमरी अस्पताल में भर्ती कराया गया एवं उसी दिन आपातकालीन परिस्थितियों में उनकी बाईपास सर्जरी हुई। लेकिन सर्जरी के बाद अचानक तबीयत बिगड़ जाने से उन्होंने देर रात अंतिम सांस ली एवं हम सबसे विदा ले ली। सरस्वती और लक्ष्मी दोनों की अधिष्ठात्री डॉ. प्रभा खेतान सशरीर भले ही हमारे बीच न हो, अपने सृजन के कारण वे सदैव स्मरणीय रहेगी। उनका ही कहना था– "तुम मेरी कृतियों में मुझे खोजने का प्रयास करो तो तुम्हारे ही मेज पर कही किताबों के बीच, किन्हीं लाईनों में, किन्ही अक्षरों के भीतर से मेरा व्यक्तित्व झाँक रहा होगा।"[36] सत्य ही है कि उनकी अपनी रचनाओं के माध्यम से उनका व्यक्तित्व सदा ही जीवित रहेगा। क्योंकि उनकी रचनाओं में उनके द्वारा भोगे गये यथार्थ का जीवंत चित्रण है।

कलकता के साहित्यकारों व समाजसेवियों ने उनकी मृत्यु पर शोक सभा आयोजित कर श्रुद्धासुमन अर्पित किये। साहित्य प्रेमी डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र ने उनको स्मरण करते हुए कहाँ– "प्रभा जी नारी अस्मिता के प्रति समर्पित थी। उनका जीवन यथार्थ से ओतप्रोत था। इसलिए लेखन में अनुभव का महत्वपूर्ण रोल रहा।"[37]

लेखिका कला जोशी ने संदेश में कहा की, "यह मसीहा आज हमारे बीच नहीं है, किन्तु इतना अवश्य सत्य है जब–जब स्त्री के आँसू लेखनी में ढलेंगे, स्त्री विमर्श की बात होगी। प्रभा खेतान का वहाँ जरूर जिक्र होगा।"[38]

समकालीन महिला लेखिकाओं के बीच गहरी संलग्नता तथा जागरूक सोच व सृजनशोभिता के साथ बिदा लेने वाली प्रभाजी की स्मृतियाँ सदैव प्रेरणा देती रहेगी। अपनी कलम के द्वारा नारी स्वाधिनता की लड़ाई लड़ने वाली सम्बल लेखिका के रूप में सदैव वह

हमारे बीच मौजुद रहेगी। क्योंकि एक सजग साहित्यकार कभी मरता नहीं वह अपनी रचना व साहित्य के माध्यम से सदैव जीवित रहता है।

निष्कर्ष –

बीसवी शताब्दी के अंतिम दशकों में हिन्दी साहित्यकारों की सूची में अहम नाम है– प्रभा खेतान। प्रभा जी तत्कालीन सामाजिक परिवेश व धरती से एकाकार हुई साहित्यकार है। अपनी जड़ों से जुड़े रहने के कारण उनकी जीवन यात्रा साधारण होते हुए भी असाधारण है। संकल्प और संघर्ष प्रभा जी के जीवन के दो मूलतंत्र रहे है। अपना अनुभव जगत व भोगा हुआ अतीत ही उनका समग्र साहित्य संसार है। प्रभा खेतान का संबल व्यक्तित्व व स्वस्थ लेखन ही उनके जीवन की सफलता का परिचायक है। सहमे हुए बचपन से शुरू हुए मानव के यथार्थ जीवन की पीड़ा और दर्द को प्रभा जी ने गहराई से व्यक्त किया है। जीवन भर अनवरत संघर्ष करके नारी चेतना को एक सशक्त स्त्रीरूप मे उभारकर स्त्री–शक्ति का परिचय दिया है। स्त्री अगर ठान ले तो कुछ भी कर सकती है यह बात उन्होंने शून्य से साम्राज्य खड़ा करके दुनिया के आगे सिद्ध की। प्रभा जी ने अपने मजबूत इरादों व महत्वाकांक्षा के साथ अपनी राह की हर बाधा का सामना साहस के साथ करते हुए अपनी सफलता का मार्ग प्रशस्त किया।

नारीवादी प्रभा खेतान एक सफल साहित्यकार के साथ–साथ समाजसेविका भी है। जिन्होंने औरतों व बच्चों के लिए अनेक संस्थाओं के माध्यम से सहायता प्रदान करवाई है। प्रभा जी ने अपनी कड़ी मेहनत, अडिग लगन और महत्वाकांक्षा के साथ सफलता की बुंलदियों तक पहुँच कर सबके लिए एक मिसाल कायम की है। आप एक सफल व्यवसायी, स्त्री विमर्श की प्रख्यात उपन्यासकार, कुशल गद्य शिल्पी, संवेदनशील कवयित्री, श्रेष्ठ अनुवादक व चिंतक के रूप में जानी जाती है।

अन्तः यह कहा जा सकता है कि प्रभा खेतान का जीवन सच्चे अर्थों में फर्श से अर्श तक का सफर रहा है।

संदर्भ सूची –

1. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 31
2. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 39
3. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ राणावत, पृष्ठ – 15
4. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ राणावत, पृष्ठ – 15
5. अन्या से अनन्या, हंस, मार्च 2006

6. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 25
7. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 16
8. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, हंस, मार्च 2006, पृष्ठ – 35
9. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 21
10. वही, पृष्ठ – 17
11. वही, पृष्ठ – 33
12. वही, पृष्ठ – 31
13. वही, पृष्ठ – 17
14. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, हंस, मई 2006, पृष्ठ – 56
15. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, हंस, मार्च 2006, पृष्ठ – 35
16. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 82
17. हिन्दी उपन्यास का इतिहास, गोपाल राय, पृष्ठ सं. – 446
18. प्रभा खेतान के उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन, प्रेम रंजन भारती, पृष्ठ सं.–16
19. प्रभा खेतान के उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन, प्रेम रंजन भारती, पृष्ठ सं.–17
20. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ. उषाकीर्ति राणावत, पृष्ठ सं.–43
21. वहीं, पृष्ठ सं.–47
22. वहीं, पृष्ठ सं.–42
23. हंस (पत्रिका), अगस्त 1989 – पृष्ठ सं.–84
24. नारी अस्मिता की मुखर आवाज, डॉ. प्रभा खेतान, अक्षर पर्व–2007, जितेंद्र धीर, पृष्ठ सं.–24
25. अपरिचित उजालें– कुछ शब्दों का उधार ले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ सं. – 80
26. सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मैं, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ संख्या – 20
27. एक और आकाश की खोज में, डॉ प्रभा खेतान
28. कृष्णधर्मा मैं, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ संख्या – 4
29. हुस्नाबानों और अन्य कविताएँ, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ संख्या – 14
30. अहल्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ संख्या – 18
31. सार्त्र का अस्तित्ववाद, डॉ. प्रभा खेतान, पृष्ठ सं.–19
32. प्रभा खेतान के साहित्य में नारी विमर्श, डॉ. कामिनी तिवारी, पृष्ठ सं.– 36
33. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ. उषाकीर्ति – पृष्ठ सं.– 175
34. हंस पत्रिका, नई दिल्ली, नवम्बर 2008, राजेंद्र यादव, पृष्ठ सं. – 7

35. वहीं, पृष्ठ सं.–4

36. प्रभा खेतान और उनका साहित्य, परवीन मालिक, पृष्ठ – 21

37. हंस, नवम्बर 2008, पृष्ठ – 16

38. वाणी, नवम्बर 2008, पृष्ठ – 65

तृतीय अध्याय

समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान

तृतीय अध्याय

समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान

प्रस्तावना

3.1 समकालीन महिला उपन्यासकार

3.2 समकालीन महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान

3.3 महिला उपन्यास लेखन में प्रभा खेतान का वैशिष्ट्य

निष्कर्ष

समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान

प्रस्तावना –

महिला लेखिका का रचनात्मक लेखन का आरम्भ उन्नीसवीं सदी के दशक में हुआ। इन साहित्यकारों ने आत्मविश्वास व साहस के द्वारा अपनी लेखन कला से साहित्य जगत में क्रांति का बिगुल बजा दिया। साठोत्तर काल में महिला लेखिकाओं की बाढ़–सी आ गई है। एकाएक महिला लेखिकाओं ने अलग–अलग विषयों व समस्याओं पर अपनी लेखनी को उतारा है। सभी लेखिकाओं ने वर्तमान समाज में व्याप्त भयंकर विभीषिकाएँ व ज्वलंत घटनाओं पर अपने विचार समाज के सामने रखे है। काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, एकांकी, आदि विधाओं के माध्यम से नारी जीवन की समस्या और उसके मन में उठने वाले प्रश्नों के द्वारा नारी मुक्ति के विचार को सम्पूर्ण महिला जगत में फैला दिया है। उपन्यास क्षेत्र को महिला उपन्यासकारों ने अपने जीवन के यथार्थ अनुभवों और सूक्ष्म दृष्टि व विचारों से परिपुष्ठ किया है। अतः कई महिला लेखिकाएँ नवीन समाज के निर्माण व उत्थान हेतु साहित्य की ओर अग्रसर हुई है।

3.1 समकालीन महिला उपन्यासकार –

आधुनिक हिन्दी साहित्य के विकास में महिला लेखिकाओं का योगदान अद्वितीय है। उन्नीसवीं शताब्दी से महिला लेखन की नींव मजबूत होने लगी। जो धीरे–धीरे विकसित होकर सफलता के चरम शिखर पर पहुँच गई। आज हिन्दी साहित्य की सभी विधाओं उपन्यास, कहानी, नाटक, यात्रावृत, संस्मरण, रेखाचित्र, समीक्षा, अनुवाद आदि में महिला लेखिकाओं ने अपना अतुल्य योगदान दिया है। समकालीन महिला साहित्यकारों में कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, चित्रा मुद्गल, मंजुल भगत, उषा देवी, ममता कालिया, सूर्यबाला, शिवानी, मृणाल पांडे, मालती जोशी, निरुप्रभा सेवती, कृष्णा अग्निहोत्री आदि महत्वपूर्ण है। सभी समकालीन महिला साहित्यकार ने विभिन्न विधाओं में विविध विषयों पर रचनात्मक लेखन कर हिन्दी साहित्य के विकास में योगदान दिया है।

समकालीन हिन्दी साहित्य में कई महिला साहित्यकार के द्वारा भारतीय विचारधारा को परिवर्तित करने तथा सामाजिक, पारिवारिक व आर्थिक स्तर पर महिला जागृति व उनके विकास को समाजिक हित के संदर्भ से जोड़ने का प्रयास किया गया है। सर्वप्रथम इस बदलाव को समाजिक संदर्भ में प्रस्तुत करने का बीड़ा प्रथम महिला उपन्यासकार के रूप में विख्यात उषा देवी मित्रा ने उठाया है। डॉ. शैल रस्तोगी के अनुसार– "श्रीमति उषा देवी मित्रा का उपन्यास क्षेत्र में आगमन ठीक वैसी ही घटना है जैसी प्रेमचन्द्र के आगमन से प्रारम्भिक युग के बाद हिन्दी उपन्यासों में हुई थी।"[1] पहली बार उषा देवी मित्रा ने स्त्री

की करुणाकथा को प्रस्तुत किया है। 'वचन का मोल, पिया, जीवन की मुस्कान, पथचारी, साहनी आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास है जो पूर्णतः नारी की दशा पर ही केन्द्रित है।

समकालीन हिन्दी साहित्य की महिला उपन्यासकारों में कृष्णा सोबती सर्वाधिक चर्चित, विवादास्पद व्यक्तित्व व प्रतिभा सम्पन्न लेखिका है। कृष्णा जी ने अपनी खास लेखन शैली के कारण साहित्य में एक अलग पहचान बनाई है। कृष्णा जी कम लिखकर लेखन की गुणवता को ही अपना साहित्यिक परिचय मानती है। प्रगतिशील विचारों की वाहक कृष्णा जी की रचनाओं के विविध रूप दिखाई देते है। इन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं में लेखन कार्य कर अपनी बहुआयामी सृजनशीलता का परिचय दिया है। इनके कहानी व उपन्यासों में नारी जीवन की यथार्थता व मानवीय संवेदनाओं को बेहतर तरीके से उजागर किया है। प्रमुखतः हिन्दी साहित्य में इन्हें सेक्स और देह को केंद्र में रखकर लिखने वाली लेखिका के रूप में जाना जाता है। इस संदर्भ में "बच्चनसिंह ने कहा– "कृष्णा सोबती सेक्स को बोल्डनेस के साथ उभारने में सिद्धहस्त है।"[2] कृष्णा सोबती जी की पहचान एक संवेदनशील कहानी लेखिका के रूप में है जो वैयक्तिक मूल्यों की वाहक है। इनकी कहानियाँ में नारी मन की सूक्ष्म दशा, व उसकी आंकाक्षाओं व इच्छाओं को साहस व खुलेपन के साथ अभिव्यक्त किया है। 'डार से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी' में परम्परा में जकड़ी नारी के मन की सूक्ष्म जटिलताओं का चित्रण किया हैं। 'सूरजमुखी अंधेरे के, जिन्दगीनामा' उनके चर्चित उपन्यास है। 'सूरजमुखी अंधेरे के' में समाज की गंभीर व ज्वलंत समस्या बलात्कार को उठाया है। यह एक ऐसी कृति है जो वर्तमान समय में सामाजिकता से जुड़े अनेक सवालों को उठाकर हमें सोचने को विवश करती है। अतः कृष्णा सोबती भारतीय जीवन व धरा के साथ एकाकार हुई लेखिका है। उनका स्वस्थ लेखन व अनुभव जगत ही उनका समग्र साहित्य है।

मन्नू भण्डारी एक चर्चित महिला साहित्यकार है। यह नयी कहानी आंदोलन की एक महत्वपूर्ण लेखिका के रूप में हमारे सामने आई है। इनकी कहानियाँ स्त्री के मन के अनछुए पहलूओं को उजागर करने में काफी सफल रही है। इन्होंने अपनी लेखनी स्त्री की संवेदना तक सीमित नहीं रखकर वरन समाज के हर वर्ग व उनकी समस्याओं पर चलाई है। मन्नू भण्डारी एक ऐसी महिला है जो किसी भी तरह की वैचारिक अतिवादिता से मुक्त है। उनके तीन कहानी संग्रह, पाँच उपन्यास और दो नाटक प्रकाशित हो चुके है। 'एक इंच मुस्कान, महाभोज और आपका बंटी' इनके प्रसिद्ध उपन्यास है। इनके उपन्यासों में स्त्री–पुरुष संबंधों की बदलती हुई परिभाषा, कामकाजी औरत के जीवन की विसंगतियाँ तथा आधुनिक समाज में औरत की बदलती छवि की अभिव्यक्ति की गई है। इनकी रचनाओं

में आधुनिक समाज में व्याप्त विसंगतियों का बेहतर प्रस्तुतीकरण दिखाई देता है। सहज भाषा में खुली अभिव्यक्ति, कलात्मक अंदाज, समाज सापेक्ष संदर्भों का अंकन व नारी के मन की अथाह पीड़ा की प्रस्तुतीकरण के कारण मन्नू भण्डारी का नाम सर्वाधिक चर्चित रहा है। मन्नू भण्डारी ने कहानीकार, प्रभावी वक्ता, नाटककार व अध्यापिका आदि क्षेत्रों में भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है।

आधुनिक युग की कथा लेखिकाओं में अग्रणी है– उषा प्रियंवदा। इनकी अधिकांश कहानियों का विषय स्त्री जीवन से जुड़े विविध पहलूओं और खासतौर पर कामकाजी औरतों के सामाजिक और व्यक्तिगत संवेदना की अभिव्यक्ति पर आधारित है। इन्होंने खासतौर पर पढ़ी–लिखी और घर से बाहर निकली औरतों के जीवन को अपनी कहानी का केन्द्र बनाया है। इनकी कहानियाँ बदलते स्त्री–पुरुष संबंध तथा आधुनिक समाज के बीच प्रेम और आकर्षण के बीच फंसी स्त्री के जीवन की बिडम्बना व यथार्थ को अभिव्यक्त करती है। इनकी कहानियों में एक वर्ग विशेष अर्थात प्रवासी भारतीयों को केन्द्र में रखा गया है। निर्मला जैन इनकी कहानी के संदर्भ में लिखती है कि– "यूं उषा प्रियंवदा की अधिकांश कहानियाँ मानवीय संबंधों की जटिलता की कहानियाँ है। उनके पात्र आम जिंदगी में संपर्क में आने वाले परिचित से पात्र नहीं होते। वे जिस जीवन और जैसे पात्र की कहानी कहती थी, वह उस समय के अमरीकी परिवेश में जा बसे भारतीयों का सच हो सकता है, भारतवासियों का नहीं। कम से कम मध्यमवर्ग की भारतीय औरत की जीवन शैली से इसका बहुत लेना देना नहीं था। चार दशक बाद दुबारा पढ़ने पर वहीं कहानियाँ उतनी बेगानी नहीं लगती। ग्लोबल विश्व के सूचना संजाल से विकासशील देशों की जीवन शैली कुछ ऐसी प्रभावित हुई है कि अब वही तथ्य वैसे नहीं चौंकाते जैसे आधी शताब्दी पहेल चौंकाते थे"।[3] उषा जी ने उपन्यास क्षेत्र में भी अपनी छाप छोड़ी है। उन्होंने "पचपन खंभे लाल दीवारे, रुकोगी नहीं राधिका, शेषयात्रा" आदि चर्चित उपन्यास लिखे है। 'पचपन खंभे लाल दीवारे' में भारतीय नारी समाजिक व आर्थिक विवशताओं को तथा पारम्परिक मूल्यों और आधुनिक जीवन मूल्यों के बीच लटकती नारी की मानसिक छटपटाहट, वेदना और पीड़ा को व्यक्त करता है। 'रुकोगी नहीं राधिका' में भारतीय व पाश्चात्य सभ्यता के विरोधाभास से उत्पन्न नारी के मनःस्थिति को दर्शाया है। उषा प्रियंवदा ने अपने अधिकांश साहित्य में उच्चवर्गीय स्त्री की संवेदना को अभिव्यक्ति दी है।

नासिरा शर्मा हिन्दी की प्रसिद्ध लेखिका व कहानीकार है। यह प्रगतिशील विचारों की वाहिका है। इन्होंने सदैव मानवता को धर्म व सम्प्रदाय से ऊपर रखा है। स्त्री विमर्श की दृष्टि से नासिरा की कहानियाँ अत्यधिक महत्वपूर्ण है। नासिरा ने विभाजन, ईरानी क्रांति,

दंगों तथा विदेशी पृष्ठभूमि पर आधारित अनेक कहानियाँ लिखी है परन्तु इनकी अधिकांश कहानियों के केन्द्र में नारी है। इनकी कहानियों में धर्म, सत्ता और राजनीति के बीच फंसी औरत की संवेदना को व्यक्त किया गया है। इसी संवेदना और विषय के साथ इन्होंने उपन्यासों की रचना की है। 'सात नदियाँ एक समन्दर, ठीकरे की मंगनी, कुईयांजान' आदि इनके प्रमुख उपन्यास है। इनके उपन्यासों की पृष्ठभूमि मूलतः ईरान की है। इनके उपन्यास 'सात नदियाँ एक समन्दर' में क्रांति के दौर में होने वाले मानव संहार की गाथा को बेहद संजीदगी के साथ चित्रित किया है। क्रांतिकारी भूमिका अदा करने वाली औरतों पर समाजिक व राजनैतिक व्यवस्था के नाम पर रोक लगा उनके अस्तित्व को मिटाने के कड़वे यथार्थ को बारिकी से उभारने का प्रयत्न किया गया हैं। उनके उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' में मुस्लिम समाज में स्त्री की दशा व मुस्लिम महिलाओं द्वारा अपने अस्तित्व की लड़ाई से संबंधित हैं। इनके उपन्यासों में इनके भोगे हुए यथार्थ को अभिव्यक्ति दी गई है। नासिरा के साहित्य में विशेषतः निम्नवर्गीय तथा कामकाजी महिलाओं की समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है।

मृदुला गर्ग आधुनिक युग में बोल्ड लेखिका के रूप में जानी जाती है। मृदुला जी ने केवल महिला शोषण पर ही नहीं अपितु पुरुषों का शोषण व मध्यवर्गीय समाज की विभिन्न समस्याओं पर भी अपनी लेखनी को उतारा हैं। इन्होंने नाटक, कहानी, निबंध, उपन्यास, अनुवाद आदि अनेक क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। मृदुला गर्ग द्वारा भिन्न–भिन्न स्थानों पर रहने के कारण विभिन्न लोगों की जीवन शैली और आचार–विचार का प्रभाव उनके साहित्य पर पड़ा। इनका साहित्य किसी परिवेश का मोहताज नहीं है। 'उसके हिस्से की धूप, वंशज, चित्तकोबरा, अनित्य' मैं और मैं और कठगुलाब, इनके प्रमुख उपन्यास है। इनके उपन्यास में रिश्तों का खोखलापन, नारी की छटपटाहट, आधुनिक युग में मूल्यों का विघटन, उच्चवर्गीय जीवन की विसंगतियाँ आदि को दर्शाया है। इनके उपन्यास समाज एवं नारी की परिवर्तित चेतना का परिचय देते है।

शशिप्रभा जी आधुनिक युग की चेतना सम्पन्न लेखिका है। नारी स्वतन्त्रता की प्रबल समर्थक शशिप्रभा ने अपनी स्वतंत्र विचार–धारा को लेकर उपन्यास, कहानी–संग्रह, बालपयोगी साहित्य व यात्रा वर्णन आदि अनेक क्षेत्रों में लेखन कार्य किया है। इन्होंने यात्रा–वर्णन को उपन्यास शैली में लिखकर एक नई विधा को जन्म दिया है। आधुनिक युग के बदलते परिवेश में नारी की विभिन्न समस्याएँ, नगरीय परिवेश व मध्यवर्ग की जहदोजहद आदि इनके लेखन के प्रमुख आयाम है। "सीढ़िया, कर्क रेखा, क्योंकि, नावें, परसों के बाद, परछाईयाँ के पीछे" आदि इनके प्रमुख उपन्यास है। इन्होंने अपने उपन्यासों

के द्वारा मूल्यों के बीच फंसी नारी की मानसिक दशा, अनमेल विवाह, कामकाजी महिलाओं का संघर्ष आदि परिस्थितियों को बड़ी रोचकता के साथ प्रस्तुत किया है। आधुनिक हिन्दी लेखिकाओं में शशिप्रभा जी का एक अलग स्थान है।

चित्रा मुदगल आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य की बहुचर्चित व सम्मानित लेखिका है। इन्होंने अपने लेखन में विद्रोह के स्वर को मुखरित किया है। 'एक जमीन अपनी, आंवा' आदि इनके चर्चित उपन्यास है। इनके उपन्यासों में जहाँ एक और मानवीय संवेदनाओं का चित्रण हुआ है, वही दुसरी तरफ नये जमाने की रफ्तार में फँसी जिंदगी की मजबूरियों का चित्रण भी बड़े सलीके से हुआ है। निम्न वर्ग की संवेदना व नारी का विद्रोही रूप इनके लेखन का मुख्य विषय है।

समकालीन लेखन जगत की अग्रणी हस्ताक्षर है– ममता कालिया। ममता कालिया ने कहानी, उपन्यास, कविता, नाटक, संस्मरण और पत्रकारिता आदि साहित्य की सभी विधाओं में अपनी कलम का जादू बिखेरा है। इन्होंने अपने साहित्य में नारी के कई रूपों का चित्रण करते हुए नारी को पुरुष के समक्ष समानान्तर दिखाना इनके साहित्य सृजन का उद्धेश्य रहा है। 'बेघर, नरक दर नरक, प्रेम कहानी, एक पत्नी के नोट्स' आदि ममता जी के प्रसिद्ध उपन्यास है। इन्होंने अपने उपन्यासों में रोजमर्रा के संघर्ष में युद्धरत स्त्री के व्यक्तित्व को उभारा है। महिलाओं से जुड़े सवाल उठाकर इनके जवाब देने की भी कोशिश अपनी रचना में की है। ममता ने साहित्य में व्यक्ति को प्रधानता दी है। अतः उन्हें व्यक्तिपरक चेतना की लेखिका भी कहा गया है। इन्होंने अपने साहित्य में व्यक्ति से संबंधित इस तथ्य को भी रेखांकित किया कि स्त्री और पुरुष का संघर्ष ना ही अलग है और ना ही कम वरन समाजशास्त्रीय दृष्टि से ज्यादा विकट और महत्तर है।

मेहरुन्निसा परवेज प्रगतिशील विचारधारा की एक मुस्लिम लेखिका है। इन्होंने यथार्थवादी उपन्यासों की रचना की है। परवेज जी ने प्रायः मुस्लिम समाज का चित्रण अपने लेखन में किया है और मुस्लिम समाज की जीवन शैली, खानपान, त्यौहार, वेशभूषा व आचार–विचार आदि की जानकारी अपनी रचनाओं के माध्यम से पाठकों के सामने प्रस्तुत की है। 'आँखों की दहलीज, कोरजा, अकेला पलाश, उसका घर' आदि इनके चर्चित उपन्यास है। परम्परागत मूल्यों से संघर्षरत स्त्री प्रेम, विवाह, तलाक, अवैध संबंध व परित्यक्ता नारी का अत्याचार आदि नारी विवशता से जुड़े अनेक संदर्भों को उजागर किया है। शिक्षित व विद्रोही नारी का स्वर, निम्नवर्ग का जीवन संघर्ष और उसमें आंचलिकता का पुट इनकी लेखन कला की विशेषता है।

मालती जोशी हिन्दी साहित्य की असाधारण लेखिका है। उन्होंने हिन्दी साहित्य के विकास में महत्तवपूर्ण योगदान दिया है। उन्होंने कहानी संग्रह, उपन्यास, बालकथाएँ, कविता संग्रह, गीत संग्रह आदि विधाओं में रचना लेखन किया है। इनका अधिकांश साहित्य लेखन सामाजिक व पारिवारिक समस्याओं पर आधारित है। इन्होंने बदलते परिवेश में नारी मन की आकांक्षाओं व नारी जीवन से जुड़ी हर समस्या पर लेखनी को उतारा है। शीलप्रभा वर्मा के अनुसार "उनका हर उपन्यास अंत में उदात्तता की भावभूमि पर आकर समाप्त हो जाता है। एक ओर वे परंपरा का निर्वाह करती है तो दूसरी ओर आधुनिकता से उनका अदभूत समन्वय है। श्रीमति मालती जोशी ने अपनी अनुभूतियों को ही कागज पर उतारा है"।[4] 'ऋणानुबंध, चाँद अमावस का, ज्वालामुखी के गर्भ में, शापित शैशव पाषाण युग, समर्पण का सुख, विश्वास गाथा, विस्फोट, गोपनीय, निष्कासन, शोभायात्रा, राग–विराग, सहचारिणी' आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास है।

समकालीन महिला लेखिकाओं में निरुपमा सेवती अपने साहित्य में नवीनता और शैली में प्रवाह के कारण विशिष्ट स्थान रखती है। निरुपमा जी एक समस्या प्रधान सामाजिक उपन्यासकार है। 'मेरा नरक अपना है, दहकन के पार, बाटता हुआ आदमी, पतझड़ की आवाजे' आदि इनके उपन्यासों में नारी शोषण, नारकीय निम्नवर्गीय जीवन, अस्तित्व की तलाश में भटकती नारी, उच्च वर्ग की भोगवादी मनोवृति आदि का सफल चित्रण किया है। अतः इनके उपन्यासों में व्यक्तिवादिता व अस्तित्ववाद का स्वर गूँजता है।

आठवें दशक की एक सशक्त लेखिका है– दीप्ति खण्डेलवाल। इनके अधिकांश साहित्य लेखन का विषय प्रेम का बदलता स्वरूप है। साथ ही साथ इन्होंने नारी उत्पीड़न और उसकी विवशता को बड़े मार्मिक ढंग से अपनी लेखनी में उतारा है। इनका सम्पूर्ण साहित्य निज जीवन पर आधारित घटनाओं से भरा है। दिनेश द्विवेदी का कथन है– "दीप्ति के कथानकों में एक देखा भोगा हुआ संत्रास है जो की नासूर की तरह रिस्ता बिफरता है, मुझे नहीं लगता कि कथनी की इस तरह की वक्रता किसी ओर में दिखाई दें।"[5] दीप्ति ने अपने भोगे हुए यथार्थ को अपनी रचनाओं के द्वारा वाणी देने का प्रयास किया है। इनके अनुसार आधुनिक युग में नारी को केवल स्वतंत्रता शब्द से अंलकृत कर दिया है वरन उनकी यानताएँ पहले के समान ही है। 'प्रिया, वह तीसरा' कोहरे और प्रतिध्वनियाँ' आदि इनके चर्चित उपन्यास है। इनके उपन्यास से संबंधित शील प्रभा वर्मा का कथन है कि– "आंतरिक उत्पीड़न और विवशता के भँवर में फंसी नारी के जीवन को लेकर चलने वाली दीप्ति जी के उपन्यास सहज भाषा में मार्मिकता व संवेदनशीलता से भरे हुए है। कुछ उपन्यासों में तो दीप्ति जी ने अपने भोगे हुए यथार्थ को चित्रित किया है।"[6]

सूर्यबाला आधुनिक युग की प्रख्यात उपन्यासकार और कहानीकार है। समकालीन युग में उनका लेखन एक विशिष्ट महत्व रखता है। उन्होंने अपने साहित्य में समाज, जीवन, परम्परा, आधुनिकता एवं उससे जुड़ी समस्याओं को एकदम खुली, मुक्त व नितांत, निजी दृष्टि से देखने की कोशिश की है। उनके साहित्य लेखन में किसी भी विचारधारा के प्रति न अंधश्रद्धा देखने को मिली है और न ही एकांगी विद्रोह। 'मेरे संधिपत्र, सुबह के इंतजार तक, अग्निपंखी व दींक्षात' आदि इनके चर्चित उपन्यास है। इन्होंने अपने उपन्यास के द्वारा युवकों का मार्गदर्शन व जीवन से हताश लोगों को जीवन जीने की प्रेरणा दी है।

नवें दशक की उपन्यास लेखिकाओं में राजी सेठ का नाम बहुत महत्वपूर्ण है। यह मानव मन की कुशल चितेरी लेखिका के रूप में प्रख्यात है। व्यक्तिपरकता व समाजपरकता इनके लेखन का विषय रहा हैं। इनका साहित्य आंतरिक भावयंत्र या संवेदन तंत्र के ताने बाने को पूरी जटिलता के साथ रेखांकित करता है। उनका दर्शन यथार्थ, कला और विचार का मनोवैज्ञानिक ढंग से संपुजन करता है। 'निष्कवच और तत्सम' इनके चर्चित उपन्यास है। इन्होंने समाज व परिवेश से जुड़ी अनेक समस्याओं को अपने उपन्यास के द्वारा उजागर किया है।

समकालीन महिला लेखिकाओं में कई लेखिकाएँ है जिनकी औपन्यासिक कृतियाँ प्रसिद्ध हो चुकी है। जिनमें प्रमुख है– डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र की "मुझे माफ करना", चंद्रकांता की "बाकी सब खैरियत है", "ऐलानवाली जिंदा है", डॉ. प्रतिभा वर्मा की "सुबह होती है शाम होती है", ललिता राज की "उलझी राहें", माणिक मोहिनी की "पारु ने कहा था" आदि प्रकाशित कृतियाँ है।

निष्कर्षत –

समकालीन युग में अनगिनत लेखिकाओं ने उपन्यास के क्षेत्र में प्रवेश किया है और उपन्यास जगत में जीवन के यथार्थ को अभिव्यक्त करने लगी। इन्होंने नारी जीवन से संबंधित विभिन्न समस्याओं का यथार्थ रूप में चित्रण किया है। नारीवाद को एक सैद्धांतिक स्वरूप देने में सफलता हासिल कर हिन्दी साहित्य को एक नई दिशा की ओर अग्रसर किया है।

3.2 समकालीन महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान –

समकालीन हिन्दी साहित्य में महिला साहित्यकारों नें विविध विधाओं में साहित्य सृजन किया है। नये विचार व नये प्रयोगों के द्वारा साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की है। उपर्युक्त विवेचित महिला साहित्यकारों की कृतियों के साथ प्रभा खेतान के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन कर उनके साहित्य की मौलिकता को परखा जा सकता है।

समकालीन महिला उपन्यासकारों के रचना लेखन से स्पष्ट होता है कि उनके साहित्य का मुख्य विषय नारी है। प्रभा खेतान का साहित्य लेखन का विषय भी नारी केन्द्रित है। उनके सम्पूर्ण साहित्य में संयुक्त परिवार, परिवार में नारी के संबंध, उसके संघर्ष की झाकियाँ ही परिलक्षित होती है। प्रभा जी स्वयं पुरुषवाद से आक्रांत थी। अतः उनके साहित्य का मुख्य उद्देश्य नारी जीवन की विसंगतिया, पुरुषों द्वारा प्रताड़ना व मूल्यों द्वारा दमन को चित्रित करना है। प्रभा जी ने परम्परावादी व आधुनिकतावादी मूल्यों में फंसी नारी का चित्रण भी किया है।

प्रभा खेतान एक ऐसी महिला है जिन्होंने भारतीय नारी के समकक्ष विदेशी नारी के जीवन की भयावहता का चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। अपने उपन्यासों के द्वारा उन्होनें यह स्पष्ट किया है कि जमीन चाहे भारतीय हो या विदेश, नारी की यातनाएँ उनकी कुंठा एक–दूसरे के समान ही है। नारी की घुटन व मानसिक पीड़ा को अपने साहित्य में अभिव्यक्त कर नारी के स्वाभिमान व स्वतंत्रता का संदेश समाज के सामने रखना चाहती है।

समकालीन महिला उपन्यासकारों ने अपने लेखन में नारी जीवन के विविध आयाम, नारी से संबंधित अनेक समस्याओं को आधुनिक युग के संदर्भ में अभिव्यक्त किया है। उनका प्रभाव प्रभा खेतान के साहित्य पर भी परिलक्षित होता है। नारी से संबंधित विविध आयामों को हम प्रभा जी के साहित्य में देख सकते है।

आधुनिक युग की अधिकांश महिला लेखिकाओं नें अपनी रचनाओं में प्रेम के स्वरूप पर प्रकाश डाला है। उसमें उषा प्रियंवदा, चित्रा मृदुगल, मालती जोशी, निरूपमा सेवती, कृ ष्णा सोबती, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग आदि महिला लेखिकाओं ने अपने उपन्यासों मे प्रेम के विभिन्न स्वरूपों को चित्रित किया है। प्रभा जी ने अपने साहित्य में प्रेम के प्रति स्त्री व पुरुषों की मानसिकता को व्यक्त किया है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में धोखा खाई स्त्री व प्रेम पीड़िता नारी का चित्रण कर नारी को सचेत रहने का संदेश दिया है ताकि कोई पुरुष स्त्री के अस्तित्व के साथ खिलवाड़ न कर सके।

प्रभा खेतान ने अपने उपन्यासों में प्रेम के दोनों रूप सकारात्मकता व नकारात्मकता का अंकन भी किया है। उन्होंने पुरुषों द्वारा नारी को भोग्या मानने की दृष्टि की ओर भी संकेत किया है। इनके उपन्यासों में आधुनिक नारी के विवाहेत्तर प्रेम संबंधों व स्वच्छंदता को भी यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। इसके साथ ही प्रभा खेतान के "पीली आँधी" उपन्यास में पद्मावती और सुराणा की प्रेम गाथा के द्वारा वासना रहित व उत्कट प्रेम का वर्णन भी किया है।

समकालीन लेखिकाओं ने नारी के व्यावसायिक रूप का चित्रण भी अपने साहित्य में किया है। मृदुला गर्ग के "उसके हिस्से की धुप, पतझड़ की आवाजे", मुंजला भगत के "अनारी, तिरछी बौछार", मालती जोशी के "राग विराग में, मन न भये दस बीस, निष्कासन" व निरुपमा सेवती आदि ने अपने उपन्यासों में व्यावसायिक नारी के जीवन से जुड़ी समस्याओं को चित्रित किया है।

प्रभा खेतान के "छिन्नमस्ता, अपने–अपने चेहरे, अग्निसंभवा, आओ पे पे घर चले", आदि उपन्यासों में कामकाजी नारी व कार्य के प्रति आकृष्ट नारी का चित्रण किया है। इनकी नायिकाएँ आइलिन, प्रिया, प्रभा, वृंदा, रमा आदि का व्यक्तित्व नारी को प्रेरणा देता है कि हर स्त्री को स्वावलम्बी बन समाज में अपने अस्तित्व की पहचान बनानी चाहिए। प्रभा जी के उपन्यास में नारी मर्यादा की बेड़ियों को तोड़कर आत्मविश्वास व आत्मनिर्भरता के साथ जीती नजर आती है।

समकालीन महिला लेखिकाओं ने नारी के विभिन्न रूपों में विद्रोही भूमिका को उजागर किया है। दीप्ति खण्डेलवाल के प्रतिध्वनियाँ में पत्नी के विद्रोही स्वरूप का चित्रण किया है। प्रभा खेतान के उपन्यास 'छिन्नमस्ता' की प्रिया, 'अपने–अपने चहरे' की रीतु, पीली आँधी' की सोमा, 'अग्निसंभवा' की आइवी व 'आओ पे पे घर चले' की हेल्गा आदि सभी नायिकाएँ पति से विद्रोह की भूमिका में नजर आती हैं। ये सभी नायिकाएँ पति को त्यागकर स्वतंत्रता की राह पर चलती दिखाई देती है। इन नारियों द्वारा प्रभा जी इस तथ्य को नारी के सामने रखना चाहती है कि सदैव अन्याय व पुरुष यातना सहते हुए घुटन भरी जिन्दगी जीने से बेहतर स्वतंत्र होकर खुली हवा में सांस लेकर जीवन जीना चाहिए।

समकालीन लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं में स्त्री व पुरुष के सम्बन्धों पर भी प्रकाश डाला है। आधुनिकता की होड़ में पारिवारिक रिश्ते खोखले होते जा रहे है। सयुंक्त परिवार अपना अस्तित्व खो रहा है। अपने–अपने अहम में डुबे होने के कारण रिश्तो के मायने भी बदल गये हैं तथा पति–पत्नी व स्त्री–पुरुष के संबंधों तथा भूमिका में परिवर्तन हुआ है। आज नारी भी स्वतंत्रता की चाह रख अकेले जीवनयापन की इच्छा रखती है। इस कारण नारी ने चेतना जागृत कर विद्रोह की भूमिका अपना ली है। डॉ. किरण बाला अरोड़ा लिखती है– "आधुनिक नारी प्राचीन काल की नारी के समान अंधे–लंगड़े पति को भी परमेश्वर मानकर उसकी पुजा नहीं करती, बल्कि वह अपने लिए अनुकूल पति चाहती है। जो जीवन के सभी क्षेत्रों में यहा तक की घरेलु कामों में भी उसका साथ दे। लेकिन पुरुषवर्ग इसके लिए तैयार नहीं हो पाता। उसका अहं ऐसी स्थिति स्वीकार नहीं करता तो नारी विद्रोह करती है।"[7]

उषा देवी मित्रा, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, दीप्ति खण्डेलवाल, आदि लेखिकाओं ने नारी जीवन के संघर्ष व उनसे उत्पन्न मन की विभिन्न स्थितियों का चित्रण कर स्त्री व पुरुष के संबंधों को गहराई के साथ परखा है। शिवानी का 'सुरंगमा', रजनी पनिकर का 'सोनाली दी', मृदुला गर्ग का 'उसके हिस्से की धूप' आदि उपन्यासों में स्त्री व पुरुष के संबंधों की नई व्याख्या कर उसको परिभाषित किया है।

प्रभा खेतान के उपन्यासों में भी स्त्री–पुरुष के संबंध को प्रभावी रूप से सामने रखा है। प्रभा जी के अनुसार जब पुरुष द्वारा नारी भावना को अनदेखा व आहत किया जाता है तो नारी आक्रोश से भर उठती है और पुरुष की उपेक्षा कर एक स्वतंत्र व नई राह की ओर बढने पर विवश हो जाती है। इसी धारणा को उन्होंने अपने उपन्यासों के द्वारा स्पष्ट किया है। 'अपने–अपने चेहरे की' रीतु, 'पीली आँधी' की सोमा, 'छिन्नमस्ता' की प्रिया आदि इसी सोच की वाहक नायिकाएँ अपने पति द्वारा छोड़े जाने पर भी हताशा के गर्त में जाने के बजाय एक संयमित और साहसी जीवन यापन करते हुए आसमान की नई बुलंदियों को छूती है।

समकालीन महिला उपन्यासकार ने अपने साहित्य में संयुक्त परिवार व उसके विभाजन का चित्रण किया है। प्रभा जी के उपन्यासों में ज्यादातर संयुक्त परिवार का चित्रण किया गया है। क्योंकि वह हमेशा एकाकी परिवार व परिवार विभाजन के खिलाफ थी। वह परिवार की संयुक्तता में विश्वास रखती थी।

कुछ महिला उपन्यासकारों ने महिला की अस्मिता के साथ खिलवाड़ अर्थात बलात्कार जैसे जघन्य अपराध पर भी अपनी लेखनी उतारी है। कृष्णा सोबती का 'सूरजमुखी अंधेरे में', बलात्कार के पश्चात नारी की मनः स्थिति का वर्णन मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है। वही प्रभा खेतान हिन्दी की प्रथम लेखिका है जिसने बलात्कार जैसे जघन्य अपराध का अपराधी भाई को बनाया है अर्थात भाई द्वारा अपने बहिन की अस्मत से खिलवाड़ की घटना को छिन्नमस्ता उपन्यास में उतारा है। बलात्कार नारी के मन को अन्दर तक तोड़ देता है और वह अपना आत्मविश्वास तक खो देती है। वह एक अलग सख्शियत बनकर उभर कर आती है। छिन्नमस्ता की प्रिया के बारे में मालती अदवानी कहती है– "प्रिया में बहुत से अंतर्विरोध है। बाल्य से बलात्कार की विभीषिकाओं से आंक्रादित मन सेक्स तथा विवाह से घृणा करता है। ठंडी औरत रहकर पुरुष से बदला लेने का निर्णय लेती है।"[8]

समकालीन लेखिकाओं ने अपने साहित्य में नारी को नायिका के रूप में भी वर्णित किया है जो कथानक को एक उद्देश्य के साथ नेतृत्व करती हुई उसके अंतिम छोर तक

लेकर जाती है। उन लेखिका के उपन्यास में नायिकाएँ सफल व्यक्तित्व के साथ विशेष उपमा ग्रहण किये है तथा प्रत्येक नायिका एक अलग उद्देश्य को समाज के सामने प्रखर कर रही है। कामता कमलेश का "उसका नाम विनय था" उपन्यास को नायिका बीना ईमानदार, साहसी व भावुकता की विशेषता धारण किये हुए है। मंजुल भगत का 'अनारी' की नायिका संघर्षशीलता की पहचान लिये हुए है। कृष्णा सोबती का 'मित्रो मरजानी' उपन्यास की नायिका मित्रो आदर्श व परम्परागत मूल्यों से आंक्रात हो विद्रोह करते हुए नैतिकता को चुनौती देती है।

प्रभा खेतान के उपन्यास भी सभी नारी पर ही केन्द्रित है। उनकी नायिकाएँ अपने अस्तित्व की खोज में जुटी संघर्षशील व आत्मविश्वास का प्रतीक बनी हुई है। प्रभा जी की नायिका अपना अलग अस्तित्व रखती है। यह नायिकाएँ अपने अधिकार के लिए समाज की निर्मूल परम्पराओं के विरुद्ध खड़ी हो जाती है। 'स्त्री पक्ष' की वृंदा, 'छिन्नमस्ता' की प्रिया, 'अपने—अपने चेहरे' की रीतु आदि सभी नायिकाएँ स्वाभिमानी, महत्वाकांक्षी तथा अपने अस्तित्व के प्रति जागरूक है। इसीलिए वह पति के अहम के आगे नतमस्तक होने के बजाय अलग रहकर जीवनयापन करती है। ये नायिकाएँ समाज की प्राचीन परम्पराओं से विद्रोह कर अदभूत धैर्य के साथ संघर्ष करती है।

समकालीन महिला उपन्यासकारों ने साहित्य में आधुनिकतावाद को बढ़ावा दिया है। युग बोध का मार्ग प्रखर करते हुए महिला उपन्यासकारों ने उच्चवर्गीय व निम्नवर्गीय श्रेणी में रिश्ते के खोखलेपन, स्त्री—पुरुषों के दाम्पत्य संबंधों में अलगाव व आधुनिक नारी के मन संकुचन की गाथा, विचारों में दोगला व खुलापन आदि का यथार्थ रूप में चित्रण किया है। कृष्णा सोबती के "मित्रो मरजानी" की मित्रो पति से असंतुष्टि के कारण पर पुरुषों पर आकर्षित होती है। शिवानी के 'विषकन्या' की कामिनी अपने जीजा से संबंध स्थापित करती है। निरूपमा सेवती के 'मेरा नरक अपना है' में विवाहित नारी अकेलापन दूर करने के लिए प्रेम को सहारा बनाती है। कृष्णा अग्निहोत्री के 'कुमारिकाए', की रोज, शिवानी के 'भैरवी' की माया, 'चौदह फेरे' की कली, सूरजमुखी अंधेरे की 'सती' आदि सभी उपन्यास की नायिकाएँ आधुनिक युग के जीवन की सानी है। सभी नायिकाएँ परम्परागत मूल्यों से विद्रोह कर सामाजिक सीमाओं को लांघकर स्वतंत्र जीवन जीने के लिए आधुनिकता की ओर बढ़ रही है।

प्रभा खेतान ने आधुनिक युग में आधुनिकता से आकर्षित नारी का चित्रण किया है। उनके साहित्य की नायिकाएँ आधुनिक सोच की वाहक है। ये नायिकाएँ पति की यातनाएँ सहनकर भीरु बनना नहीं चाहती बल्कि वह उनसे स्वच्छंद होकर आत्मनिर्भर बन अपना

जीवन यापन करना चाहती है। उस कारण वह अकेलेपन की पीड़ा को भी सहने को तत्पर है।

प्रभा खेतान ने अपने उपन्यासों में नारी को सदैव जीवन में आने वाली समस्याओं के साथ संघर्ष करते हुए प्रतिपादित किया है। प्रभा जी ने पति–पत्नी के अलगाव में बिछड़े बच्चों की संवेदनाओं को भी सूक्ष्मता से अंकित किया है। प्रभा जी ने नारी सशक्तिकरण द्वारा प्रेरित होकर अपने अस्तित्व की प्रार्थी नारी का चित्रण किया है। उन्होंने पारम्परिक रूढ़ियों का विद्रोह करते हुए पारिवारिक व सामाजिक समझौते को नकारते हुए स्वयं पर विश्वास करने वाली आधुनिक नारी का यथार्थता के साथ वर्णन किया है। अंततः आधुनिकता के दौर में नारी की बदलती मानसिकता व स्वरूप का सूक्ष्मता से अंकन करना ही प्रभा जी के साहित्य का मुख्य ध्येय है।

3.3 महिला उपन्यास लेखन में प्रभा खेतान का वैशिष्ट्य –

साठोत्तर हिन्दी साहित्य के महिला उपन्यासकारों में प्रभा खेतान का अपना बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। मारवाड़ी परिवार में जन्मी प्रभा खेतान का समकालीन उपन्यास साहित्य में सक्रिय योगदान रहा है। प्रभा जी साहित्यकार व बहुभाषाविद् होने के साथ–साथ नारी लेखन क्षेत्र की स्तम्भकार भी है। साठोत्तर युग में समकालीन सामाजिक परिवेश व मध्यवर्गीय जीवन शैली पर लेखन कार्य कर उपन्यास जगत को समृद्ध किया है। इनके उपन्यासों में नारी विमर्श व नारी जीवन के संघर्ष की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। इनके साहित्य की मूल संवेदना का आधार दर्शन है। प्रभा खेतान की विभिन्न विषयों पर कुल चौबीस पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है। इनका रचना संसार उनके परिवेश, संस्कार, अनुभव और चिंतन का परिणाम है।

सदी के अंतिम दशक को सशक्त लेखिका प्रभा खेतान के सामने नारी के अस्तित्व का प्रश्न खड़ा था। नारी की अस्मिता और उसकी स्वतंत्रता को स्थापित करने हेतु प्रभा जी ने अपने उपन्यास साहित्य के द्वारा सामाजिक व आर्थिक स्तर पर संघर्ष किया। उन्होंने परंपरागत व आधुनिकता के बीच संघर्ष करने वाली नारी का वर्णन किया है। इन्होंने नारी जीवन के मूल क्षणों को अभिव्यक्ति किया है। एक महिला होने के कारण उन्होंने नारी के मनोविज्ञान को बहुत सूक्ष्मता से चित्रित किया है। भारतीय नारी के आवेशित आदर्शो में छटपटाती नारी की आकांक्षाओं, लालसाओं, व्यवसायी नारी की व्यथा, पुरुष का अहं, बदलते स्त्री–पुरुष संबंध, नारी का संघर्ष आदि विषयों को निभ्रांत वाणी दी है। जो हमें एक नागरिक होने के नाते विचार करने पर विवश करता है। समकालीन युग की परिस्थितियों व परिवेश का उनके लेखन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। प्रभा जी द्वारा कलकत्ता, दिल्ली,

होंगकोंग, अमेरिका, बम्बई जैसे स्थानों से जुड़ी होने के कारण उनके उपन्यासों में आधुनिक जीवन की झाकियाँ अधिक परिलक्षित होती है और इस कारण उनके उपन्यासों में महानगरीय जीवन और उससे जुड़ी अनेक समस्याओं का चित्रण मिलता है। साथ ही कहीं–कहीं ग्रामीण परिवेश की झलक भी दिखाई देती है।

प्रभा जी के अपने तीन उपन्यास 'आओ पे पे घर चले', 'अग्निसंभवा', 'एड्स', विदेशी पृष्ठभूमि पर लिखे गये है। उन उपन्यासों में उन्होंने विदेशी नारी की पीड़ा, उनका संघर्ष, जीवन यापन से जुड़ी समस्याओं का वर्णन किया है। इनकी पृष्ठभूमि भारतीय पृष्ठभूमि से मिली–जुली प्रतीत होती है। विदेश संस्कृति के यथार्थ की अभिव्यक्ति साहित्य में उनका बड़ा वैशिष्ट्य है।

प्रभा जी ने सर्वप्रथम विदेशी संस्कृति व विदेशी नारी की व्यथा को अपने उपन्यास के द्वारा अभिव्यक्ति करने का प्रयास किया है। आधुनिकता का चोला ओढ़े विदेशी स्त्री कितनी एकाकी, असहाय व पीड़ित है इसका यथार्थता के साथ वर्णन कर भारतीय नारी व विदेशी नारी की व्यथा को समानान्तर स्थापित किया है। वैश्विक धरातल पर नारी के अस्तित्व को उद्घाटित करने का यह सफल प्रयास है।

प्रभा जी एक मारवाड़ी परिवार से संबंध रखती थी इसलिए मारवाड़ी परिवेश व मारवाड़ी रूढ़ परम्परा को साहित्य में पहली बार अभिव्यक्ति मिली। साथ–साथ में व्यावसायिक पृष्ठभूमि पर भी प्रथम बार साहित्य लिखा गया। उन्होंने 'तालाबंदी', उपन्यास के द्वारा यूनियन को परिभाषित कर उनकी भूमिका पर सवाल दागे गये।

प्रभा खेतान ने अपने लेखन में राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय दोनों स्तर पर व्यवसाय की पृष्ठभूमि को उजागर किया है। प्रभा खेतान ही हिन्दी साहित्य की प्रथम लेखिका है जिन्होंने विश्व के धरातल पर व्यवसाय में कार्यरत स्त्री के संघर्ष को उजागर किया तथा मजदूर वर्ग की समस्याओं को उजागर कर उनके प्रति अपनी संवेदनाओं को भी प्रकट किया है।

प्रभा खेतान के साहित्य सृजन में अनुभूति की गहराई का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि गहन अनुभूतियों में ही वह क्षमता होती है कि जीवन के यथार्थ को साहित्य में समावेशित कर सके। प्रभा जी ने अपने सम्पूर्ण रचनात्मक लेखन में स्वानुभूति को यथार्थ रूप दिया है। इन्होंने अपने साहित्य में जिस मारवाड़ी समाज की संकीर्णता, दकियानूसी सोच, नारी की विवशता, घुटन व पीड़ा का यथार्थ चित्रण किया है वह स्वयं उनकी भोगी हुई अनुभूति का परिणाम है। यथार्थवाद की कलात्मक अभिव्यक्ति उनके साहित्य की सफलता है।

प्रभा खेतान ने स्त्री विमर्श को अपना मुख्य विषय बनाकर साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की है। स्त्री विषय पर लेखन व स्त्री चेतना से संबंधित कार्यो में सक्रिय रूप से सहभागी होने पर उन्हें स्त्रीवादी चिंतक के रूप में प्रतिष्ठित किया है। उनकी संवेदनशीलता, चिंतनशील, अनुभव की प्रामाणिकता, सामाजिक दायित्व बोध ने उन्हें उत्कृष्ट साहित्यकार की पदवी से विभूषित किया है।

प्रभा जी के लेखन का मूल स्त्री से संबंधित है। इनके उपन्यासों में स्त्री के शोषण व उसके संघर्ष की अभिव्यक्ति हुई है। उनके उपन्यासों में स्त्री अपने अस्तित्व व जीवन के निर्माण हेतु संकल्प के साथ नई शक्ति के रूप में उभर कर आई है। "अस्तित्व और अस्मिता" लेख में प्रभा जी कहती है– "संस्कृति संस्था और धार्मिक सुविधाएँ अभिजात स्त्रियों को अधिक मिली है किन्तु इन्हीं सुविधाओं ने कहीं उनकी चेतना को और अधिक जड़ीभूत भी बना दिया है। अपनी कुलीनता के नशे में वे बेहोश है। भारतीय मर्यादा की गलबहियाँ उन्हें बार–बार व्यवस्था के सम्मोहन की ओर धकेलती है तथा अपनी खुद की पीड़ा की नग्नता को देखने–समझने के बजाय वे पुरुषों द्वारा प्रद्त पीड़ा के रस में ही पगी रहती है।"[9] प्रभा जी के उपन्यासों में नारी अपने अतीत के बुरे साये से बाहर निकल एक सुखमय जीवन यापन करती हुई प्रतीत होती है।

प्रभा खेतान ने अपने परिवेश अर्थात मारवाड़ी समाज में परम्पराओं और आधुनिकता के बीच फँसी स्त्री के अस्तित्व को अपने उपन्यास के द्वारा एक पृथक पहचान से अवगत कराया है। इन्होंने अपने उपन्यास छिन्नमस्ता के द्वारा मारवाड़ी समाज के संघर्ष, नारी की दशा व स्त्री व पुरुष दोनों की व्यथा का यथार्थ वर्णन किया है। प्रभा जी ने अपने उपन्यास के द्वारा परिवर्तित मारवाड़ी स्त्रियों की अस्मिता से परिचय करा साहित्य में अनुपम योगदान दिया है।

प्रभा जी ने अपने साहित्य में स्त्री की आत्मनिर्भरता पर जोर दिया है। वह हर स्त्री को परिस्थितियों से जूझने की प्रेरणा अपने साहित्य के माध्यम से देती है इसलिए वह नारी के अस्तित्व के रक्षार्थ हेतु अर्थ का होना आवश्यक मानती है। इस हेतु इनके उपन्यास की नायिकाएँ आर्थिक रूप से महत्वाकांक्षी बन आत्मनिर्भर होकर अपने पथ पर आगे बढ़ रही है। प्रभा जी कहती है– "मेरे जीवन का मूल मंत्र है– आर्थिक स्वतंत्रता। पैसा कमाने के लिए मैंने कड़ा परिश्रम किया है और सफलता–असफलता की द्वंदात्मकता से संचालित व्यापारिक दुनिया के सारे तामझाम सीखने का प्रयत्न किया है। मेरे जीवन का यह बड़ा महत्वपूर्ण पक्ष है क्योंकि उससे मुझे जो एक्सपोजर मिलता है उससे मैं जीवन को और करीब से समझ पाती हूँ। मैं चाहे व्यापार करूँ या लेखन कार्य, पूरी तरह डूबकर, पूरी

तन्मयता के साथ करती हूँ, जो मेरी जिजीविषा को बचाए रखती है शायद इसलिए भीड़ में शोर–शराबे के बीच में बिल्कुल एकाग्रता से पढ़ती लिखती रहती हूँ। व्यापार के खांचे से लेखन के खांचे में डूबना अब मेरा स्वभाव बन गया हैं। लिखने का मेरा अपना संघर्ष होता है कि मुझे मर–मर के लिखना पड़े .... समय नहीं है, माने प्लेन में, यहाँ वहाँ दौड़ते हुए लिख रही हूँ इसलिए हड़बड़ी में लिखने की वजह से मेरे लेखन में एक गैप हमेशा विद्यमान रहता है, जिसकी मुझे पीड़ा हैं।"[10]

प्रभा जी ने साहित्य की अन्य विधाओं में लेखन कार्य कर अपने कृतित्व को पहचान दिलाई है। इन्होंने हिन्दी साहित्य में बाजार के बीच बाजार के खिलाफ, भूमंडलीकरण, स्त्री विषयक प्रश्न आदि चिंतन साहित्य का निर्माण कर अस्तित्ववादी सिद्धांतों पर प्रकाश डाला है। इन्होंने अस्तित्ववादी दार्शनिक ज्यां पाल सार्त्र पर पुस्तक लिखकर उनके जीवन व सिद्धांतों से अवगत कराया है। भूमंडलीकरण ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र का निर्माण कर भूमंडलीकरण के प्रभाव को समझाते हुए उसके हर पहलू पर गंभीरता से विश्लेषण किया है।

प्रभा जी ने "स्त्री उपेक्षिता" पुस्तक का अनुवाद कर स्त्री विमर्श को नई पहचान दिलाई है। परवीन मलिक कहती है– "वे स्वयं अस्तित्ववाद में गहरे पैठकर हताश, निराश और विसंगतियों के बीच अपने अस्तित्व रूपी मोती को चुनकर ले आती है।"[11] प्रभा जी ने दक्षिणी अफ्रीकी कविताओं का अनुवाद कर अफ्रीका की जनता की संवेदनाओं को चित्रित किया। प्रभा जी की आत्मकथा "अन्या से अनन्या" में उपेक्षित बचपन से जीवन की लंबी त्रासदी को चित्रित किया है। इनकी आत्मकथा नारी विमर्श को बढ़ावा देने के साथ–साथ उस समय के परिवेश के यथार्थ को भी प्रतिबिम्बित करती है। इनकी आत्मकथा की नायिका का संघर्ष व जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण प्रत्येक स्त्री के लिए प्रेरणास्पद है।

प्रभा जी की भाषा अत्यंत सरल व सहज है। इनकी भाषा में भावों के अनुरूप अभिव्यक्ति की शक्ति विद्यमान है। भाषा शैली की उत्कृष्टता व भावात्मकता ने इनको एक अलग पहचान दिलाई है। उनकी भाषा में स्वाभाविकता व प्रवाह है। इनकी भाषा शैली में अंग्रेजी शब्दों की अधिकता है। प्रतीकों, संकेतों तथा चित्रात्मकता का प्रयोग सहज परिलक्षित होता है।

उपर्युक्त विवेचन स्वरूप कहा जा सकता है कि प्रभा खेतान एक अत्यंत सफल, सुलझी व संवेदनशील लेखिका है। इन्होंने हिन्दी साहित्य में महिला लेखिकाओं की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए उसकी आधारशिला को ओर मजबूत किया है। प्रभा जी का सम्पूर्ण

लेखन नारी पर ही केन्द्रित है। उन्होंने नारी की समस्याओं को उजागर कर नारी को स्वतंत्रता की दिशा का बोध कराया है। प्रभा खेतान ने वैश्विक धरातल पर भारतीय व विदेशी नारी की समस्याओं को एकसार प्रतीत करा अनूठा साहित्य सृजन किया है। अंतत प्रभा खेतान का साहित्य नारी त्रासदी और संकल्प का एक प्रामाणिक दस्तावेज है।

निष्कर्ष –

"समकालीन महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान" अध्याय में प्रभा खेतान से संबंधित जिन मुद्दो को उभारा गया है। इससे यह अवगत होता है कि प्रभा खेतान एक बहुविध महिला साहित्यकार है। इन्होंने सभी विधाओं में मौलिक लेखन कार्य कर अपनी रचनात्मक कुशलता को सिद्ध किया है।

प्रभा जी ने अपने लेखन में नारी के धैर्य व साहसी प्रवृति को उजागर किया है। इनके उपन्यास की नायिका द्वारा परम्परागत मूल्यों के प्रति विद्रोही स्वर दिखाते हुए आधुनिकता के पक्ष को उजागर किया है। इनके उपन्यास की नायिकाओं द्वारा विद्रोह की भूमिका को साकार करते हुए भारतीय नारी के आदर्शों को त्याग अपने अस्तित्व की पहचान हेतु साहस के साथ नई राह की ओर प्रेषित होती परिलक्षित हो रही है।

प्रभा जी ने विदेशी नारी के जीवन की समस्याओं को उजागर कर भारतीय नारी व विदेशी नारी के जीवन संदर्भों की यथास्थिति को उजागर किया है। प्रभा जी ने व्यवसाय में कार्यरत नारी जीवन का यथार्थ वर्णन किया है। नारी की इस भूमिका के द्वारा उन्होंने नारी जाति को साहस व आत्मविश्वास के साथ संघर्ष करते हुए अपनी योग्यता के दम पर अपनी पहचान बनाने का संदेश दिया है।

भाषा की सरलता, सहजता व प्रवाहात्मकता, शब्दों के चयन के द्वारा लेखिका की भाषा पर पकड़ मजबूत दिखाई देती है। भावों के अनुरूप भाषा अभिव्यक्ति के द्वारा इन्होंने हिन्दी महिला साहित्य जगत में अपना महत्वपूर्ण वैशिष्ट्य स्थापित किया है।

संदर्भ सूची –

1. स्वातंन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास का विकास, डॉ प्रभु शुक्ल, पृष्ठ – 13
2. हिन्दी साहित्य के इतिहास में स्त्री लेखन (समीक्षा 2017), डॉ अंजुलता
3. नई सहस्त्राब्दी का महिला सशक्तिकरण, डॉ वीरेंद्र सिंह यादव, पृष्ठ – 159
4. आठवें दशक की लेखिकाओं के उपन्यासों में व्यक्त स्त्री चरित्र, डॉ सविता चाखोबा किर्ते, पृष्ठ – 51
5. स्वातंन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास का विकास, डॉ प्रभु शुक्ल, पृष्ठ – 20

6. आठवें दशक की लेखिकाओं के उपन्यासों में व्यक्त स्त्री चरित्र, डॉ सविता चाखोबा किर्ते, पृष्ठ – 65
7. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी, डॉ किरणबाला अरोड़ा, पृष्ठ – 257
8. दसवें दशक के प्रतिनिधि उपन्यास, मालती आदवानी, पृष्ठ – 36
9. औरत अस्तित्व और अस्मिता, डॉ अरविंद जैन, पृष्ठ – 63
10. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ उषा कीर्ति राणावत, पृष्ठ – 182–183
11. प्रभा खेतान और उनका साहित्य, डॉ परवीन मलिक, पृष्ठ – 282

चतुर्थ अध्याय

समकालीन महिला उपन्यासों में मूल्य चेतना का स्वरूप

चतुर्थ अध्याय

समकालीन महिला उपन्यासों में मूल्य चेतना का स्वरूप

प्रस्तावना

4.1 मूल्य की परिभाषा और स्वरूप

4.1.1 मूल्य शब्द का अर्थ

4.1.1.1 मूल्य का कोशगत अर्थ

4.1.2 मूल्य की परिभाषा

4.1.3 मूल्य चेतना का तात्पर्य

4.1.4 मूल्यों की प्रकृति

4.1.5 मूल्यों का निर्माण

4.1.6 मूल्य स्वरूप व विकास

4.2 मूल्य की अवधारणा

4.2.1 मूल्य अवधारणा संबंधी भारतीय दृष्टिकोण

4.2.1.1 धर्म

4.2.1.2 अर्थ

4.2.1.3 काम

4.2.1.4 मोक्ष

4.2.2 मूल्य अवधारणा संबंधी पाश्चात्य दृष्टिकोण

4.2.3 मूल्यों का वर्गीकरण

4.2.3.1 पाश्चात्य विद्वानों का दृष्टिकोण

4.2.3.2 भारतीय विद्वानों का दृष्टिकोण

4.2.4 मूल्य और साहित्य

4.2.5 मूल्यों का महत्व

4.3 मूल्य संक्रमण और परिवर्तन

4.3.1 संक्रमण का अर्थ व स्वरूप

4.3.2 साहित्य के संदर्भ में मूल्य संक्रमण का अर्थ

4.3.3 मूल्य संक्रमण के आधार तत्व

4.3.4 मूल्य परिवर्तन की दिशाएँ

4.4 समकालीन महिला उपन्यास लेखन में मूल्य चेतना

समकालीन महिला उपन्यासों में मूल्य चेतना का स्वरूप

प्रस्तावना –

'मूल्य' मानव मस्तिष्क की उपज हैं किन्तु उसकी आधारशिला समाज सापेक्षित है। मूल्य का संबंध व्यक्ति और समाज दोनों पर निर्भर होता है। अतः इसकी अवधारणा पूर्णतः सामाजिक पद्धति पर आधारित है। प्रत्येक समाज का मूल्य तंत्र है जिसके द्वारा उस समाज का मूल्य निर्धारण होता है। इसीलिए प्रत्येक समाज में रूढ़ियाँ, मान्यताएँ व परम्पराएँ अलग–अलग होती है और इन्हीं परम्पराओं व मान्यताओं के मिले जुले स्वरूप को मूल्यों का स्थान दिया जाता है।

आज आधुनिकता के दौर में धर्म, समाज, साहित्य, राजनीति आदि सभी क्षेत्रों में विज्ञान व तर्क का समावेश होने के पश्चात भी समाज में मूल्यों का महत्व अपरिहार्य है। मानव मूल्यों पर ही भारतीय संस्कृति की आधारशिला रखी है। अतः राष्ट्र व समाज का विकास मौलिक संसाधनो पर नहीं बल्कि उसके नागरिकों द्वारा अपनाये गये मूल्यों पर आधारित है।

मूल्य परिवर्तनशील प्रकृति के होते है। युग के अनुरूप मूल्यों में संशोधन व नए मूल्यों का प्रादुभार्व होता रहा है। मूल्य लोक हित का प्रतीक है। उसकी सत्ता सामूहिक चिंतन की भूमि पर आधारित होने के कारण सम्पूर्ण सामाजिक संबंध व कार्य मूल्यों के सहयोग व संघर्ष पर निहित है। अतः मूल्य एक सामाजिक बंधन है।

4.1 मूल्य की परिभाषा और स्वरूपः–

4.1.1 मूल्य शब्द का अर्थ –

समाज व साहित्य में 'मूल्य' सदैव चर्चित विषय रहा है। आधुनिक समय में 'मूल्य' शब्द सामाजिक व संस्कृतिक अनेक धारणाओं का प्रतीक है। 'मूल्य' शब्द मूलतः अर्थशास्त्र का शब्द है। जिसकी व्युत्पति संस्कृत के मूल़+यत से मानी गई है और इसका तात्पर्य है– मोल लेने योग्य।

मूल्य शब्द अंग्रेजी के value का समानार्थी है। value शब्द लैटिन भाषा के valere से बना है जिसका अर्थ है– अच्छा, सुन्दर या श्रेष्ठ। अतः 'वेल्यु' शब्द की व्युत्पति मूलक अर्थ के आधार पर इच्छित व वांछित शब्दों को मूल्य कहते है। डॉ. राधाकमल मुखर्जी के अनुसार– "जो कुछ भी इच्छित, वांछित है, वही मूल्य है।"[1] मूल्य शब्द के इसी अर्थ में ग्रीक में "ऐक्सियोज", जर्मन में "वेट", फांसीसी में "वेलोर" शब्द प्रयुक्त होता है। हिन्दी साहित्य कोश में 'मूल्य' शब्द नीतिशास्त्र के 'वेल्यु' अर्थात मूल्य व प्रतिमान का समानार्थी है।

आज मूल्य शब्द दर्शनशास्त्र, राजनीति, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, धर्म व आध्यात्मिकता आदि से संबंधित होने के कारण किसी विशिष्ट अर्थ से संबंधित न होकर बहुमुखी हो गया है। मूल्य को विस्तृत संदर्भ में प्रयुक्त होने के कारण साहित्य में भी इसको अलग महत्व दिया गया है।

साहित्य में 'मूल्य' के अर्थ हेतु लोक कल्याण के साथ शिव और सुन्दर का भी समावेशन किया गया है। अर्थात 'मूल्य' साहित्य में एक विशिष्ट अर्थ लिए हुए है।

'मूल्य' की कोई शाश्वत मान्यता नहीं है। जब मूल्य व्यक्ति के अहम को आहत करते है तो उनके स्थान पर नए मूल्यों की रचना होती है। अतः युग के अनुरूप मूल्य का निर्धारण होता है।

4.1.1.1 मूल्य का कोशगत अर्थ –

डॉ. प्रभाकर माचवे के अनुसार– "मूल्य व प्रतिमान समानार्थी होते है। दोनों ही मानव निर्मित परख की कसौटियाँ है। जिनके द्वारा साहित्य का मूल्यांकन किया जाता है।"[2]

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार– "जो जीवन को अस्तित्व और गति प्रदान करे, वही मूल्य है।"[3]

'मानविकी परिभाषा कोश' में मूल्य से संबंधित कहा है कि– "सत्ता के अस्तित्व पक्ष और ज्ञान पक्ष के अलावा एक महत्व पक्ष भी है। 'मूल्य' शब्द इसी महत्व और गुरुत्व की ओर संकेत करता है। 'मूल्य' के संबंध में दो अलग–अलग दृष्टिकोण है। एक यह है कि मूल्य एक सामान्य (जनरल) और अमूर्त (ऐब्सट्रेक्ट) गुण है, जो वस्तुओं में निहित है। वस्तुएँ अपने आप में मूल्यवान या मूल्यहीन होती है। मूल्य किसी विशिष्ट प्रकार का हो यह आवश्यक नहीं है। दूसरा यह है कि प्रत्येक मूल्य जीवन के किसी विशेष क्षेत्र या पहलु से संबंधित है। किसी कार्य, तथ्य या सत्ता के विषय में हम कह सकते है कि उसका नैतिक मूल्य क्या है, कलात्मक मूल्य, आर्थिक मूल्य या सामाजिक मूल्य क्या है। लेकिन केवल यह कहना कि वस्तु में मूल्य है कोई अर्थ व्यक्त नहीं करता है।"[4] अतः कह सकते है कि मूल्य जीवन के विविध पक्षों से जुड़े हुए है। मूल्य की धारणा स्वयं में अस्पष्ट एवं अमूर्त है।

अर्थशास्त्र के परिपेक्ष्य में – "मूल्य वस्तु की उपयोगिता के रूप में व्यवहार या विनिमय की अवधारणा का प्रतीक है। विनिमय रूप में वह एक वस्तु का दूसरी वस्तु से आदान–प्रदान का सूचक है जो वर्तमान समय में मुद्रा के रूप में किया जाता है।"[5]

दर्शनशास्त्र के परिपेक्ष्य में – भारतीय दार्शनिकों द्वारा धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को मूल्य रूप में स्थापित करते हुए मोक्ष को प्रमुख मूल्य माना है।

नीतिशास्त्र के परिपेक्ष्य में – नीतिशास्त्र में मानव के नैतिक आचरण का विश्लेषण किया जाता है। अंजुलता गौड़ के अनुसार – "नैतिक मूल्यों से धर्म और चरित्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि व्यक्ति स्वभावतः ही धार्मिक है तो नैतिकता उसके जीवन में स्वतः ही उतरती चली आयेगी। धर्म, सत्य, त्याग, दया, दान, पुण्य, मानवता, पवित्रता, शांति आदि मनोवृत्तियां नैतिक मूल्यों के ही सहायक अंग है। अतः जहाँ ये मनोवृत्तियां अभिव्यक्त होगी वही सच्चे नैतिक मूल्यों की स्थापना होगी।"[6]

मनोविज्ञान के परिपेक्ष्य में – मनोविज्ञान अर्थात मन का विज्ञान। इसके अन्तर्गत मानव मन की क्रियाओं का चिंतन किया जाता है। मनोविज्ञान में मूल्य मानव की आवश्यकताएँ व इच्छा की पूर्ति हेतु प्रयोग में लाये जाते है।

समाजशास्त्र के परिपेक्ष्य में – समाजशास्त्र में सामाजिक परिपेक्ष्य का अध्ययन किया जाता है। समाज का विकास मूल्यों पर ही आधारित होता है। समाज द्वारा मूल्यों का निर्माण कर उनकी अभिव्यक्ति की जाती है। अतः कह सकते है कि 'मूल्य' शब्द ने अपने विकास की सीमाओं को बहुत विस्तृत रूप दे दिया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता हैं कि मूल्य एक धारणा हैं जिसका निर्धारण मानव की चेतना द्वारा होता है। मूल्य का स्वरूप अमूर्त होता हैं। इसलिए विद्वान लोग मानते हैं कि मूल्य एक ऐसी वस्तु हैं जिसको सम्पूर्णतः परिभाषित नहीं किया जा सकता। फिर भी इसके संबंध में इतना कह सकते हैं कि मुल्य एक सामाजिक अवधारणा हैं जो मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए उसे उच्च आदर्शो के मापदंडो पर प्रतिस्थापित करती हैं।

4.1.2. मूल्य की परिभाषा –

'मूल्य' की परिभाषा से संबंधित सभी विद्वानों का एक मत नहीं है। सभी ने मूल्यों को अपने–अपने ढंग से परिभाषित किया है। मूल्य से संबंधित भारतीय और पाश्चात्य मान्यताएँ अलग–अलग है। दोनों ने ही मूल्य के संबंध में अपने अलग–अलग मत दिये है।

भारतीय विद्वानों के मत – मूल्यों को परिभाषित करने में भारतीय विद्वानों ने अपने–अपने मत प्रस्तुत किए है जो इस प्रकार है–

रामधारी सिंह 'दिनकर' के अनुसार – "मूल्य वे मान्यताएँ है जिन्हें मार्गदर्शन ज्योति मानकर सभ्यता चलती रहती है और जिनकी उपेक्षा करने वालों को परम्परा, अनैतिक, उच्छंखृल या बागी कहते है।"[7]

डॉ. देवराज के अनुसार – "मूल्य वे होते है जिनकी मनुष्य कामना करता है। चरममूल्य उन वस्तुओं स्थितियों तथा व्यापारों अथवा उन विशिष्ट पहलुओं को कहते हैं जो मनुष्य की सार्वभौम संवेदना को आवेगात्मक अर्थवत्ता देते दिखाई देते है।"[8]

डॉ. वासुदेव शर्मा के अनुसार – "मूल्य एक जीवन जीने का दृष्टिकोण है।"[9]

बाबू गुलाबराय के अनुसार – "साधारणतया हम उसी वस्तु को मूल्यवान कहते है, जो सीधे तौर पर हमारे उपयोग में आ सके या हमारे लिए उपयोग की वस्तुओं को जुटा सके या भविष्य में जुटा सकने का सामर्थ्य रखे।"[10]

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार – "मूल्य उस गुण या समवाय का नाम है, जो किसी पदार्थो की अपने लिए प्रमाता के लिए अथवा परिवेश के लिए सार्थकता का निर्धारण करता है। पदार्थ का गुण होने के कारण मूल्य वस्तुपरक है, किन्तु प्रभातृ–सापेक्ष होने के कारण वह व्यक्तिपरक है।"[11]

डॉ. लक्ष्मीनारायण सिंघवी के अनुसारः– "मूल्य एक सद्‌गुण है, एक भाव है, एक सैद्धांतिक प्रस्तावना है, अवधारणा और जीवनशैली है किन्तु वह आचरण भी है, व्यवहार का आधार भी है, व्यक्ति और समाज के कर्तव्यों का निकष भी है।"[12]

प्रख्यात कवयित्री महादेवी वर्मा के अनुसारः– "वास्तव में थोड़े से सिद्धांत हैं जो मनुष्य बनाते है, हम उन्हीं को जीवन मूल्य कहते है।"[13]

डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के अनुसार – "मानव के संदर्भ में मूल्य का अर्थ एक ऐसी धारणा या दृष्टि है, जो मूलतः व्यक्ति के जीवन में पनपती है, किन्तु जिसका विकास समाज की ओर होता है, जो समाज में आचरण व्यवहार संबंधी मान्यताओं, विश्वासों और अभिलाषाओं को झेलती है, उनका मानदंड बनाती है।"[14]

जयशंकर प्रसाद के अनुसार – "मूल्य का अर्थ वह मान है, जिसके आधार पर हम किसी व्यक्ति, वस्तु, कृतित्व या किसी सूक्ष्म सत्ता (भाव, विचार आदि) के गुण, योग्यता व महत्व को आंकते है।"[15]

डॉ. आनन्दप्रकाश दीक्षित के अनुसार – मूल्यों को आदर्श रुप में मानते हुए कहा है– "मूल्य वह है जिनके पीछे हम चलना चाहे, उपलब्धि के योग्य समझे और उसे जीवन में महत्व दे सकें।"[16]

डॉ. कुमार विमल के अनुसार – "मानविकी के संदर्भ में मूल्य का अर्थ है जीवन दृष्टि या स्थापित वैचारिक ईकाई, जिसे हम सक्रिय नार्म भी कह सकते है।"[17]

रोहित मेहता के अनुसार – "मूल्य न तो मशीन द्वारा निर्मित कानून है। मूल्य तो जीवन के प्रति एक गुण है, एक अंतर्दृष्टि है, एक अवधारणा है, एक दृष्टिकोण है।"[18]

डॉ. जगदीश गुप्त के अनुसार – "बिना मानवीय संवेदनाओं को केन्द्र में रखे मूल्य की कल्पना नहीं की जा सकती।"[19]

डॉ. राधाकमल मुखर्जी के अनुसार – "मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाएँ तथा लक्ष्य हैं। जिसका अन्तरिकरण सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है जो की अतीतिक अधिमान्यताएँ, मान तथा अभिभावनाएँ बन जाती है।"[20]

विष्णुकांत शास्त्री के अनुसार – "वे मान्यताएँ, वे सिद्धांत, वे गुण जो अपनी अंतर्निहित अर्हता या क्षमता के कारण मनुष्य को अच्छा बनाती है, मानव मूल्य है।"[21]

डॉ. पूरनचंद टंडन के अनुसार – "जीवन में श्रेष्ठता, गुणवत्ता व महत्ता की दृष्टि से जो आवश्यक व उपयोगी है, वही मूल्य है।"[22]

डॉ. गोविंदचंद पाण्डेय के अनुसार – "मूल्य एक धारणा है, मूल्यबोध का अनिवार्य आधार व्यक्ति प्रतीति है, मूल्यबोध ज्ञानात्मक है, किन्तु यह ज्ञान मूलतः आत्मज्ञान है, मूल्य–चेतना ही मानवीय विकास की परम शक्तिशाली प्रेरक है। मूल्य वैयक्तिक जीवन में पनपते है और उनका विकास समाज में होता है।"[23]

डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत के अनुसार – "समाज में पाई जाने वाली मान्यताओं, विचारों एवं धारणाओं का नाम ही मूल्य है। मूल्य लोकमानस की वे लहरियाँ है जिनसे समाज अस्तित्ववान रहता है। मानव व्यक्तित्व को या सामाजिक अन्तः प्रक्रिया की व्यवस्था को संगठित रखने में मूल्य सहायक है। ये कुछ सामान्य आदर्शों, लक्ष्य या नीतियों को सामाजिक जीवन में, प्रतिष्ठित कर सामाजिक संघर्ष की भावनाओं अथवा सामाजिक जीवन की अनिश्चितताओं को कम करते है। मूल्य सामाजिक व्यवस्था के मुख्य उपादान है।"[24]

डॉ. धर्मपाल मैनी के अनुसार – "किसी देश, काल और परिस्थिति में जन समाज की उदात्त मान्यताएँ ही मानव मूल्य होते है।"[25]

पाश्चात्य विद्वानों के मत – मूल्य के संबंध में कई पाश्चात्य विद्वानों ने भी अपने–अपने मत प्रस्तुत किए है जो इस प्रकार है–

निकोलाई हार्टमन के अनुसार – "मूल्य वास्तव में जन्मजात होते है यद्यपि विज्ञान उसे देख नहीं सकता।"[26]

बुड्स के अनुसार – "मूल्य दैनिक जीवन में व्यवहार को नियंत्रित करने के सामान्य सिद्धांत है। मुल्य केवल मानव–व्यवहार की दिशा–निर्धारण ही नहीं करते, बल्कि अपने आप में आदर्श और उद्देश्य भी होते है। मूल्यों में केवल यहीं देखा जाता है की जो कुछ है वह सही है या गलत।"[27]

मुल्य चिंतक अर्बन की मूल्य संबंधी तीन प्रमुख परिभाषाएँ है–

प्रथम के अनुसार –"जो मानवीय इच्छा की तुष्टि करे वही मूल्य है।"

"Value is that which satisfies human desire"

द्वितीय के अनुसार –"मूल्य वह वस्तु है जो जीवन को सदैव विकास की ओर ले जाती है और सुरक्षित रखती है।"

"As anything that furthers or conserves life"

तृतीय के अनुसार– "मूल्य अंतिम रूप से तथा स्वलक्ष्य दृष्टि से मूल्यवान है, जो कि व्यक्तियों को विकास अथवा आत्मविकास या आत्मानुभूति की ओर ले जाती है।"

"...... that alone is ultimately and intrinsically valuable that leads to development of selves or to self realization"[28]

डब्ल्यु गोल्डस्मिथ के अनुसार – "मूल्य समाज में निश्चित प्रभाव खोजने के सांस्कृतिक माध्यम है।"[29]

युंग के अनुसार – "मूल्य वस्तुतः सत्य और महत्वपूर्ण के प्रति अनजान मान्यताएँ है। कुछ मूल्यों का समुदाय प्रत्येक संस्कृति के केन्द्र में ही निहित है। किसी भी संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषताएँ आधारभूत मूल्यों का प्रतिबिम्ब होती है।"[30]

रिचर्ड्स के अनुसार – "विभिन्न जटिल रूपों में भावना और इच्छा की संतुष्टि की क्षमता मूल्य है।"[31]

जॉनसन के अनुसार – "मूल्यों के माध्यम से सभी प्रकार की वस्तुओं का मूल्यांकन किया जा सकता है, फिर वह भावना, विचार, क्रिया, गुण, वस्तु, व्यक्ति, समूह, लक्ष्य या साधन कुछ भी हो।"[32]

मैक के अनुसार – "मूल्य ऐसी धारणाएँ हैं जो सही और महत्वपूर्ण के प्रति मुख्यतः सचेत होती है।"[33]

बोंगार्डस के अनुसार – "सभी मानवीय संबंध और व्यवहार मूल्य ही है।"[34]

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि मूल्य मानव के जीवन ऐसे लक्ष्य व दृष्टिकोण है जो मानव जीवन को सुशासित व अनुशासित करता है जिसमें मानव हित अन्तर्निहित होता है। ये मानवीय संस्कृति के वाहक होते है। मूल्य मानव जीवन के सभी पहलुओं जैसे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक आदि को उजागर करते है। मानव जीवन के विकास के अनुसार मूल्यों में भी परिवर्तन होता रहता है परन्तु मूल्यों के भीतर सर्वहित व समभाव की भावना सदैव बनी रहती है।

4.1.3 मूल्य चेतना का तात्पर्य –

मूल्य का संबंध मानव हित से है और मानव एक चेतना सम्पन्न प्राणी है। चेतना मानव जीवन में विवेक का कार्य करती है। अतः मूल्य निर्धारण में चेतना की अहम भूमिका है। मूल्य ज्ञान, इच्छा या भावना का नहीं अपितु समग्र चेतना का विषय है। मूल्यों का निर्माण समाज स्वीकृत धारणाओं पर आधारित है।

मूल्य और चेतना परस्पर अन्तर्सम्बन्धित है। चेतना के अभाव में मूल्यों का निर्माण व विकास नहीं हो सकता। चेतना मानव मस्तिष्क से उपजित वह भाव है, जो मानव को उचित व अनुचित का ज्ञान कराता है।

मूल्य मानव हित में समाज द्वारा प्रदत्त मान्यता व जीवन यापन की सुनिश्चित पद्धति है, जो मानव को निम्न स्तर से उच्च स्तर पर आसन करती है। यह मानव की चेतना के द्वारा ही संभव है। चेतना ही मूल्यों के माध्यम से आदर्श समाज की स्थापना करती है। अतः मूल्य निर्धारण में चेतना मूल कारण है इसी हेतु मूल्य और चेतना का परस्पर घनिष्ठ संबंध है।

4.1.4 मूल्यों की प्रकृति –

मानव मूल्यों के स्वरूप की प्रेरणा है और मूल्य मानव के दवारा समस्त राष्ट्र व समाज के कल्याण के लिए उत्तरदायी है। अतः मूल्यों की प्रकृति व्यक्ति सापेक्षता को समादृत करते हुए सार्वभौमिक होती है तथा समयानुसार इसमें परिवर्तन होता रहता है। युग के अनुकूल जो मूल्य अपना महत्व खो देते है उनका परिष्कार हो जाता है और उनके स्थान पर नवीन मूल्यों को प्रतिष्ठित कर दिया जाता है।

मूल्य समाज व राष्ट्र के हित व विकास से संबंधित होने के कारण मूल्यों का महत्व व सार्थकता भी समाज सापेक्ष होती है। समाज जिन मूल्यों को निरर्थक मानता है। वह अपना अस्तित्व खो बैठते है तथा उन के स्थान पर समाजोपयोगी नव मूल्यों का आगमन होता है। अतः मूल्य व्यापक व सामाजिक धरातल पर आसीन होते है। मूल्य मानव की भावनाओं व विकास से संबंधित होते है। अतः मानवीय भावनाओं व आकांक्षाओं के अनुरूप मूल्यों का उद्धभव होता है।

4.1.5 मूल्यों का निर्माण –

सामाजिक प्रक्रिया के तहत मूल्यों का निर्माण होता है। समाज के विकास के साथ ही मूल्यों के निर्माण की प्रक्रिया का शुभारम्भ हुआ है। यह प्रक्रिया समाज के साथ अनवरत चलने वाली है। डॉ. पानेरी के अनुसार– "जिस प्रकार वट–वृक्ष की एक से अनेक जड़े फैलती है, पुरानी जड़े नष्ट होती रहती है और नई आगे से आगे विकसित होती रहती है। उसी प्रकार मूल्य की प्रक्रिया मूल्य निर्माण, मूल्य परिवर्तन, मूल्य अपकर्ष, मूल्य उत्कर्ष और नव मूल्यों का प्रादुर्भाव आदि क्रम में निरन्तर गतिमान होती रहती है।"[35] मूल्य समाज व मानव कल्याण की भावना से ओतप्रोत होते है। इस हेतु मूल्य मानव के उतरोत्तर विकास व उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा के सोपान है।

मूल्यों के निर्माण में कई तत्वों का योगदान है। डॉ राधाकमल मुखर्जी के अनुसार– "मनुष्य को मूल्य अपने जीवन से अपने पर्यावरण से समाज और संस्कृति से ही नहीं अपितु मानव अस्तित्व व अनुभव से भी प्राप्त होते है।"[36] प्राचीन समय से ही भारतीय समाज पर धर्म व आध्यात्मिकता का प्रभाव था जिसके फलस्वरूप भारतीय मनीषियों ने मूल्य का मूल स्त्रोत मानव से परे अलौकिक सत्ता को माना था। जिसके कारण धर्म, रहस्यवाद, आदर्शवाद, नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों का प्रारम्भ हुआ।

सभ्यता व संस्कृति भी मूल्यों के निर्माण में अपनी भूमिका निभाते है। मूल्य का संबंध सीधे संस्कृति से होता है और सभ्यता के साथ इनका विकास संस्कृति के द्वारा ही होता है। दिनकरजी ने लिखा है– "असल में, संस्कृति जिन्दगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है जिसमें हम जन्म लेते है।"[37] अतः कह सकते है कि संस्कृति और सभ्यता के विकास के साथ मूल्यों में परिवर्तन और नयें मूल्यों का प्रादुर्भाव होता है।

दर्शन व नीति ने समय–समय पर मूल्यों के निर्माण में अपना योगदान दिया है। वैदिक दर्शन, बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन आदि ने मानव जीवन को पूर्णतः प्रभावित किया है। इन दर्शनों के द्वारा तप, त्याग, अहिंसा, आस्था, उल्लास जैसे मूल्य स्थापित हुए। कई पाश्चात्य दार्शनिकों जैसे सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, मार्क्स आदि के द्वारा स्थापित दार्शनिक चिंतन ने मूल्यों की भूमिका में बड़ा बदलाव लाया है। नीति का कार्य सदैव पथप्रदर्शन करना होता है। नीति समाज को विकास के उचित राह पर अग्रसर कर मनुष्य को उचित–अनुचित, करणीय–अकरणीय के बारे में सचेत करती है। मनुष्य के व्यवहार में पथ प्रदर्शन की भूमिका निभाते हुए दर्शन व नीति मूल्यों का निर्माण व निर्धारण करती है।

वर्तमान समय में शिक्षा व समाजीकरण की प्रक्रिया को मूल्य के निर्माण में प्रमुख कारक माना है। शिक्षा व्यक्ति के जीवन में सदैव गतिमान रहने वाली प्रक्रिया है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य का सर्वांगीण विकास होता है। शिक्षा मनुष्य को अतीत व वर्तमान में निहित मूल्यों का विश्लेषण कर मूल्य के प्रति अपनी नवीन दृष्टि विकसित करने में सहयोगी बनती है। शिक्षा के द्वारा विभिन्न समाज व संस्कृतियों को परस्पर अन्तर्सम्बन्धित करने का कार्य किया जाता है। आधुनिक युग में मूल्यों के निर्माण में समाजीकरण के तहत, सामाजिक क्रिया–कलाप, पारिवारिक पुष्ठभूमि व शिक्षण–संस्थाएँ आदि की विशेष भूमिका है। डॉ रमेश कहते है कि– "बदले हुए सामाजिक संबंधों के फलस्वरूप जब विराट जनता में नए जीवन–मान और जीवनादर्शों को स्थापित करने की उदिग्नता होती है और जब उन्हीं के प्रतिनिधिस्वरूप मानवतावादी दार्शनिक, कलाकार, धर्मगुरु या अन्वेषक समाज के उपेक्षित

अथवा नए तत्वों की ओर ध्यान देते है और मानव समाज की आवश्यकताओं को समझते है तो नए मूल्यों की सृष्टि होती है।"[38] संक्षेप में कह सकते है कि शिक्षा और सामाजीकरण मूल्यों के निर्माण में अहम भूमिका निभाते है। मूल्य निर्माण की प्रक्रिया अनन्त व शाश्वत है। मानव जीवन के साथ–साथ इनका उदभव व निर्माण प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। अतः यदि इनका अंत हो गया तो मानव सभ्यता भी नष्ट हो जायेगी।

4.1.6 मूल्य स्वरूप व विकास –

मानव को जीवन की सही दिशा की प्राप्ति हेतु कुछ उपयोगी नियम बनाए गए है, जिसे मूल्य कहा गया है। मूल्यों के कारण मानव का एक अलग अस्तित्व विद्यमान है। प्राचीन काल से ही समाज में कई प्रकार के मूल्य का गठन हुआ है। मूल्य अमूर्त है। उन्हें शब्दों के झाल में बांधना दुष्कर है। अतः कह सकते है कि मूल्य एक ऐसी वस्तु है जिसको पूरी तरह से परिभाषित नहीं किया जा सकता है।

प्राचीन काल से मूल्यों के स्वरूप में विविधता विद्यमान रही है। भारतीय दर्शन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को जीवन में महत्व प्रदान किया गया है। ये जीवन के ऐसे मूल्य है जो शाश्वत रूप से प्रत्येक युग में विद्यमान रहे है।

मूल्य का स्वरूप वैयक्तिता पर निर्भर रहा है। क्योंकि मानव ही वह ईकाई है जिससे समाज व विश्व की समस्त विचारधाराओं का प्रादुर्भाव हुआ है। मानव हित व मानव विकास के रूप में जिन दृष्टिकोणों को स्वीकारा जाता है वह मानवीय मूल्य की पदवी पर आसीन रहते है।

देशकाल के अनुसार मूल्यों में परिवर्तन व नव विचारधाराओं का पल्लवन होता रहा है। समय के अनुरूप पुरातन मूल्यों का अवमूल्यन व नवीन मूल्यों का उदभव हुआ है। उदा० बुद्ध के आगमन और उनके सरल विचारों से प्रेरित हो वर्णभेद व अंधश्रृद्धा का पतन हुआ। इस्लाम के आगमन से एकेश्वरवाद की स्थापना हुई तथा मनुष्य के आचार–विचार, रहन–सहन और खानपान में परिवर्तन आया। भक्तिकाल के समय भक्ति व ज्ञान दोनों मार्गों का प्रचलन बढ़ा। उन्नीसवीं सदी में मार्क्स व फ्राइड़ के विचारधाराओं ने ईश्वर को नकार 'स्व' परिकल्पना स्थापित की।

स्वतंत्रता पश्चात भारत की स्थिति में आमूल–मूल परिवर्तन आया। फलस्वरूप मूल्य के स्वरूप में व्यापक स्तर पर बदलाव हुआ। राजनीतिक भावनाओं के पल्लवन के कारण प्राचीन मूल्य नदारद हो गये। व्यक्ति गलत व आसान राह के माध्यम से अपने विकास की ओर अग्रसर होने लगा। इस उतार–चढ़ाव के कारण आर्थिक मूल्य वैयक्तिक ईकाई पर

सिमट गये। इस कारण एकाकीपन, परिवार विखण्डन, अजनबीपन, दांपत्य जीवन में अलगाव, रिश्तों में टुटन जैसे मूल्य जीवन व साहित्य दोनों में प्रचलित हो गये।

इस प्रकार यह परिलक्षित होता है कि प्राचीन काल से समकालीन युग तक मूल्यों के स्वरूप में विविधता दिखाई देती है और समय के अनुरूप मूल्यों में परिवर्तन होता रहता है।

4.2 मूल्य की अवधारणा –

4.2.1 मूल्य अवधारणा संबंधी भारतीय दृष्टिकोण –

भारतीय दर्शन की अपनी विशेषता है। भारतीय दर्शन ने लौकिक व पारलौकिक दोनों पक्षों के महत्व को स्वीकार करते हुए मनुष्य के सर्वांगीण विकास के दृष्टिकोण को सामने रखा है। भारतीय समीक्षकों ने मानव जीवन से संबंधित समस्याओं के बारे अपने अनुभव के आधार चिंतन कर मूल्य संबंधी विचार रखे है।

प्राचीन काल से ही मूल्य संबंधी विचारधाराओं पर दृष्टिपात किया गया है। मूल्य से संबंधित भारतीय अवधारणा बहुत प्राचीन है जिसके तहत भारतीय मनीषियों, ऋषियों व सुधारकों ने अज्ञात सत्ता को स्वीकारते हुए मानव जीवन के लिए योगवादी एवं भोगवादी दोनों विचारधारा को आवश्यक माना है। जिसके परिणामतः भारतीय दर्शन में मानव जीवन के संचालन हेतु चारों पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की अवधारणा अस्तित्व में आई है तथा भारतीय संस्कृति का आधार स्तम्भ बन गई। पुरुषार्थ का शाब्दिक अर्थ है– अपने अभीष्ट को प्राप्त करना। पुरुषार्थ का मूल अर्थ– "उन प्रयासों से है जिन्हें जीवन के उद्देश्य पूर्ति हेतु किया जाता है। हिंदु जीवन दर्शन में पुरुषार्थ का रूढ़ अर्थ मानव जीवन के उद्देश्यों से संबंधित है। भारतीय दार्शनिकों ने मानव जीवन के चार उद्देश्य अर्थात मूल्य स्वीकार किये है– "धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।" मोक्ष को जीवन का अंतिम साध्य व धर्म, अर्थ व काम को मोक्ष प्राप्ति के साधन के रूप में स्वीकारा है। इसी के अनुरूप भागीरथ बड़ोले ने कहा है– "मानव जीवन का उद्देश्य इन्हीं पुरुषार्थों या मूल्यों को प्राप्त करना है, यही जीवन की सार्थकता है। इसीलिए मनुष्य जीवन के विकास के लिए पुरुषार्थ आवश्यक मूल्य है।" [39] प्राचीन काल से ही मूल्य संबंधी यह धारणाएँ विकसित व विस्तारित हो रही है। मोहिनी शर्मा के विचारानुसार– "भारतीय दर्शन अनुसार शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा इन चार तत्वों का समन्वय ही मनुष्य है। शारीरिक विकास हेतु अर्थ, मानसिक विकास के लिए काम, बौद्धिक विकास के लिए धर्म तथा आध्यात्मिक विकास के लिए मोक्ष– इन चारों को पुरुषार्थ व लक्ष्य के रूप में स्वीकारा गया है।"[40]

4.2.1.1 धर्म –

भारतीय संस्कृति ने सदैव मूल्यों के महत्व को स्वीकार किया है। भारतीय दर्शन में सर्वप्रथम मूल्यों का विवेचन धर्म के संदर्भ में हुआ है। चारों पुरुषार्थों में सबसे प्रथम व श्रेष्ठ मूल्य है– धर्म। धर्म के संदर्भ में डॉ धर्मपाल मैनी का विचार है– "भारतीय चिंतन में मूल्य शब्द नहीं है। हमारे यहाँ धर्म शब्द है। शिष्टाचार, अहिंसा, परहित, सत्य आदि धर्म कहे गये है। अब इन्हें ही मूल्य कहा जाता है।"[41]

धर्म शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के धृ धातु में मन प्रत्यय लगाने से हुई। प्रत्येक क्षेत्र में धर्म को अनेक अर्थ दिये है। आध्यात्मिक क्षेत्र में धर्म से तात्पर्य ईश्वर के प्रति उत्पन्न मन में श्रद्धा व विश्वास से है जिसके आधार पर मनुष्य कर्म करता है। सामाजिक क्षेत्र में धर्म से अभिप्राय उन नियमों व विधियों से है जिसके द्वारा समाज का अस्तित्व व विकास आधार लिए हुए है। सामान्य रूप में धर्म से तात्पर्य धारण करने से है।

धर्म से संबंधित भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों का अपना अलग–अलग दृष्टिकोण है जिसके आधार पर उन्होंने धर्म की व्याख्या की है।

राधाकृष्णन के अनुसार– "जिन सिद्धांतो के अनुसार हम अपना दैनिक जीवन व्यतीत करते है जिसके द्वारा हमारे सामाजिक संबंधों की स्थापना होती है वही धर्म है।"[42]

स्वामी विवेकानंद ने धर्म की व्याख्या करते हुए कहा है कि– "धर्म अनुभूति की वस्तु है। मुख की बात मतवाद अथवा युक्तिमुलक कल्पना नहीं, चाहे वह कितनी ही सुंदर हो आत्मा की ब्रह्म स्वरूपता को जान लेना, तदण हो जाना, उसका साक्षात्कार करना यही धर्म हैं।"[43]

फिल्वेटे ने धर्म की महत्ता प्रकट करते हुए लिखा है– "वस्तुतः धर्म एक विशाल गति है। सचमुच यह मानवीय जीवन और मानवीय इतिहास के समानान्तर चलता है। कला कौशल, साहित्य विज्ञान, दर्शनशास्त्र पर उनकी प्रत्येक अवस्था में धर्म का प्रभाव देखा गया है।"[44]

हुकुंचन्द ने धर्म की व्यापकता को स्वीकार करते हुए लिखा है– "वस्तुत, धर्म जीवन का ऐसा मूल्य है जिसमें सभी मूल्य समाविष्ट किए जा सकते है।"[45]

मैलिनोवस्की ने लिखा है कि– "धर्म क्रिया की एक विधि है और साथ ही विश्वासों की एक अवस्था भी। धर्म एक समाजशास्त्रीय घटना के साथ एक व्यक्तिगत अनुभव भी है।"

मैथ्यु अरनाल के अनुसार– "धर्म महानतम मानवीय अनुभव की आवाज है।

डॉ. आत्रेय ने धर्म की जीवन सम्मत व्याख्या की है। जिसके अनुसार – "धर्म उन नियमों को कहते है जिनके पालन से व्यक्ति और समाज दोनों की उन्नति और कल्याण है।

जिन पर चलने से व्यक्ति को सुख–शांति और समाज में सांमजस्य और शांति स्थापित हो।"[46]

अतः स्पष्ट है कि धर्म से अभिप्राय मानव का समाज के प्रति नैतिक कर्तव्य से है। धर्म का उद्देश्य मानव को सही मार्ग की ओर अग्रसर कर सम्पूर्ण सृष्टि के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए उसके हित व उन्नति की राह प्रशस्त करे। समस्त समाज व विश्व कल्याण हेतु शांति को स्थापित करे।

4.2.1.2 अर्थ –

भारतीय पुरुषार्थ में धर्म के बाद अर्थ के महत्व को स्वीकार किया गया हैं। अर्थ का सामान्य अर्थ भौतिक सुख की पूर्ति हेतु साधन से है। परन्तु आज अर्थ का क्षेत्र व्यापक हो गया है क्योंकि धार्मिक लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु अर्थ सर्वोपरि है। अतः जीवन मूल्य के संदर्भ में अर्थ को विद्वानों ने भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

ऋग्वेद के आधार पर अर्थ से अभिप्राय उन भौतिक वस्तुओं से है जिनकी गृहस्थी चलाने, परिवार बसाने तथा धार्मिक कृत्यों का संपादन करने में आवश्यकता होती है। अर्थ का एक अर्थ उस वस्तु अथवा उन वस्तुओं से है, जिनकी इन्द्रियों द्वारा अनुभूति की जा सके।

नगेन्द्रनाथ वसु ने अर्थ से तात्पर्य 'प्रयोजन' से माना है तथा रामचंद वर्मा ने अर्थ का संबंध पाँचों इन्द्रियों से जाना है।

डॉ. गोपाल ने अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा है कि– "अर्थ शब्द धन, सम्पति या मुद्रा का पर्यायवाची नहीं है। यह नैतिक सुखों की सभी आवश्यकताओं और साधनों का द्योतक है। अर्थ मनुष्य की ऐश्वर्य प्राप्त करने की इच्छा के लिए प्रयुक्त हुआ है।"[47]

अतः कहा जा सकता है कि जीवन में अर्थ अन्य मूल्यों के समान ही महत्वपूर्ण है। धर्म, अर्थ और काम आपस में अंर्तसंबंधित है और सभी का समान महत्व है।

महाभारत में विभिन्न पात्रों द्वारा अर्थ के महत्व को प्रतिपादित किया गया है। अर्थ के संदर्भ में कहा गया है कि अर्थ ही धर्म और काम का आधार हैं बिना धर्म के न मानव सांसरिक सुखों का उपभोग कर सकता है न धर्म के कार्य, समाजसेवा व परोपकार आदि कर सकता है। अतः जीवन में अर्थ का उपार्जन करना ही सर्वोत्तम है। अर्जुन ने तो यहाँ तक कहाँ है कि यह संसार कर्मभूमि है। यहाँ जीविका ही प्रधान है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मानव जीवन में अर्थ का अपना एक विशिष्ट स्थान है। मानव के लिए धन अपरिहार्य है। धन के बिना मानव का कोई कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता है। अतः मानव द्वारा धन को जीवन की सार्थकता समझना एक निंदनीय कृत्य

है। वस्तुतः व्यक्ति को उचित मार्ग द्वारा धन का संग्रह करना चाहिए और संग्रहित धन का प्रयोग समाज व देश कल्याण हेतु प्रयोगकर मानवीयता की पदवी पर आसन रहना चाहिए।

4.2.1.3 काम –

भारतीय चिंतन पद्धति में पुरुषार्थों की श्रेणी में तीसरे स्थान पर 'काम' आसीन है। 'काम' एक ऐसा पुरुषार्थ है, जिसके संबंध में विद्वानों में एकमत न होकर मतभेद बना रहा है। 'काम' के संबंध कई विद्वानों ने अपने दृष्टिकोण को रखते हुए नई–नई विचारधाराए बनाई है। काम के संबंध में एक संकुचित दृष्टिकोण को व्यक्त करने वाली भोगवादी विचारधारा अस्तित्व में आई जिसने काम के अर्थ में यौन तुष्टि व मानवीय सुख की प्राप्ति तक ही उसे सीमित कर दिया और मानव द्वारा 'काम' को अपरिहार्य रूप से स्वीकार किया। वहीं एक दूसरी विचारधारा है जिसे योगवादी विचारधारा कहा गया। इस विचारधारा ने 'काम' पुरुषार्थ मूल्य को नकारते हुए उसे 'पाप' के पथ का राही मात्र माना है। इन दोनों के विपरीत एक तीसरी विचारधारा अस्तित्व में आई जिसने 'काम' को संकुचित क्षेत्र से बाहर निकाल एक व्यापक धरातल प्रदान किया है। इस विचारधारा ने 'काम' के द्वारा मानव की सभी कामनाओं व इच्छाओं को समाहित किया है जिसके द्वारा मनुष्य को इन्द्रिय सुख की प्राप्ति हो।

'काम' को मात्र "यौन संतुष्टि" से परिभाषित करने से आशय उसके स्वरूप व क्षेत्र को संकुचन के दायरे में सीमित करना है। यह धारणा 'काम' जीवन मूल्य के अर्थ में समीचीन प्रतीत नहीं होती है। सामान्यतः 'काम' को दो अर्थो में परिभाषित किया जा सकता है। प्रथम इसके संकुचित अर्थ के अनुसार 'काम' से अभिप्राय मानव की यौन सुख की प्राप्ति से है तथा व्यापक रूप में काम से अभिप्राय मनुष्य की मानसिक व रागात्मक वृत्ति से है जिसके द्वारा वह सभी आकांक्षाओं की पूर्ति कर सके।

अतः कह सकते है की भारतीय चिंतकों व ऋषियों ने 'काम' को पुरुषार्थ रूप में स्थान दिलाने हेतु इसके प्रति व्यापक दृष्टिकोण को ही स्थान दिया है। इसी हेतु भारतीय शास्त्रों में 'काम' के स्वरूप तथा उपयोगिता पर विस्तार से वर्णन किया है। वैदिक दर्शन में भी 'काम' के महत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है– 'काम' ही सृष्टि निर्माण का मूल है। 'काम' वासना मानव की स्वाभाविक प्रवृति है। श्रद्धा, भय, निद्रा, क्षुधा आदि प्रवृतियाँ मानव के भीतर स्वभावतः समाहित है वैसे ही कामवृति भी देवी प्रवृत्त वृत्ति के रूप में मानव के भीतर निवास करती है।

प्रो. कर्नल ने 'काम' को स्पष्ट करते हुए लिखा है– "सामान्यतः काम का अभिप्राय उस आनंदयुक्त अनुभूति से है, जो मन के आश्रय में पाँच ज्ञानेन्द्रियों दृष्टि, श्रवण, स्पर्श, स्वाद और सुगंध के द्वारा होता है।"[48]

डॉ. कपाड़िया ने 'काम' वृत्ति को इस प्रकार स्पष्ट किया है– 'काम मानव के सहज स्वभाव और भावुक जीवन को व्यक्त करता है तथा उसकी काम भावना और सौन्दर्य प्रियता की वृत्ति की तुष्टि की ओर निर्दिष्ट करता है।"[49]

आचार्य वात्सायन ने 'काम' को आत्मा के सुख से संबंधित करते हुए लिखा है– "कान, त्वचा, नेत्र, जिह्वा और नासिक ये पाँच कामेन्द्रियां जब शब्द–स्पर्श, रूप, रस और गंध इन पाँच विषयों से संयुक्त होती है। तब अधिष्ठत मन को जो सुखानुभूति होती है, उसी का नाम 'काम' है।'

अतः स्पष्ट है कि 'काम' मूल्य निरर्थक न होकर सार्थक मूल्य है जो मानव के जीवन कल्याण हेतु आवश्यक है। कामवृत्ति धर्म व अर्थ के साथ मिलकर मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति की ओर प्रेषित करती है। अन्ततः 'कामवृत्ति' मनुष्य की भौतिक उन्नति के साथ आध्यात्मिक जीवन के लिए प्रेरणा स्वरूप है।

4.2.1.4 मोक्ष –

भारतीय दर्शन में अंतिम व सर्वोच्च मूल्य है– मोक्ष। मोक्ष भारतीय दर्शन के निर्माता की सर्वोच्च कल्पना है। मानव जीवन के सामाजिक विकास व समृद्धि हेतु धर्म, अर्थ व काम की परिकल्पना आवश्यक मानी गई है। उसी प्रकार मानव जीवन के आध्यात्मिक उन्नति व विकास हेतु मोक्ष की परिकल्पना को स्वीकार किया है। इस हेतु प्रथम तीन धर्म, अर्थ व काम को साधनमूलक व मोक्ष को साध्यमुल्क मूल्य स्वीकार किया है।

मोक्ष शब्द का सामान्य अर्थ है– मुक्ति, निर्वाण, उद्धार, विमोचन, आदि। किन्तु व्यापक रूप में मोक्ष से आशय है– आत्मा साक्षात्कार, आत्मा की स्वतंत्र सत्ता। अर्थात कहा जा सकता है कि– "मोक्ष वह अवस्था है जिसमें आत्मा सांसरिक बंधनों से मुक्त होकर ईश्वर के साथ एकाकार होती है।

धर्म शास्त्रों के अनुसार – "ईश्वर अंश जीव अविनाशी' अर्थात जीव या आत्मा ईश्वर का ही अंश है तथा वह अविनाशी अर्थात विनाश से मुक्त है। जब जीव शरीर धारणकर सांसरिक जीवन में प्रवेश करता है और जन्म–मरण के चक्रों से गुजरते हुए परमात्मा में लीन होना चाहता है तो इस चक्र से मुक्ति को मोक्ष की संज्ञा दी गई। इस मंतव्य को स्पष्ट करते हुए गौरीशंकर भट्ट ने लिखा है– 'मोक्ष वह अवस्था है जहाँ जीव एक ओर संसार के बंधनों से मुक्त हो जाता है और इसी ओर वह ईश्वर में लीन हो जाता है।

मोक्ष वह अवस्था है जहाँ जीव के लिए कर्म की आवश्यकता नहीं रह जाती है। मृत्यु–मोक्ष का या मोक्ष की ओर अग्रसर होने का एक माध्यम है। वैयक्तिक जीवन के मोक्ष धर्म, अर्थ और काम का स्वाभाविक परिणाम है। धर्म, अर्थ और काम जीव को समाज से बांधते है, लेकिन मोक्ष इनसे छुटकारा दिलाता है। अर्थ और काम स्वाभाविक है लेकिन मोक्ष वैयक्तिक।"

अतः स्पष्ट है कि मोक्ष की अवधारणा आध्यात्मिक एवं रहस्यात्मक है। मानव जीवन का उद्देश्य कर्म करते हुए मानव से देवत्व की ओर अग्रसर होना है क्योंकि भारतीयों का जीवन भोग योग का नहीं योग व कर्तव्यों का जीवन है। अतः कहाँ जा सकता है कि चारों पुरुषार्थों को ही भारतीय चिंतन का मूल स्तम्भ माना गया है तथा मोक्ष को सर्वोपरि मूल्य स्वीकारा गया है।

4.2.2 मूल्य अवधारणा संबंधी पाश्चात्य दृष्टिकोण –

भारतीय चिंतकों के समान ही पाश्चात्य विचारकों ने भी मूल्य की अवधारणा से संबंधित अपना दृष्टिकोण रखते हुए मूल्यों की अपेक्षित व्याख्या प्रस्तुत की है। पाश्चात्य मूल्य चिंतन के प्रति विद्वानों में एक मत नहीं है और न ही उन्होंने मूल्यों के स्वरूप को सुनियोजित रूप से स्पष्ट किया है। जैसा की भारतीय दृष्टिकोण में हुआ है। जिस प्रकार भारतीय दार्शनिकों ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की परिकल्पना को जीवन का मुख्य ध्येय प्रतिपादित करते हुए मानव के विकास व मोक्ष का पथ प्रशस्त किया है। उस प्रकार पाश्चात्य दार्शनिकों ने मूल रूप से भोगवादी दर्शन को ही स्वीकारा है। पश्चिमी संदर्भ में व्यावहारिक धरातल पर मूल्यों की व्याख्या प्रस्तुत की है।

पाश्चात्य विचारकों ने मूल्यों के स्वरूप पर अपना दृष्टिकोण भारतीय दार्शनिकों से भिन्न स्वरूप में प्रस्तुत किया है। पाश्चात्य विचारकों ने मूल्यों का प्रतिपादन मानव जीवन के सम्पूर्ण विकास व उन्नति के अनुरूप न करके मात्र भौतिक सुख की प्राप्ति तक ही रखा है। किन्तु अठारवीं शताब्दी के पश्चात के विचारकों ने जीवन के दोनों पक्षों आंतरिक व बाह्य के विकास के रूप में मूल्यों को व्याख्यायित किया है।

पाश्चात्य दार्शनिकों को अपनी मूल्य संबंधित मान्यताओं व अवधारणाओं के अनुसार तीन श्रेणियों में बाट सकते है।

प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत इलियट, टोयनबी आदि विचारक आते है। उन विचारकों ने विज्ञान के स्थान पर धर्म के आधार मूल्यों को प्रतिष्ठित किया है।

द्वितीय श्रेणी के अन्तर्गत सार्त्र, बर्टेंड रसल और हक्सले आदि विचारक आते है। उन विचारकों ने मानवातावादी दृष्टिकोण को अपनाया है। इन्होंने विज्ञान के द्वारा मानव के विकास को जोड़ धर्म की सत्ता को अस्वीकार किया है।

तृतीय श्रेणी के अन्तर्गत लारेंस, हेमिंग्वे व कामू आदि विचारक आते है। इन विचारकों ने धर्म व विज्ञान दोनों को अस्वीकार कर भावना से संबंधित हो प्राकृतिक व साधारण जीवन की कल्पना को स्वीकारा है।

अतः स्पष्ट है कि पाश्चात्य चिंतकों ने भी मूल्यों के स्वरूप व धारणाओं से संबंधित विभिन्न दृष्टिकोण व विचारों को प्रस्तुत किया है।

निष्कर्षत –

वर्तमान युग में भारतीय व पाश्चात्य दोनों दृष्टिकोणों के अनुरूप मूल्यों के स्वरूप में व्यापक बदलाव आया है। मूल्य की व्यापकता को देखते हुए कहा जा सकता है कि मूल्यों के संबंध में किसी एक दृष्टिकोण को स्थापित कर उसके महत्व का आकलन दुष्कर कार्य है। वैश्वीकरण के इस दौर में मूल्य के क्षेत्र में भारतीय व पाश्चात्य दोनों विचारधाराओं को समान महत्व देते हुए विचारों का आदान–प्रदान हो रहा है। पाश्चात्य संस्कृति भारतीय संस्कृति से प्रभावित हो योग व अध्यात्म की ओर अग्रसर हो रही है। वही भारतीय संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति की देन आधुनिकतावाद के पथ पर अग्रसर हो रही है।

4.2.3 मूल्यों का वर्गीकरण –

'मूल्य' शब्द अपने आप में बहुत व्यापकता लिए हुए है। इसके कारण 'मूल्य' शब्द के अर्थ व स्वरूप के कई क्षेत्रों में भिन्नता होने के कारण इसको एक सर्वमान्य रूप से परिभाषित करना दुष्कर कार्य है। मूल्यों का वर्गीकरण भी मूल रूप से मूल्य के अर्थ व स्वरूप से सम्बन्धित है। अर्थ व स्वरूप की जटिलता के कारण मूल्यों के वर्गीकरण में भी भिन्नता परिलक्षित होती है। दृष्टिकोण में भिन्नता के अलावा आकांक्षाओं, कार्य–कारण व परिवेशगत भिन्नता के कारण भी मूल्यों के वर्गीकरण में भेद पाया जाता है। मूल्य समाज के विभिन्न क्षेत्रों से अन्तर्सम्बन्धित है। विभिन्न विद्वानों ने मूल्यों को उसके महत्व, विषय क्षेत्र, लक्षण, लक्ष्य व संरचना के आधार वर्गीकृत करने का प्रयास किया है। मूल्यों की व्यापकता के कारण किसी भी वर्गीकरण को पूर्णतः वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता है।

4.2.3.1 पाश्चात्य विद्वानों का दृष्टिकोण –

पाश्चात्य विचारक में प्रसिद्ध नीतिशास्त्री जे. एस. मेंकजी ने मूल्यों को दो भागों में बाटाँ है– साधन मूल्य और साध्य मूल्य। साधन मूल्य वह वस्तु है जो उद्देश्य प्राप्ति हेतु किसी का साधन मात्र होती हैं। साध्य मूल्य वह है जो किसी का साधन मात्र न होकर स्वयं

मूल ईकाई होती हैं। मूल्य की चर्चा करते हुए एन. जी. लोस्टी ने भी मूल्यों को दो भागों में बाटा है– निरपेक्ष साध्य मूल्य तथा सापेक्ष साध्य मूल्य।

पाश्चात्य विद्वान अर्बन ने मूल्यों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है जो इस प्रकार है–

अर्बन के इस विभाजन प्रक्रिया की व्याख्या करते हुए डॉ. रमेश देशमुख कहते है– "शरीर विषयक जीवन मूल्यों के अन्तगर्त वे मूल्य आते है, जो व्यक्ति के अपने अस्तित्व के लिए आवश्यक है। व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताएँ, रुचि और मनोरंजन की सुविधाओं को इस वर्ग में रखा जा सकता है। दुसरी ओर सामाजिक मूल्य समाज की व्यवस्था के लिए अनिवार्य है। व्यक्ति की सच्चरित्रता एक प्रकार से समाज के प्रति उसकी मूल्य निष्ठा ही है। तीसरे वर्ग में आध्यात्मिक मूल्य आते है। व्यक्ति केवल शारीरिक और भौतिक संतुष्टि तक सीमित नहीं रह सकता। उसका सौन्दर्य बोध और धार्मिक तथा ईश्वरपरक चिंतन उसके व्यक्तित्व के विकास की अगली सीढ़ी है।"[50]

स्टेस ने भी मूल्यों को दो भागों मे बाँटा है– आत्मनिष्ठ मूल्य और वस्तुनिष्ठ मूल्य। "आत्मनिष्ठ मूल्य वह है जो पूर्णतः मानवीय संवेदनाओं, आकांक्षाओं व मनोदशाओं पर निर्भर होता है तथा वस्तुनिष्ठ मूल्य वह है जो मानव के क्रिया कलाप, इच्छाओं व संवेदनाओं पर निर्भर नहीं होता है।"[51]

बर्मन ने शारीरिक व आर्थिक पक्ष को महत्व देते हुए मूल्यों को दो श्रेणियों में विभाजित किया है। जो इस प्रकार है–

(1) जैविक मूल्य –

- शारीरिक मूल्य
- आर्थिक मूल्य
- मनोरंजनात्मक मूल्य

(2) अतिजैविक मूल्य –

- सामाजिक मूल्य
- चारित्रिक मूल्य
- आध्यात्मिक मूल्य
- सौन्दर्यात्मक मूल्य
- बौद्धिक मूल्य
- धार्मिक मूल्य

एबर्ट ने मूल्यों को दो भागों में विभक्त किया है– निम्नमूल्य तथा उच्चतर मूल्य।

(1) निम्न मूल्य –

- मनोरंजनपरक मूल्य
- शारीरिक मूल्य
- सामाजिक मूल्य
- श्रममूलक मूल्य

(2) उच्चतर मूल्यः–

- बौद्धिक मूल्य
- सौंदर्यपरक मूल्य
- चारित्रिक मूल्य
- धार्मिक मूल्य

फ्लोरेंस एम. केस. ने मूल्यों को चार भागों में विभक्त किया है–

(1) सावयवी मूल्य (2) विशिष्ट मूल्य

(3) सामाजिक मूल्य (4) सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्य

स्प्रांगर ने मूल्यों को छह भागों में वर्गीकृत किया है–

(1) सैद्धांतिक मूल्य (2) आर्थिक मूल्य (3) सौन्दर्यात्मक मूल्य

(4) सामाजिक मूल्य (5) राजनैतिक मूल्य (6) धार्मिक मूल्य

मिस लोरिंग ने मूल्यों को दो भागों मे बाँटा है– नैतिक एवं अनैतिक मूल्य।

मूल्यों पर प्रकाश डालते हुए निकोलस रेसर ने मूल्यों को दस भागों में वर्गीकृत किया है, जो इस प्रकार है–

(1) भौतिक और शारीरिक मूल्य (2) आर्थिक मूल्य (3) नैतिक मूल्य

(4) सामाजिक मूल्य (5) राजनैतिक मूल्य (6) सौन्दर्य संबंधी मूल्य

(7) धार्मिक मूल्य (8) बौद्धिक मूल्य (9) व्यावसायिक मूल्य

(10) रस–भाव संबंधी मूल्य

अतः कह सकते है कि पाश्चात्य विचारकों व पाश्चात्य दर्शनशास्त्र ने नैतिक मूल्यों पर ही अधिक बल दिया है।

4.2.3.2 भारतीय विद्वानों का दृष्टिकोण –

भारतीय दर्शन के अनुसार मूल्यों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के आधार पर दो रूपों में विभक्त किया है– साधनात्मक मूल्य और साध्यात्मक मूल्य। साधनात्मक मूल्यों में धर्म, अर्थ और काम तथा साध्यात्मक मूल्यों में मोक्ष को समाहित किया गया है।

डॉ. देवराज के अनुसार – "साध्यात्मक मूल्य जीवन या अनुभव की कोई दशा होती है और साधनात्मक मूल्य उन वस्तुओं तथा स्थितियों में पाया जाता है जो उस दशा को उत्पन्न करती है।"[52]

शशि सहगल ने मूल्यों को तीन भागों में विभक्त किया है–

(1) रूढ़ या स्थिर मूल्य

(2) विकसित या स्थायी मूल्य

(3) विकासशील या नवीन मूल्य

शशि सहगल के अनुसार मूल्य व्यक्ति से संबंधित होते है। अतः मानव के विकास व विचारों के साथ–साथ विकसित और संक्रमित होते है। इस हेतु मूल्यों की संकर्मणशीलता इनके मूल्य वर्गीकरण का आधार है।

डॉ. हुकुमचंद राज्यपाल ने मूल्यों को चार भागों में विभक्त किया है–[53]

(1) भौतिक मूल्य

(2) मानसिक या मनोवैज्ञानिक मूल्य

(3) सामाजिक या सात्त्विक मूल्य

(4) आध्यात्मिक मूल्य

महावीर दाधिच ने मूल्यों को दो भागों में विभक्त किया है– यथार्थपरक मूल्य तथा भावपरक मूल्य। यथार्थपरक मूल्यों में वर्णव्यवस्था, राजनीति व वर्ग विभाजन से संबंधित मूल्य समाहित होते है जबकि भावपरक मूल्यों में स्वतन्त्रता, प्रेम, द्वेष व आत्मसम्मान से संबंधित मूल्य होते है।

हेमेन्द्र कुमार पानेरी ने मूल्यों को दो श्रेणी में विभक्त किया है– स्थिर मूल्य तथा गतिशील मूल्य।

डॉ. रमेशचन्द्र लवानिया ने मूल्यों को छह भागों में बांटा है–[54]

(1) वैयक्तिक मूल्य	(2) भौतिक मूल्य
(3) समष्टिगत मूल्य	(4) नैतिक मूल्य
(5) आध्यात्मिक मूल्य	(6) सौन्दर्य–मूलक मूल्य

डॉ भागीरथ बड़ोले ने व्यक्ति के संबंधों के आधार पर मूल्यों को तीन भागों में विभक्त किया है– (1) वैयक्तिक मूल्य (2) सामाजिक मूल्य (3) विश्वातित मूल्य

डॉ रमेश देशमुख ने मूल्यों को दो भागों में बांटा है– शाश्वत मूल्य तथा परिवर्तनीय मूल्य। शाश्वत मूल्यों के अंतर्गत सत्य, अहिंसा, दया, प्रेम, वात्सल्य, समर्पण, मातृ–प्रेम आदि आते है इन्हें स्थिर या साध्य मूल्यों की श्रेणी में रखा जाता है। जबकि परिवर्तनीय मूल्यों में समय के साथ परिवर्तन होता रहता है।

के. आर. श्रीनिवास ने मूल्यों को नौ भागों में बांटा है, जो निम्नलिखित है–

(1) ऐंद्रिक मूल्य (2) सुखात्मक मूल्य (3) मनोरंजनात्मक मूल्य
(4) आर्थिक मूल्य (5) जैविक मूल्य (6) सामाजिक मूल्य
(7) बौद्धिक मूल्य (8) सौन्दर्यात्मक मूल्य (9) नैतिक मूल्य

डॉ नगेंद्र ने मूल्यों को दो श्रेणियों में विभक्त किया है, जो इस प्रकार है–

(1) आनंदपरक मूल्यः– (i) आध्यात्मिक मूल्य
(ii) सौन्दर्यपरक मूल्य
(iii) बौद्धिक मूल्य
(iv) रागात्मक मूल्य
(v) शारीरिक मूल्य

(2) कल्याणपरक मूल्यः– (i) सांस्कृतिक मूल्य
(ii) नैतिक मूल्य
(iii) सामाजिक मूल्य।

डॉ. मोहिनी शर्मा ने जैविकता के आधार पर मूल्यों को निम्नानुसार विभक्त किया है–

(1) जैविक मूल्य – (क) स्वरक्षापरक मूल्य (ख) कामतुष्टिपरक मूल्य
(i) जिजीविषा संबंधी मूल्य
(ii) भूखसंबंधी मूल्य

(2) पराजैविक मूल्यः– (क) सामाजिक मूल्य
(i) पारिवारिक व स्त्री–पुरुष संबंधी मूल्य
(ii) जातीय व सांप्रदायिक मूल्य
(iii) आर्थिक मूल्य
(iv) राजनैतिक व राष्ट्रिय मूल्य

(ख) मानविकी मूल्य

(i) दार्शनिक मूल्य

(ii) धार्मिक मूल्य

(iii) शैक्षणिक मूल्य

(iv) साहित्यिक एवं कलात्मक मूल्य।

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने अपनी–अपनी दृष्टि व सोच के अनुसार मूल्यों का वर्गीकरण किया है। सर्वविदित है कि मूल्य अमूर्त है और अमूर्त को मजबूत आधार पर स्थापित करना असंभव है। अतः मूल्य विभाजन में जटिलताएँ होना अवश्यंभावी है। अतः अध्ययन की दृष्टि से मूल्य विभाजन को सीमित कर निम्न श्रेणियों में विभाजित किया है।

(1) वैयक्तिक व सामाजिक मूल्य

(2) आर्थिक मूल्य

(3) राजनैतिक मूल्य

(4) धार्मिक या आध्यात्मिक मूल्य

(5) सांस्कृतिक मूल्य

(6) नैतिक मूल्य

वैयक्तिक व सामाजिक मूल्य –

व्यक्ति व समाज में बहुत गहरा संबंध होता है दोनों एक–दूसरे से अन्तर्सम्बिन्धित होते है। अतः वैयक्तिक मूल्य व सामाजिक मूल्य एक ही सिक्के के दो पहलू है। दोनों की संरचना की आधारभूमि एक ही है, जो कालानुसार परिवेश व स्थिति के अनुसार एक–दूसरे में समाहित हो जाते है।

वैयक्तिक मूल्य वह होते है जो व्यक्ति को संकुचित क्षेत्र के दायरे से निकाल उसे विकास की ओर अग्रसर करे। वैयक्तिक मूल्यों में व्यक्ति की अपनी सोच, इच्छाएँ, भावनाएँ व विश्वास होता है। जिन्हें वह अपनी रुचि, परिवेश व संस्कारों के द्वारा अपनाता है। व्यक्ति का निर्माण व विकास समाज के द्वारा होता है। अतः वह समाज से संस्कार, रीति–रिवाज व सद्व्यवहार सिखाता है साथ–साथ वह समाज से प्रेम, दया, अहिंसा, ईमानदारी, सदाचार, मानवता आदि भावनाओं को अपनाता है। डॉ. धर्मपाल मैनी के अनुसार– "वैयक्तिक मूल्यों में आत्मबल, आत्मविश्वास, स्वाभिमान, आत्मनिर्भरता, संतोष, धैर्य, संकल्प एवं सहदयता संबंधी मूल्यों की गणना की है।"[55]

वैयक्तिक मूल्यों के निर्माण में संस्कार की भी अहम भूमिका है। संस्कृति में व्यक्तिगत संस्कार समाहित होते है। ये संस्कार मानव के अवगुणों को परिष्कृत कर शिष्टाचार व

सद्व्यवहार को सिखाता है। डॉ. मदनगोपाल गुप्त के अनुसारः– "प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार वैयक्तिक अनुभवों और समाज से प्राप्त संस्कारों पर निर्भर करता है।" संस्कारों के कारण व्यक्ति समाज के बंधनों से जुड़ा रह अपने अस्तित्व को पहचान नहीं दिला पाया। किन्तु आज विशेष स्थितियों व जीवन की विषमताओं के कारण सामाजिक बंधन शिथिल हो गये। आधुनिक युग ने इस विचारधारा को नई दिशा दी। समाज गौण व व्यक्तिवाद प्रमुख बन गया। व्यक्ति की उन्नति सर्वप्रमुख हो नये दृष्टिकोणों का जन्म हुआ। अतः वैयक्तिक मूल्यों में व्यक्ति स्वतंत्रता, साहचर्य, सौन्दर्य चेतना, आदर्श, प्रेम, सहानुभूति, सदभाव, अहिंसा, मोक्ष, धैर्य, साहस व काम संबंधी अवधारणाओं से विकसित मूल्य इसी वर्ग में समाहित होते है यें मूल्य व्यक्तिगत दायरों में निर्मित, विकसित व परिवर्तित होते है। इस प्रकार के मूल्यों का निर्माण सांस्कृतिक विघटन के कारण होता है। वैयक्तिक मूल्य भौतिक मूल्यों का विकास प्रखर कर निषेधात्मक मूल्यों को जन्म देते है।

सामाजिक मूल्य एक दृष्टि है जो व्यक्ति को विकास की प्रेरणा देती हैं। मानव कल्याण ही सामाजिक मूल्य का उद्देश्य है। समाज व व्यक्ति के बीच संतुलन बनाने का कार्य सामाजिक मूल्य करते है। सामाजिक मूल्य वह है जो व्यक्ति व समुदाय हेतु आदर्शों, पद्धतियों, व्यवहारों, उपलब्धियों व उद्देश्यों का निर्माण करता है। संक्षेपतः सामाजिक मूल्य व्यक्ति के आदर्शों, संकल्पों, प्रतीकों व अभिवृतियों से संबंधित होते है, जो समाज तथा राष्ट्र की सीमा को व्यापक करे। सामाजिक मूल्य मानवीय क्रियाओं के प्रतिरूप व समाज के प्रयत्नों का परिणाम है। ये मूल्य हमें परम्परा व व्यवस्था से प्राप्त होकर परिवेशगत परिस्थितियों में परिवर्तित हो नए रूप में विकसित होते है। समाज में यह मूल्य मर्यादा व आदर्श के रूप में प्रतिष्ठापित होते है। अतः सामाजिक मूल्य व्यक्ति हित तक सीमित न रहकर समष्टि की कामना से समाज आचार–विचार, क्रियाकलापों का ज्ञान प्रदान करते है। अतः ये मूल्य समाज के निर्माता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति तथा समाज एक–दूसरे के पूरक है। व्यक्ति समाज के साथ सांमजस्य स्थापित कर अपने दायित्व के निर्वाह के साथ व्यक्तित्व का विकास करता है। उसकी विकास यात्रा का प्रारम्भ समाज की प्रथम ईकाई परिवार से होता है जहाँ से मनुष्य व्यवहार, दायित्व, आदर्श, प्रेम, सदभाव, सत्य व अहिंसा जैसे मूल्यों को ग्रहण करता है तथा समाज में रहकर विभिन्न लक्ष्यों को प्राप्त करता हुआ सामाजिक विकास की ओर अग्रसर होता है। अतः कहा जा सकता है कि समस्त मूल्य समाज की देन है।

सामाजिक मूल्य व्यक्ति विशेष से संबंधित न होकर पूरे समुदाय से संबंधित होते है। इनमें मानवता, सद्भावना, दाम्पत्य जीवन, संतान कामना, प्रेम, ममता, त्याग, समाजसेवा, सहयोग आदि मूल्य समाहित है। डॉ. धर्मपाल मैनी के अनुसार– "सामाजिक मूल्यों में सद्भावना, सहानुभूति, सहयोग, मानवीयता आदि को रखा जा सकता है। यही सामाजिक मूल्य व्यक्ति के व्यवहार, विचार, रीति–रिवाज, परम्पराओं व आदर्शों को प्रभावित करते है। उक्त सभी सामाजिक तत्व मानव विकास में सहभागी होते है। जब मनुष्य समाज द्वारा निर्धारित इन्हीं मान्यताओं का उल्लंघन करता है तो सामाजिक मूल्यों का विघटन होता है और यदि इनका निर्वाह करता है तो समाज द्वारा प्रशंसा योग्य होता है।

सामाजिक व्यवस्था व व्यक्ति के अनुरूप सामाजिक मूल्यों का निर्माण व विकास होता है। अतः प्रत्येक समाज व मानव मूल्य परस्पर भिन्न–भिन्न हो सकते है। जो मूल्य किसी समाज में स्वीकार्य है वही दुसरे समाज में हीन मूल्य की श्रेणी में हो सकता है। अतः समाज के स्वरूप में भिन्नता के साथ सामाजिक मूल्यों में भिन्नता परिलक्षित हो सकती है।

मनुष्य एक विकासशील प्राणी है। मानव के विकास के साथ समाज का विकास व उसका परिवर्तित रूप निर्धारित होता है क्योंकि समाज के मूल में मनुष्य निहित है। समाज के विकास व परिवर्तन के साथ मूल्यों का विकास व परिवर्तन अन्तर्सम्बन्धित है। अतः सामाजिक मूल्य परिवर्तनशील है तथा समाज के अनुरूप उनमें परिवर्तन होता रहता है।

आर्थिक मूल्य –

प्राचीन समय से ही समाज में अर्थ को महत्ता प्रदान की गई है। भारतीय दर्शनशास्त्र में अर्थ पुरुषार्थ को सृष्टि के विकास में अहम माना गया है। सामान्यतः अर्थ से संबंधित मूल्यों को ही आर्थिक मूल्य कहा गया। विश्व के सभी राष्ट्रों की सामाजिक व्यवस्था में अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका है। अतः कह सकते है कि अर्थ आज सम्पूर्ण जगत का कर्ताधर्ता बन गया है।

आज अर्थ प्रधान युग में सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक हर स्तर आर्थिक मूल्यों से प्रभावित हो रहा है। सम्पूर्ण समाज का विकास ही अर्थ पर आधारित हो गया है। अर्थ के प्रति आकर्षण सम्पूर्ण मानव जाति की प्रवृत्ति बन गई है। मानव जीवन में आने वाले उतार–चढ़ाव अर्थ आश्रित है। आज व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा का मापदंड अर्थप्रधान हो गया है। आज अर्थ से संबंध मानव के संघर्ष द्वारा सांसारिक सुख व साधन प्राप्त करने की शक्ति व समृद्ध रहने के साधन से है। इसीलिए आर्थिक मूल्यों के संबंध में डॉ. देवराज ने लिखा है– "मूल्यों की अभिलाषा इसीलिए की जाती है कि वह हमारी जरूरतों को पूरा करती है और कुछ इसलिए भी की उसके द्वारा हम दूसरों पर अधिकार प्राप्त करके उनके

श्रम से लाभ उठा सकते है।"[56] व्यक्ति व समाज की दिशा पूर्णरूप से अर्थोन्मुखी होने के कारण आज अर्थ सर्वाधिक महत्वपूर्ण व वांछनीय हो गया है। परन्तु वास्तविक आर्थिक मूल्य वह है, जिससे सारे समाज का कल्याण हो और धन का यथासंभव समान वितरण है।

आधुनिक युग में अर्थ के प्रति दृष्टिकोण व उसकी महत्ता में बहुत परिवर्तन हुआ है। वास्तविक अर्थ की परिभाषा ही बदल गई है। अर्थ के महत्व को बताते हुए डॉ. मोहिनी शर्मा कहती है– "समाज में अर्थ को महत्ता प्राप्त हो जाना एक बात है और आर्थिक मूल्यों का निर्माण एवं निर्वाह होना दूसरी बात। अर्थ प्राप्ति, आर्थिक योजनाएँ और अर्थ चेतना जहां तक समाज के लिए हितकारी है, वहाँ तक तो आर्थिक मूल्यों का निर्वाह कहा जा सकता है किन्तु जहा वैयक्तिक स्वार्थ पूर्ति के लिए अर्थ प्राप्ति की जाती है और सामाजिक कल्याण को उपेक्षित कर दिया जाता है, वहाँ अर्थ संबंधी धारणाओं को मूल्य का दर्जा नहीं दिया जा सकता।"

आज के इस परिवेश में आर्थिक दृष्टिकोण में व्यापक बदलाव हुआ है। अर्थ अपनी मूलभूत सत्ता व महत्ता को विस्मृत कर चुका है। अर्थ की प्रधानता ने अन्य मूल्यों को गौण व नदारद कर दिया है। अतः स्थिति यह हो गई है कि युग सत्य के रूप में एकमात्र अर्थ आसीन होता जा रहा है। डॉ. विश्वम्भर उपाध्याय लिखते है कि– "आज उसे भ्रमवश चरम मूल्य माना जाने लगा है। आर्थिक मूल्य उच्चतर मूल्यों का साधन होते है, जिन समाजों में वे साध्य बनने लगते है, वहाँ उच्चतर मूल्यों का हास होने लगता है।"[57]

आज के इस युग में व्यक्ति अर्थ की प्राप्ति हेतु कई संघर्ष करता है। वर्तमान समय में अर्थ प्राप्ति हेतु किया गया हर संघर्ष मान्य हो गया है। इस संबंध में डॉ. धर्मवीर भारती कहते है– "मार्क्स ने अपने दर्शन में स्पष्ट रूप से कहा है कि यह सारा दोष वस्तुतः इस व्यवस्था का है, जिसमें वर्ग–वैषम्य के कारण प्रत्येक मूल्य मिथ्या सिद्ध हो रहा है। स्वातंत्र्य, गौरव, करुणा, सौन्दर्य और सुख ये शब्द निरर्थक है, असंगतियों से भरे हुए है और केवल तभी इनमें अर्थ की प्रतिष्ठा हो सकती है, जब समाज का वैषम्य दूर हो जाए और वर्ग–वर्ग का भेद मिट जाए।"[58] अर्थ के बढ़ते महत्व ने व्यक्ति में प्रतिस्पर्धा को जागृत कर भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया है। आज व्यक्ति सही या गलत किसी तरीके से धन प्राप्त करना चाहता है। अतः वर्गभेद बढ़ता जा रहा है। परिणामस्वरूप सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक संबंध, मान्यताओं व आदर्शो का खण्डन हो रहा है। जिसके कारण मूल्यों का हास हो रहा है और समाज पतन की ओर अग्रसर हो रहा है।

राजनैतिक मूल्य –

राजनीति व मानव का बहुत गहरा संबंध है। किसी भी राष्ट्र के निर्माण में राजनीतिक मूल्यों की अहम भूमिका है। राजनीतिक मूल्य व्यक्ति की राजनैतिक चेतना से संबंधित है। इसका निर्माण राज व नीति दो शब्दों के योग से हुआ है जिसका अभिप्राय राज्य की नीति प्रणाली, राजनैतिक व्यवस्था व राजनैतिक सत्ता व शासन प्रणाली है। वर्तमान संदर्भ में इन मूल्यों का अर्थ राष्ट्रीय चेतना व मानसिकता से है जो कुशल नीति द्वारा देश की व्यवस्था को सुचारु रूप से क्रियान्वित करते हुए उसके हितों के प्रति सजग रहे। इन मूल्यों के द्वारा राष्ट्र के कल्याण व हितों का ध्यान रखा जाता है।

राजनैतिक मूल्यों को समष्टिगत मूल्यों की संज्ञा से भी अभिहित किया गया है। समष्टिगत मूल्यों में व्यक्तिवाद को त्याग समष्टि हित हेतु समाज, राष्ट्र व मानवता की विचारधारा को बढ़ावा देना। समष्टिगत मूल्य के बारे रमेशचन्द्र लवानिया ने लिखा है– "समष्टिगत मूल्य मानव की उन अभिवृतियों से संबंधित है जो समाज, राष्ट्र और मानवता को विस्तृत सीमा की गति प्रदान करते है। समष्टिगत मूल्यों के लिए व्यक्तिवाद को त्यागना पड़ता है, साथ ही समष्टि के लिए अपने संकुचित स्वार्थो की बलि देनी होती है। राष्ट्र–प्रेम, समाज–प्रेम, मानवता, अहिंसा, दया, त्याग, क्रांति और समन्वय की अभिवृति से उत्पन्न मूल्य इसी कोटि के अन्तर्गत रखे जाएगे।"

राष्ट्र निर्माता होने के कारण मातृत्व प्रेम, अपनत्व, समानता, स्वतंत्रता, आस्था व ममत्व जैसे मूल्य राजनीतिक मूल्य में समाहित है। अतः आज राजनैतिक मूल्य राष्ट्रीय मूल्य की पदवी ग्रहण कर चुके है। इसी संदर्भ में डॉ. ममता गुप्ता लिखती है कि– "जहाँ वसुंधरा मानव का पालन पोषण अपने वत्स के समान करती है, वहाँ मानव का भी यह दायित्व होता है कि वह अपनी मातृभूमि की रक्षा करे। इसी दायित्व की भावना को जब एक जन–समुदाय अपने कर्तव्य के रूप में ग्रहण कर लेता है, तभी राष्ट्र का अस्तित्व प्रत्यक्ष होता है।"[59]

भारत की पराधीनता के समय देश कई संघर्षों, क्रांतियों व उतार–चढावों से गुजरा। जिसने भारत को स्वतंत्रता की प्राप्ति का एकमात्र लक्ष्य प्रदान किया। परन्तु स्वतंत्रता पश्चात इन संघर्षों व क्रांतियों के परिणामस्वरूप भारत की सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक परिस्थितियों में आमूल चूल परिवर्तन हुआ। जिसने भारत में समाजवाद, पूंजीवाद, वर्गभेद, संवैधानिक अधिकार जैसी अनेक विचारधाराओं को जन्म दिया। फलस्वरूप व्यक्ति मान्यता, अधिकारों व आदर्श धारणाओं के वैचारिक संघर्ष में फँस गया। अतः स्वतंत्रता ने व्यक्ति को व्यक्तिगत स्वार्थों में लिप्त कर सर्वहित की भावना को मिटा दिया। स्वतंत्र भारत

में सत्ता का लोभ स्वार्थपरकता, जातिवाद, सांप्रदायिकता, भाई–भतीजावाद आदि प्रवृतियों को बढ़ावा मिला। इसके कारण राजनैतिक मूल्यों में परिवर्तन हुआ है। जहाँ अनुचित मूल्यों का बढ़ावा हमारे प्रजातांत्रिक देश के लिए खतरा बन मूल्यों का हास कर रहे है वही कुछ सही मूल्य परिवर्तन ने अच्छी मान्यता, धारणाओं व भावों को जन्म दिया हैं। जिसमें समान विकास के अवसर, कुप्रथाओं व कुरीतियों का खण्डन कर सभी वर्ग को मताधिकार के अवसर प्रदान कराये है।

समकालीन युग में राजनीतिक मूल्यों ने विश्व–बंधुत्व की भावना को बढ़ा अहिंसागत विचार, स्वार्थवश सीमा विस्तार का दृष्टिकोण, अन्तर्राष्ट्रिय शांति और सहिष्णुता जैसे वैश्विक मूल्यों की नींव भी रखी है। डॉ. देवराज पथिंक के अनुसार– "आज का युग विश्व–बंधुत्व का है। हमने आज से हजारों वर्ष पूर्व अपने पूर्वजों के स्वर में वसूधैव कुटुम्बकम का अमर स्वर सुन रखा है। यदि गंभीरतापूर्वक विचार किया जाए तो यह तथ्य अपने आप से स्पष्ट हो रहा है कि अन्तर्राष्ट्रिय अथवा विश्व–बंधुत्व मानव–सम्यता के इतिहास की वह मंजिल है जिसके पूर्व राष्ट्रीयता का पड़ाव आना स्वाभाविक है।"[60] अतः स्पष्ट है कि राजनैतिक मूल्यों पर ही सम्पूर्ण मानव–सम्यता का विकास निर्भर है।

धार्मिक या आध्यात्मिक मूल्य –

भारत की संस्कृति में अध्यात्म का एक अनूठा स्थान है। भारतीय संस्कृति व दर्शन की आत्मा है– अध्यात्म। आध्यात्मिकता व्यक्ति के मन व आत्मा से संबंधित है जो व्यक्ति को सर्वसत्ता की ओर प्रेरित कर परम आनन्द को प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्थ करती है। भक्ति, आस्था व परम सत्ता में (ईश्वर) विश्वास प्रमुख आध्यात्मिक मूल्य है। अध्यात्म से धर्म की स्थापना हुई। अतः धर्म की आत्मा है– अध्यात्म।

भारतीय संस्कृति में व्याप्त सभी सामाजिक व सांस्कृतिक कर्म धर्म पर आधारित है। धर्म आस्था से जुड़ा है। इस हेतु गुरु की महत्ता, तीर्थाटन, यज्ञ, अनुष्ठान, उपासना, सत्संगति आदि धार्मिक मूल्य माने गए है। डॉ. धर्मपाल मैनी के अनुसार– "धार्मिक मूल्यों के अन्तर्गत अव्यक्त सत्ता में विश्वास, भगवत भक्ति, कीर्तन, गुणगान, प्रार्थना आदि को लिया जा सकता है।"[61] धर्म व अध्यात्म में मोक्ष को परम मूल्य माना गया है तथा इस को जीवन का प्रमुख उद्देश्य भी घोषित किया है। इसी संदर्भ में भारतीय संस्कृति द्वारा स्पष्ट किया है कि "जीवन का अंतिम लक्ष्य मुक्ति प्राप्त करना है और जब तक उसकी प्राप्ति नहीं हो जाती व्यक्ति बारम्बार जन्म लेता है।" अतः मोक्ष के अन्तर्गत त्याग, दान, संयम, भक्ति व तपस्या आदि तत्व समाहित है।

भारतीय संस्कृति में आज भी जीवन के सार के रूप में धर्म, अर्थ, कम और मोक्ष को ही प्रतिष्ठापित किया हुआ है। परन्तु वर्तमान युग में सामाजिक रीति–रिवाज, परम्पराएँ, प्रथाएँ व अंधविश्वास के दम पर गैर मूल्य पनप रहे है। इस कारण धार्मिक मूल्यों का हास हो रहा है और समाज पतन के गर्त की ओर बढ़ रहा है। अतः प्राचीन भारतीय संस्कृति के प्रतिष्ठा व मानव के कल्याण के लिए मूल्यों का संरक्षण आवश्यक हैं।

सांस्कृतिक मूल्य –

सांस्कृतिक मूल्यों व संस्कृति का गहन संबंध है। किसी भी राष्ट्र की संस्कृति द्वारा ही हमें उनके मूल्यों का बोध होता है इसीलिए संस्कृति को राष्ट्र की आत्मा कहा जाता है। संस्कृति के द्वारा राष्ट्र के आदर्शों का निर्माण होता है। डॉ. देवराज के अनुसार– "संस्कृति वस्तुतः उन गुणों का समुदाय है, जिन्हें मनुष्य अनेक प्रकार की शिक्षा द्वारा अपने प्रयत्न से प्राप्त करता है। संस्कृति का संबंध मनुष्य की बुद्धि, स्वभाव व मनोवृतियों से है।" इसी परिपेक्ष्य में हिन्दी विश्वकोश में कहा गया है – "यदि सामाजिक संरचना, सामाजिक संबंधों का समुच्चय है तो संस्कृति उन संबंधों का आधार है।"

सांस्कृतिक मूल्य मानव के सम्पूर्ण जीवन से संबंधित होते है। सांस्कृतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति मानव के विचार, भाव व व्यवहार के द्वारा होती है। इस हेतु डॉ. नगेन्द्र का कथन है– "सांस्कृतिक मूल्यों से अभिप्राय उन तत्वों से है, जो सत्य के संधान और सिद्धि में सहायक होते है, जीवन की कल्याण–साधना अर्थात भौतिक और आध्यात्मिक विकास में योगदान करते है और सौंदर्य चेतना को जागृत एवं विकसित करते है।"[62] अतः दया, प्रेम, करुणा, सत्य, अंहिसा, परोपकार, आस्था, सहानुभूति, उदारता, श्रद्धा, क्षमा, सदाचार, बंधुत्व के भाव आदि सांस्कृतिक मूल्य के अन्तर्गत आते है। इन मूल्यों के द्वारा ही मानव भौतिक, सामाजिक, आध्यात्मिक व राजनैतिक स्तर पर उपलब्धियों को हासिल कर सकता है। अतः कह सकते है कि सांस्कृतिक मूल्य संस्कारों की छवी रूप में मानव के व्यवहार में अभिव्यक्त होते है। इन मूल्यों में मानव जीवन की प्रणालियाँ, व्यवस्था व विश्वास होता है। अतः सामाजिक जीवन के रक्षा कवच के रूप में सांस्कृतिक मूल्यों की सम्पूर्णता है।

नैतिक मूल्यों –

नैतिक शब्द 'नीति' से बना है। नीति शब्द से अभिप्राय है – किसी समाज व संगठन द्वारा निर्मित नियम से है। अर्थात समाज या राष्ट्र द्वारा निर्मित नियमों के अनुसार गतिमान रहना ही नीति हैं और उन नीतियों से उद्धृत मूल्यों को नैतिक मूल्य की संज्ञा दी गई है। नैतिक मूल्य कर्तव्य और आचरण से संबंधित है। अच्छाई नैतिकता का आधार मानी गई है परन्तु अच्छाई का कोई मापदंड नहीं है। रमेश कुंतल मेघ के अनुसार– "नैतिकता

का ऐसा कोई भी शाश्वत नियम अथवा मूल्य नहीं है जो समय और अवसर के अनुकूल तोड़ा या छोड़ा जा सके।" त्याग, दया, धर्म, पवित्रता, शांति और सत्य आदि को नैतिक मूल्यों की संज्ञा दी गई है।

मूल्य नैतिकता पर जोर देते हुए रिचर्ड ने कहा है– "अच्छाई बुराई के विषय में मनुष्य की धारणाएँ उसकी परिस्थितियों और आवश्यकताओं के द्वारा निर्मित होती है। उसका अर्थ है कि हम नैतिक विचारों की गतिशीलता में विश्वास रखे।"

भारतीय दर्शन में आचरण की पवित्रता पर बल देने के कारण नैतिक मूल्यों को विशेष सम्मान की दृष्टि से देखा गया है। राष्ट्र हित व समाज हित की दृष्टि से भी नैतिक मूल्यों का विशेष महत्व रहा है। मानव का जीवन व सामाजिक स्वरूप दोनों नैतिक मूल्यों के ढाँचे पर खड़ा है। जब नैतिकता के द्वारा मानव की इच्छाओं का दमन किया जाता है और अनावश्यक रूप से नैतिकता को उन पर थोपा जाता है तो व्यक्ति उसके प्रति विद्रोह का स्वर मुखरित करता है फलस्वरूप नैतिक मूल्यों का पतन होता है। नैतिक मूल्यों के विघटन द्वारा समाज का विघटन प्रारम्भ हो जाता है। इस कारण समाज में व्याप्त सभी मूल्यों का परिवर्तन व पतन होने लगता है। अतः समाज व राष्ट्र के विकास हेतु नैतिक मूल्यों को सर्वाधिक महत्ता प्रदान की गई है।

4.2.4 मूल्य और साहित्य –

साहित्य और समाज में अत्यंत घनिष्ठ संबंध है। साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य से संबंधित आचार्य रामचंद शुक्ल की अवधारणा है कि– "साहित्य जनता की चित्तवृत्तियों का संचित प्रतिबिम्ब होता है।" अतः साहित्य समाज का ऐसा प्रतिबिम्ब या दर्पण है जिसमें मानव के समस्त क्रियाकलाप व मनोवृतियों का वर्णन होता है। मनुष्य की मनोवृतियों के साथ मूल्यों का गहरा रिश्ता है। इसीलिए व्यक्ति व समाज से पृथक हो मूल्यों को नहीं समझा जा सकता है। अतः साहित्य और मूल्य का गहरा रिश्ता है दोनों ही मानव व समाज को निर्देशित, नियंत्रित व विकसित करते है। साहित्य में वैयक्तिकता व सामाजिकता के संदर्भ में मूल्यों का वर्णन किया जाता है। साहित्यकार समाज का प्रतिनिधित्वकर्ता होने के कारण समाज के संस्कार व प्रथाओं का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ता है। रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है– "परिवेश वह वातावरण है जिसमें साहित्य लिखा जाता है और मूल्य वे नैतिक मान्यताएँ है, साहित्य जिसका समर्थन और विरोध करता है। विशेष प्रकार के परिवेश और मूल्यों के अधीन भी रचा गया साहित्य सभी परिवेशों सभी मूल्यों का स्पर्श करता है।"[63]

साहित्य मानव जीवन से उत्पन्न होकर सम्पूर्ण सामाजिक परिवेश को प्रभावित करता है और समाज व्यवस्था में सांस्कृतिक अंग के रूप में विध्यमान रह उस व्यवस्था से प्रभावित होता है। डॉ. देवराज के अनुसार– "साहित्य में हम कल्पना द्वारा नवीन मनोदशाओं की सृष्टि करते हैं। यह सृष्टि अपने से बाहर किसी चीज को प्रतिफलित नहीं करती, जैसा की विचार सृष्टि करती है। एक तरह से हम कह सकते है कि वैज्ञानिक सृष्टि की भांति कला जिस वस्तु या यथार्थ का बोध खोजती है, वह यथार्थ स्वयं हमारा जीवन है, हमारा वैयक्तिक जीवन तथा सामाजिक जीवन इसलिए कला सृष्टि का अपने युग तथा समाज से घना संबंध होता है।"

मूल्य साहित्य का मूल विषय है। मूल्यों को अभिव्यक्ति करना साहित्य का मूल उद्देश्य है। साहित्य मूल्यों के माध्यम से मानव के विकास में प्रयासरत रहता है। साहित्य देशकाल व परिवेशगत परिस्थितियों के अनुरूप मूल्यों की अभिव्यक्ति करता है। साहित्य मूल्यों का निर्माण नहीं करता है, अपितु मूल्यों की व्याख्या करता है। डॉ. मोहिनी शर्मा के अनुसार– "साहित्य हर युग में मूल्यों को जीवन से जोड़ता है। जो साहित्य मूल्यों की अभिव्यक्ति और प्रतिष्ठा न करे, वह साहित्य ही नहीं कहला सकता। देशकाल और परिस्थिति से न्यूनतम प्रभावित होने वाला तथा अधिकतम समय तक अधिकतम लोगों को प्रभावित व दिशा निर्देशित करके उन्नत एवं उदात्त बनाने वाला साहित्य ही मूल्यवान होता है, शाश्वत होता है।"

साहित्य का जीवन मूल्यों पर आधारित है। मूल्यों की अभिव्यक्ति साहित्य के द्वारा होती है। साहित्य और मूल्य मानव व समाज का परिष्कार करते हुए एक नई सृष्टि को जन्म देते है। साहित्य सृष्टि के नवीन मूल्यों को ग्रहण कर समाज को विकास की राह पर अग्रसर करता है। अतः मूल्य व साहित्य का अन्तरंग संबंध है। बाबू गुलाबराय के अनुसार– "साहित्य के मूल्य जीवन के मूल्यों से भिन्न नहीं है। अतः यह बात सर्वमान्य है कि जिसका जीवन में मूल्य है उसका साहित्य में भी मूल्य है।"[64] साहित्य का आधार मूल्य है। मूल्य युगानुरूप परिवर्तित होते रहते है। मूल्यों के स्वरूप में परिवर्तन साहित्य में भी परिलक्षित होता है। साहित्य में मूल्यों की अभिव्यक्ति प्रतीकात्मक रूप में होती है। जिसमें मूल्य मन के अदृश्य लोक से निकल चेतन रूप में प्रकट होकर साहित्य का मानदण्ड बन जाते है। डॉ. शंभू नाथ सिंह के अनुसार– "साहित्य में मानव मूल्य आरोपित नहीं होते बल्कि वे साहित्यकार के अनुभूत सत्य होते है जो उसकी आत्मोपलब्धि की प्रक्रिया में रूपायित होकर अपनी सुंदरता, उदारता और महत्ता के कारण समाज द्वारा रूपायित मूल्यों के रूप में स्वीकृत किए जाते है।"[65]

साहित्य शास्त्र में मूल्य शब्द आज मानव व समाज के हित तक ही सीमित न रहकर व्यापक रूप धरण कर लिया। इस व्यापकता ने मूल्य की अवधारणा को जटिल बना दिया है तथा साहित्य के क्षेत्र में बौद्धिक क्रांति उत्पन्न कर दी है। अतः मूल्यों की साहित्य के संदर्भ में चर्चा करते हुए डॉ. धर्मवीर भारती ने लिखा हैं कि– "यदि मानव, मूल्यों के संदर्भ में साहित्य को नहीं समझते तो साहित्य में गहरे पैढना असंभव है।"[66]

अतः साहित्य और मूल्य संबंधी विश्लेषण के आधार पर स्पष्ट है कि साहित्य का सृजन मूल्यों की अभिव्यक्ति हेतु होता है। मूल्य सामाजिक मान्यताओं व धारणाओं के द्वारा प्रतीक रूप में साहित्य में अभिहित होते है। साहित्य के मूल्य व आदर्श समाज से अंतरग होते है। साहित्य परिवेशगत मूल्यों को ग्राह्य कर नवीन मूल्यों के द्वारा समाज को विकासमान बनाता है।

अतः कह सकते है कि साहित्य की दृष्टि अपने आप में एक मूल्य है। मूल्यों की अभिव्यक्ति साहित्य के द्वारा होती है। वस्तुतः साहित्य और मूल्य परस्पर अन्तर्सम्बन्धित है। मूल्य की अभिव्यक्ति व प्रतिस्थापना में साहित्य अहम भूमिका निभाता है।

4.2.5 मूल्यों का महत्व –

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य के विकास व निर्माण में समाज प्रदत्त मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मूल्य मानव की अभिरुचियों हेतु प्रेरणा बन उसके व्यक्तित्व के परिचायक बनते है। "सामाजिक मूल्यों की स्थिति व्यक्ति के व्यवहार संबंधी आचार–विचार, लोकविश्वास, अवधारणा, मान्यता, आदर्श आदि को प्रभावित करती है। अतः ये मूल्य समाज के निर्माता है। यही सामाजिक संबंधों को एक सूत्र में पिरोकर उसे निष्क्रियता से बचाकर गतिशील करते है और संस्कृति को यथोचित आधार देते है, क्योंकि मानव–समाज मूल्यों का संग्रह व संगठन है, जो उसकी व्यवस्था को अनुशासित करते रहते है।" अतः मूल्य समाज के आधार स्तम्भ होते है।

मूल्य व्यक्ति की अभिलाषा व आकांक्षाओं द्वारा उद्दीप्त होते है। इन मूल्यों को आत्मसात कर मनुष्य अपने बाह्य विकास के साथ साथ आंतरिक विकास को उत्कृष्ट बना सकता है। मूल्य मनुष्य को सदैव विकास की ओर अग्रसर कर उद्दात व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक बनाते है। मूल्यों का प्रश्रय लेकर मनुष्य अपनी इच्छाओं, अभिलाषाओं व आदर्शों को साकार कर नव जीवन की प्रेरणा बन उसको संरक्षण प्रदान करता है। सुकेश शर्मा लिखते है – "मानव जीवन को स्वस्थ दिशा देने वाले गुणों को मानव–मूल्यों की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। जीवन को अनुशासित एवं सुवासित करने वाले तत्वों को भी मानव मूल्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है। संक्षेप में, मानव मूल्य वे अनुपम तत्व है, जिनसे

मनुष्य के मूल्य, प्रतिष्ठा एवं यश में श्री वृद्धि होती है, ये मनुष्यत्व के मापक है, तथा विश्व कल्याण के मेरुदंड है।"[67] स्पष्ट है कि मानव के जीवन में मूल्यों के महत्व को नकार नहीं सकते है तथा मूल्यों की प्रतिस्थापना ही सच्चे मानव की प्रतिष्ठा है।

मूल्य समाज के मेरुदंड है। मूल्यों के द्वारा समाज अस्तित्ववान बनता है। मूल्य सामाजिक संबंधों का निर्धारण करते हुए सामाजिक विकास के मानक बनते है। मूल्य समाज के निर्माता है। समाज की सभ्यता व संस्कृति के आधार पर ही मूल्य आदर्शों व्यवहारों का प्रतीक बन व्यक्ति के आदर्श व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करते है। मूल्यों का महत्व प्रकट करते हुए डॉ. सीता मिश्र लिखती है– "समाज ने सदियों से रीति–रिवाज, प्रथाएँ, धारणाएँ बना रखी है। वे समाज के असंदिग्ध निर्णय बन चुके है। उनके विषय में समाज किसी भी प्रकार का विवाद नहीं चाहता। इस प्रकार सामाजिक मूल्य वे प्रतिमान है जिनके अनुसार हम अपने व्यवहार को नापते है जो बात माप में ठीक उतरे वह उचित है, जो प्रतिकूल है वह अनुचित। इस प्रकर मूल्य समाज की वह आधारशिला है जिस पर सभ्यता और संस्कृति का भव्य प्रासाद निर्मित होता है। समाज में मूल्य सदैव बनते–मिटते आये है। समाज के निर्माण में मूल्यों ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। समाज का संबंध मानव जगत से है, अतः मूल्यों का संबंध भी मानव से है।"[68] अतः मूल्य समाज में सभी परिस्थितियों में विद्यमान रहते है। मूल्य विहीन समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

समाज के संदर्भ में मूल्यों का महत्व कम नहीं है। समाज मूल्यों द्वारा व्यक्ति का सर्वांगीण विकास कर उनमें कर्तव्य बोध की भावना का निर्वाह करता है। समाज प्रदत मूल्य व्यक्ति को हमेशा कर्मरत रहने की प्रेरणा प्रदान करता है। राष्ट्र व्यक्ति को सामाजिक बनाने हेतु सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इस दृष्टि से मूल्यों का महत्व अनुपम है राष्ट्रीय मूल्य कर्तव्यबोध की भावना द्वारा व्यक्ति को कर्मठ बनाकर अपने दायित्वों के निर्वाह की प्रेरणा देता है। मूल्यों की इस भूमिका द्वारा व्यक्ति के विकास के साथ राष्ट्र का भी विकास होता है। वस्तुतः किसी भी राष्ट्र या समाज के मूल्य ही उनके विकास का हेतु बनते है। इस दृष्टि से मूल्यों का महत्व विभिन्न रूपों में व्यक्तिगत, सामाजिक व राष्ट्रीय स्तर पर विध्यमान है। मूल्यों की महत्ता प्रतिपादित करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी लिखते है– "जीवन मूल्यों की सार्थकता इसी में है कि वह जीवन को जीने के योग्य बनाते है। अनुभव सत्यों के आधार पर इन मूल्यों का विकास होता है। अतः जीवन मूल्य शाश्वत नहीं होते, अनुभव तथा विवेक द्वारा ही उन्हें ग्रहण किया जाता है।"[69] व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के हित में ही मूल्यों की सार्थकता निहित है।

मूल्यों की सार्थकता पर सुकेश शर्मा के विचार है– "मूल्यों से स्वस्थ व्यक्तित्व एवं स्वस्थ परिवार की संरचना तथा स्वस्थ समाज तथा स्वस्थ राष्ट्र की नींव निर्मित होती है। मूल्य मानव जीवन के विषय झंझावातों में भी मनुष्य की जीवन रूपी नौका के लिए आकाशदीप की भांति मार्गदर्शन करते है, उसे दिग्भ्रमित होने से बचाते है। 'सर्वजनहिताय सर्वजन सुखाय' की भावनामृत से भरे हुए ये उस संजीवनी घुट्टी की तरह है जो मृतप्राय प्राणों में भी श्वांस फूंक देते है। माँ के आँचल की उस शीतल छाँह की तरह है जो मनुष्य को जीवन भर सुख प्रदान करती है तथा पूर्वजों के उन आर्शीवादों की तरह है जो मनुष्य की जीवन–पर्यन्त रक्षा करते है। इस प्रकार मूल्य उस अभेद्य, अजेय सुरक्षा कवच की तरह है, जिनकी बदौलत मनुष्य भवसागर से सकुशल पार उतर जाता है। ये वे शक्तिपुंज है जो मनुष्य की आत्मा को सशक्त बनाते है। जिनसे मनुष्य परम संतुष्ट अनुभव करता है।"[70] अतः कह सकते है कि मनुष्य के जीवन की समग्रता मूल्यों पर आधारित है और मूल्य आधारित जीवन ही आदर्श व्यक्ति की पहचान है। इतिहास साक्षी है कि व्यक्ति, समाज व राष्ट्र की गरिमा का परिचय भी मूल्यों की पृष्ठभूमि पर आधारित है।

4.3 मूल्य संक्रमण और परिवर्तन –

मानव व प्रकृति का अटूट संबंध है। मानव का सम्पूर्ण जीवन चक्र प्रकृति पर आधारित है। परिवर्तनशीलता प्रकृति का नियम है। मानव प्रकृति से अन्तर्सम्बन्धित होने के कारण मानव जीवन भी परिवर्तनशील होता है और यह परिवर्तन सहज व स्वाभाविक होता है। जीवन का यह परिवर्तन व मूल्यों को भी प्रभावित करता है। क्योंकि आज के दौर में मानव को ही मूल्यों के स्त्रोत के रूप में स्वीकार किया गया है। अतः मानव जीवन में परिवर्तन के कारण मूल्यों में भी परिवर्तन स्वाभाविक रूप से होता है। मूल्यों के इस परिवर्तित स्वरूप को मूल्य परिवर्तन, मूल्य विघटन व मूल्य संक्रमण आदि शब्दों से अभिहित किया जाता है।

4.3.1 संक्रमण का अर्थ व स्वरूप –

संस्कृत हिन्दी कोश के अनुसार संक्रमण शब्द (सन+क्रम्+ल्यूट) से बना है जिसका तात्पर्य प्रगति, संगमन, संक्राति व सूर्य का एक राशि से से दूसरी राशि में गमन से है। मानक हिन्दी कोश व रामचन्द्र वर्मा के अनुसार– "संक्रमण शब्द (सम्+क्रम्+ल्यूट) से बना है जिससे तात्पर्य आगे की ओर चलना या बढ़ना। अतः संक्रमण का मूल अभिप्राय एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रवेश या हस्तांतरण से है।

संक्रमण शब्द अंग्रेजी के (Transition) का समानार्थी है। जिससे अभिप्राय एक स्थिति से दूसरी स्थिति में पहुंचना या विचारों में परिवर्तन से लिया गया है। सामान्य रूप

से संक्रमण का अर्थ गमन, गति या चलने से है। संक्रमण के स्थान पर उसके अनेक समानार्थी शब्द जैसे परिवर्तन, विघटन, संकट आदि का ज्यादा प्रयोग हुआ है परन्तु संक्रमण संबंधित इन तीनों शब्दों के अर्थ व प्रयोग में सूक्ष्म अंतर है। परिवर्तन प्रकृति, मानव, व संसार का नियम है। मानवीय जगत में परिवर्तन का प्रभाव मूल्य पर भी पड़ता है और मूल्य स्वाभाविक रूप से परिवर्तित हो अपनी नई स्थिति को धारणा करते है। विघटन से तात्पर्य ही नष्ट होने से या पूर्णतया मिटने से है। अर्थात समाज में व्याप्त प्राचीन मूल्यों का अस्तित्व पूर्णतः नष्ट हो उनके स्थान पर नए मूल्य की स्थापना होना ही मूल्य विघटन है। डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है– विघटन जीवन की विकृति ही है, प्रकृति नहीं। संकट की स्थिति इन दोनों से भिन्न होती है। जब प्राचीन मूल्य अपना अस्तित्व खो बैठते है और उनके स्थान पर नवीन मूल्य प्रतिस्थापित नहीं होते है तब व्यक्ति को मूल्यों का अभाव महसूस होता है उसे संकट की दशा कहते है। मूल्य संक्रमण इन सभी का विकसित रूप है और यह मूल्य संक्रमण आधुनिक युग की देन है। मूल्य संक्रमण प्राचीन मूल्यों के नष्ट होने व नवीन मूल्यों की स्थापना होने के मध्य की अवस्था है। इसी संदर्भ में डॉ. कमलेश गुप्ता ने लिखा है– "संक्रमण की स्थिति वहाँ आती है जहा व्यक्ति पुराने मूल्यों को पूर्ण रूप से नकार देता है और नए मूल्यों को भी अपना नहीं पाता, बीच की स्थिति में ही घूमता रहता है।"

वर्तमान युग में जटिल परिस्थितियों के कारण व्यक्ति के आदर्श मान्यताएँ व विचारों में परिवर्तन आ रहा है और मनुष्य द्वारा उन परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाने के कराण विघटन की दशा उत्पन्न हो मूल्यों का संक्रमण हो रहा है। मूल्य संक्रमण ने मानव के सामने गंभीर स्थिति पैदा कर दी है। मूल्य संबंधी प्राचीन मान्यताएँ विलुप्त हो नवीन परम्पराओं के निर्माण ने वैचारिक जगत में क्रांति उत्पन्न कर दी है। फलस्वरूप नैतिक मान्यताएँ खण्डित हो रही है। सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश परिवर्तित हो संक्रमित हो रहा है। समाज का अस्तित्व नगण्य हो व्यक्ति प्रतिष्ठित होता जा रहा है। धर्मवीर भारती के शब्दों में– "आज सम्पूर्ण सभ्यता जिन मूल्यों पर आधारित थी, वे झूठे पड़ गए है, परिणाम यह है कि एक भयानक विघटन उपस्थित हो गया है।"[71]

मूल्यों की प्रकृति परिवर्तनशील है। अतः मूल्य शाश्वत या स्थिर नहीं होते है। मूल्य देश व कालानुसार परिवर्तित होते रहते है। प्रत्येक देश, समाज व जाति एक ही प्रकार के जीवन मूल्यों से प्रभावित व अनुशासित नहीं होते है अपितु वह युगानुरुप क्षेत्र विशेष की पारिस्थितिक परिस्थितियों से निर्देशित होती है।

मूल्य संक्रमण के दौर में मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। मानव द्वारा हर क्षेत्र में नवीन संदर्भों की खोज ने प्राचीन मूल्यों का पतन कर प्रत्येक परिवेश में अराजकता का माहौल उत्पन्न कर दिया है। इसी संदर्भ में डॉ. रामगोपाल सिंह चौहान ने लिखा है– ''आज भारत के व्यक्ति और समाज का जीवन एक भयंकर सक्रांति से गुजर रहा है। यह समय देश के आर्थिक नव निर्माण के समान ही नये जीवन निर्माण का भी है। जिसके परिणामस्वरूप जीवन के प्रति दृष्टिकोण, सामाजिक तथा वैयक्तिक मर्यादा, नैतिकता, आदर्श, जीवन के प्रतिमान सभी में आधारभूत परिवर्तन उपस्थित हो रहे है।'' अतः स्पष्ट है कि आज मानव पुरानी व्यवस्था को त्याग नई व्यवस्था को अपना रहा है तथा मूल्य संक्रमण के कारण उन प्राचीन मूल्यों को छोड़ रहा है जो समाज की नींव है। अतः मानव व समाज के विकास व कल्याण हेतु युगानुरुप सही मूल्यों की खोज अनिवार्य है।

4.3.2 साहित्य के संदर्भ में मूल्य संक्रमण का अर्थ –

साहित्य के संदर्भ में मूल्यों का विवेचन अन्य शास्त्रों के तरीको से नहीं किया जा सकता है। मूल्य एक धारणा है जो मानव जीवन की भावना के अनुरूप प्रेरित व नियंत्रित होती है। मानव अस्तित्व के निर्माण हेतु मूल्यों की कल्पना की जाती है। डॉ. जगदीश गुप्त के अनुसार– ''जो वस्तु मानव मन में प्रासाद, प्रेरणा, सार्थकता, आपूर्ति तथा पारितोष की अनुभूति उत्पन्न करने में सक्षम होती है, तभी मूल्यवान होने लगती है।''[72]

व्यक्ति में मूल्य संबंधित भावनाएँ सदैव विध्यमान रही है और वह समाज से प्रेरित होकर उन मूल्यों को अपनी इच्छा, आकांक्षा, प्रेम व घृणा द्वारा ग्रहण करता है। मूल्यों का निर्धारण व चयन व्यक्ति अपने अनुभव व विवेक के आधार पर ही कर सकते है। इसी संदर्थ में अज्ञेय का मत है– ''सब प्रतिमानों का सब मूल्यों का स्त्रोत मानव का विवेक ही है। वही उसे सद्–असद् का ज्ञान देता है, अतः मानव विवेक विकासशील है।''[73]

मनुष्य विवेकशील प्राणी है। उत्पति के संदर्भ में अनेक विचारधाराओं के प्रचलन के समय वह अपने विवेक के द्वारा ही सत् व असत् को जानकार अपूर्णता में पूर्णता को खोजने हेतु प्रयत्नशील रहता है जिसके द्वारा नए मूल्यों की सृष्टि होती है। महावीर दाधीच के अनुसार– ''मूल्य की उत्पति के लिए द्वैत अनिवार्य माना है। अपूर्ण में पूर्णता की लालसा मूल्य–चेतना अर्थात तत्संबद्ध प्रक्रिया का मूल है, यह संबंध पूर्णता की लालसा पूर्ति का साधनभूत प्रयत्न है। यही संबंध अथवा प्रयत्न सब मूल्यों का मूलाधार है।''[74]

एक साहित्यकार जिन मूल्यों को अपने जीवन में स्थान देता है, उन्हीं मूल्यों की अभिव्यक्ति वह साहित्य के माध्यम से करता है। मुक्तिबोध के विचार– ''जो परिवार के मूल्य होंगे, वे जीवन में होंगे और वे साहित्य में भी उतरेंगे। हाँ यह सही है कि साहित्य में आकर

उनकी रूपरेखा बदल जायेगी किन्तु उनके तत्व कैसे बदलेंगे? जिन्दगी के जो रूप है, जो–जो रवैये है, जो एटीच्यूडज हैं वे साहित्य में अवश्य प्रकट होंगे।" मानव मूल्यों का निर्माण परिस्थितियों व परिवेश के अनुसार करता है। अतः परिवेश व कालानुसार साहित्य भी प्रभावित होता है।

मूल्य मनुष्य के मार्गदर्शक होते है। मूल्यों के द्वारा ही मानव व समाज का विकास व कल्याण होता है। मूल्यों के आधार पर मानव अपनी आकांक्षाओं को पूरा करना चाहता है। मानविकी पारिभाषिक कोश में निम्न रूप में मूल्यों को परिभाषित किया है– "साहित्यकार अपनी कृति में जिन अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करता है अथवा जिन मनःस्थितियों को व्यंजित करता है वे साधारण जीवन की अनुभूतियों एवं मनःस्थितियों से श्रेष्ठ एवं अधिक मूल्यवान है वहीं श्रेष्ठ अनुभूतियों को मूल्यों के रूप में ग्रहण किया जाता है।"

साहित्य जीवन की यथार्थता से संबंधित होने के कारण मूल्यों से विमुख नहीं रह सकता है। साहित्य में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे जीवन मूल्यों की व्याख्या को प्रस्तुत किया गया है। साहित्य में कल्याणस्प्रद अर्थों को व्यंजित किया है। स्पष्टतः मूल्य साहित्य में सुक्ष्मरूप से अन्तर्निहित होते है। मूल्य और साहित्य में अर्न्तसम्बन्ध स्थापित करते हुए कमलेश गुप्ता लिखते है– "साहित्य एक सार्थक वक्तव्य होता है और उसमें निहित जीवन मूल्यों से पाठक सीधे प्रभावित होता है।"

साहित्यकार का जन्म भी समाज से होता है, इस कारण वह परिवेश व काल विशेष परिस्थितियों से जुड़ा होता है इसलिए उनके द्वारा रचित साहित्य में मूल्य–चेतना सदैव विध्यमान रहती है। कोई भी साहित्यकार की साहित्य कृति मूल्य–चेतना से विहीन नहीं हो सकती है।

4.3.3 मूल्य संक्रमण के आधार तत्व –

परिवर्तन संसार का नियम है। इसी नियम से संबंधित होने से समाज भी निरन्तर परिवर्तनशील अवस्था में रहता है। प्रत्येक समाज की एक सामाजिक व्यवस्था, नियम व सिद्धांत होते है। व्यक्ति समाज से जुड़ा होने के कारण उसकी सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप नियमों से नियमित व नियंत्रित होता है। कालानुसार सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन के साथ व्यक्ति के मूल्यों में भी परिवर्तन होता रहता है। आज व्यक्ति अपने अस्तित्व की पहचान हेतु प्राचीन मूल्यों को नकारते हुए नयें मूल्यों को स्वीकार कर रहा है। अतः मूल्य परिवर्तन के साथ मूल्य संक्रमण की प्रक्रिया भी प्रारम्भ हो गयी है। फलस्वरूप आधुनिक युग विघटन और अवमूल्यन का युग बन गया है। आज अनेक तत्व मूल्य संक्रमण का आधार बने हुए है– सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि।

भारतीय समाज परिवर्तन की अवस्था से एकाकार हो रहा है। सामाजिक परिवर्तनशीलता ने मूल्य संक्रमण की आधारशिला को बल दिया है। तत्कालीन युग में संवैधानिक प्रावधान, अर्थव्यवस्था, औद्योगिकरण, नगरीकरण, मशीनीयुग व विज्ञान आदि की सामाजिक मूल्यों के परिवर्तन में अहम भूमिका है।

स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय समाज में आमूलचूल परिवर्तन दिखाई देता है। संविधान की स्थापना व संवैधानिक अधिकारों ने व्यक्ति के महत्व को स्पष्ट किया। मताधिकार, वर्ण व्यवस्था, प्राचीन मूल्यों का अवमूल्यन व संवैधानिक प्रावधानों द्वारा स्त्री–पुरुष में समानता आदि दृष्टिकोणों ने समाज की दिशा को ही बदल दिया। पराधीन भारत में प्राचीन मूल्यों के प्रति आक्रोश शुरू हुआ लेकिन संविधान द्वारा कानूनी रूप से उन मूल्यों को समाप्त किया गया और नवीन मूल्यों की स्थापना की गई।

समाज के बदलते परिवेश में आर्थिक विषमताओं, शिक्षा, विज्ञान व औद्योगीकरण ने मूल्य संक्रमण द्वारा पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव डाला है। जिसके कारण व्यक्ति ने अपने निजी स्वार्थवश परिवार की नींव को तोड़ दिया फलस्वरूप संबंधों में तनाव व अलगाव की स्थिति पैदा हो गई है। जिसके कारण समाज व परिवार में निराशा, कुंठा, हताशा आदि प्रवृतियों ने जन्म लेकर दया, प्रेम, करुणा, श्रद्धा, विश्वास व सहानुभूति जैसे मूल्यों को खण्डित कर सभी मूल्य स्वरूपी भावनाओं का अवमूल्यन कर दिया है।

शिक्षा व विज्ञान का मूल्य संक्रमण के आधार में विशेष योगदान है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति के मन में नई चेतना शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ जिसके द्वारा स्त्री व पुरुषों के बीच समानता स्थापित हुई व उनके मध्य संबंधों में परिवर्तन हुआ। प्रेम व यौन संबंधों का स्वरूप भी बदल गया। स्त्री पुरुष के नैतिक मानदंड में बदलाव आया है। पाप व पुण्य का आधार धर्म न होकर सामाजिक चेतना बन चुका है। जिसके कारण प्रेम विवाह, तलाक, अन्तर्जातीय विवाह जैसी प्रथाएँ प्रचलित होकर विवाह की आधारशिला को खण्डित कर दिया है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था व भ्रष्टखोरी ने युवा को बेकारी व निराशा के गर्त में ढकेल आक्रोशित व विद्रोही बना दिया है। जिसके कारण वह प्राचीन मूल्यों को अस्वीकार कर रहा है।

विज्ञान व औद्योगिकरण ने मूल्यों पर सर्वाधिक प्रभाव डाला है। औद्योगिकरण व तकनीकी विकास ने भौगोलिक सीमाओं को कम कर नवीन परिस्थितियाँ उपलब्ध करायी है। आधुनिक समाज, संस्कृति व मानव पर विज्ञान व मशीन हावी हो गई है। आज मनुष्य विज्ञान द्वारा स्थापित तर्कों के माध्यम से अंधविश्वासों से मुक्त होकर नई सोच को विकसित कर रहा है। वैज्ञानिक सोच ने धार्मिक व सामाजिक बंधनों को शिथिल कर दिया है।

वर्तमान परिवेश में औद्योगिकीकरण व विज्ञान ने व्यक्ति व परिवार के बीच एक दीवार को खड़ा कर दिया। आज व्यक्ति वैयक्तिक स्वतंत्रता को प्रमुख मानकर निजी स्वार्थवश प्रेम व आत्मीय संबंधों को नष्ट कर चुका है। आज पारिवारिक रिश्ते अर्थ पर आश्रित हो गये है। इस दृष्टि ने पारिवारिक व सामाजिक अवधारणाओं को पूर्णरुपेण बदल डाला है।

आज का युग अर्थ प्रधान युग बन गया है। अतः सर्वत्र विश्व में आर्थिक संदर्भों को लेकर संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई है। प्रत्येक देश व समाज के संचालन हेतु अर्थव्यवस्था का महत्व सर्वोपरि है। इस कारण आर्थिक व सामाजिक मूल्यों का परस्पर घनिष्ठ संबंध है। अर्थ समाज व देश का मेरुदण्ड है। इसके द्वारा समाज की विभिन्न व्यवस्थाओं का संचालन होता है। आज गरीब व उच्च वर्ग, मजदूर व पूंजीपति वर्ग में निजी स्वार्थों से उत्पन्न संघर्ष ने मूल्य संक्रमण की स्थिति उत्पन्न कर दी है। ग्रामीण कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था परिवर्तित होकर औद्योगिकरण की ओर बढ़ रही है। फलस्वरूप ग्रामीण अर्थव्यवस्था विलुप्त होती जा रही है और नगरों के विकास के कारण नगरीकरण की व्यवस्था बढ़ रही है। इन परिस्थितियों ने व्यक्ति और समाज के बीच संघर्ष को जन्म देकर अनेक विसंगतियों को बढावा दिया जिसने सामाजिक विघटन की स्थिति को प्रोत्साहन देकर मूल्य संक्रमण की स्थिति को आधार प्रदान किया है।

आर्थिक स्थिति व्यक्ति के समाजगत व्यवहार को भी प्रभावित करती है। बेरोजगारी, गरीबी, मंहगाई, जीविकोपार्जन के साधनों की प्राप्ति का दुष्कर होना आदि विषंगतियाँ व्यक्ति को असामाजिक व्यवहार को अपनाने की ओर प्रेरित करती है। जिसके कारण चोरी, डकैती, हत्या, बाल अपराध जैसे असामाजिक तत्वों को बढ़ावा मिलता है।

औद्योगिकीकरण व आधुनिकीकरण से भी मूल्य संक्रमण को प्रोत्साहन मिला है। आधुनिकता के दौर में कपड़े, कॉस्मेटिक व फैशन पर किये गए व्यय को व्यक्ति ने अपनी रुतबे का पर्याय बना लिया है। इसके कारण व्यक्ति अपनी परम्पराओं से विमुख होकर आधुनिकता के नाम पर खोखला व मूल्यहीन बनाता जा रहा है।

नगरीकरण व आर्थिक स्तर की समृद्धता ने भी मूल्य संक्रमण को आधार प्रदान किया है। आज व्यक्ति समाज में अपने आर्थिकस्तर को अधिक समृद्ध बताने हेतु किसी भी तरह के भ्रष्ट आचरण द्वारा साधन प्राप्ति हेतु प्रयासरत है। आर्थिक संपन्नता को बढ़ाने के लिए आज सभी पारिवारिक व आत्मीय संबंध भी अपना अस्तित्व खोकर खोखले व बोझ बनते जा रहे है। आजीविका हेतु नगरों की ओर पलायनवाद ने भी रिश्तों को खोखला कर दिया है। व्यक्ति का नैतिक स्तर भी गिरता जा रहा है। नगरीकरण ने व्यक्ति को अपने

अतीत व जड़ों से काटकर उसे भाग्यवाद, निराशावाद, कुंठा, अकेलापन, अजनबीपन व व्यक्तिवाद की ओर ढकेल दिया है। इस अर्थ प्रधान व्यवस्था ने पति–पत्नी के संबंधों में भी अलगाववाद को स्थान देकर प्रेम, विश्वास, आत्मीयता जैसे मूल्यों को समाप्त कर दिया है।

इस अर्थ प्रधान समाज ने नारी के प्रति अपने विचारों को परिवर्तित कर सामाजिक स्तर पर नये विचारों को परिपुष्ठ किया है। आज लड़कियों को शिक्षित कर अपने पैरों पर खड़े होकर आत्मनिर्भर बनने की राह को सशक्त किया है। जिसने महिला की स्वतंत्रता व आर्थिक सुरक्षा को संबल प्रदान किया है।

सामाजिक व आर्थिक तत्वों की तरह राजनैतिक स्तर पर परिवर्तन ने भी मूल्य संक्रमण को आधार प्रदान किया है। स्वतंत्रता ने राजनैतिक विषमताओं को जन्म दिया है। जिसमें व्यक्ति ने अपने आप को सुरक्षित करने हेतु व्यक्तिवादी चेतना का विकास किया। जिसने व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के हितों में संघर्ष प्रारम्भ कर मानवीय मूल्यों को नष्ट कर दिया है और मनुष्य वर्गों व संप्रदायों में विभक्त हो गया। फलस्वरूप भष्टाचार, रिश्वतखोरी, कालाबाजारी, प्रांतीयवाद, सांप्रदायिकतावाद, जातिवाद, जैसे तत्वों को बल मिला और व्यक्ति अमानवीय जीवन जीने की ओर अग्रसर होने लगा है। इसी संदर्भ डॉ. राममनोहर लोहिया के विचार है– "आज सारा देश टूटा हुआ है। देश की आत्मा टूट गई है....... इतिहास में और कोई भी ऐसा देश है जो इतना टूटा हुआ है। जितना हिन्दुस्तान।"[75]

सामाजिक, राजनैतिक तत्वों के परिवर्तन स्वरूप धार्मिक मूल्यों में परिवर्तन हुआ। आधुनिक युग में ईश्वर के स्थान पर मनुष्य व उसके कर्मों को महत्व दिया जाने लगा तथा जीवन में किसी आध्यात्मिक सत्ता में अविश्वास की भावना विकसित होने लगी।

स्वतंत्रता से पूर्व धर्म के नाम पर अनेक बुराईयाँ मूर्तिपूजा, छुआछूत, धार्मिक कट्टरपंथी समाज में व्याप्त थी। जिसने मनुष्य को भय, निराशा व असुरक्षा के वातावरण में धकेल दिया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अनेक सामाजिक आंदोलनो द्वारा उनका विरोध कर उन्हें नकार दिया गया।

इसी संदर्भ में मार्क्स ने धर्म को अफीम की संज्ञा से अभिहित किया। स्ट्रास ने भी कहा है कि– "क्या अब भी हमारा कोई धर्म शेष है।" नीत्से ने कहा– "ईश्वर मर चुका है।" अतः मूल रूप से धार्मिक मूल्य संक्रमण पाश्चात्य की देन है। पाश्चात्य संस्कृति ने धर्म की प्राचीन मान्यताओं को अस्वीकार करते हुए अंध श्रुद्धा व भक्ति को समाप्त किया और नवीन वैज्ञानिक दृष्टि विकसित कर समन्वित धर्म की प्रतिष्ठा की है।

अतः कह सकते है कि जब प्राचीन मूल्य जीवन संबंधी अपनी उपयुक्ता को खो देते है तो उनके स्थान पर नये मूल्यों की स्थापना होती जिसे मूल्य संक्रमण की स्थिति कहते

है। मूल्य संक्रमण हेतु सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व धार्मिक सभी तत्वों का प्रमुख योगदान है।

4.3.4 मूल्य परिवर्तन की दिशाएँ –

जब कोई वस्तु अपने मूल स्वरूप को त्याग कर नये स्वरूप को धारण करती है तो उसे परिवर्तन कहते है। परिवर्तन शाश्वत व अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है। प्रत्येक समाज की संरचना परिवेश तथा देशकाल की परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती है और परिस्थितियों के बदलने के अनुसार समाज प्रदत्त मूल्यों में भी परिवर्तन होता है। मूल्य परिवर्तन भी एक अनवरत प्रवाहित होने वाली प्रक्रिया है। युग के अनुरूप मूल्यों में परिवर्तन होता रहता है। समाज में कई रूढ़ियाँ, परम्पराएँ व मान्यताएँ प्रचलित है जो समाज के वास्तविक ढाँचे को विकृत कर देते है। इस विकृतता को नष्ट करने हेतु मनुष्य नवीन मूल्यों का निर्माण करता है। मूल्य परिवर्तन की प्रक्रिया स्वयं नहीं होती है अपितु युगानुरूप परिस्थितियाँ व मूल्य निर्माण मूल्य परिवर्तन हेतु जिम्मेदार होती है। प्रत्येक समय में मूल्य परिवर्तन के भिन्न–भिन्न कारण विध्यमान होते है और जिन कारणों से मूल्य परिवर्तन होता है, वो निम्नानुसार विवेचित है–

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बीच रहते हुए व समाज द्वारा प्रदत्त आचरणों व व्यवहारों को आत्मसात करते हुए वह अपने जीवन को विकासमान बनाना चाहता है। मनुष्य सतत चिंतनशील रहते हुए विचारों व धारणाओं का निर्माण करता है। इन्हीं धारणाओं के सृजन हेतु वह आदर्श व यथार्थ के बीच जूझता रहता है। आदर्श व यथार्थ से संबंधित होने के कारण दोनों के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। मनुष्य यथार्थ से मुखालफत रखने के कारण आदर्श युक्त नये मूल्यों का सृजन करता है।

मानव सदैव से महत्वाकांक्षी व प्रगतिशील रहा है। मूल्य व्यक्ति की इन्हीं महत्वाकांक्षाओं व आकांक्षाओं की पूर्ति का माध्यम होते है। मूल्यों के अभाव में व्यक्ति निष्क्रिय हो जाता है। मनुष्य अपनी इन्हीं अभिलाषा व इच्छाओं की पूर्ति हेतु सक्रिय रहकर नवीन मूल्यों का निर्माण करता है। डॉ. नित्यानंद तिवारी के अनुसार– "मूल्य सदैव विवशता के भीतर उपजता है, संबंधों के संतुलन में उपजता है।"

मूल्य सदैव सनातन या शाश्वत रूप में नहीं रहते है अपितु समय व परिवेश के अनुसार परिवर्तित होते रहते है क्योंकि प्रत्येक काल व समय में समस्याएँ भी भिन्न–भिन्न होती है और उनका समाधान भी। जो मूल्य समय के अनुरूप अपनी प्राथमिकता खो देते है, उनके स्थान पर समयसापेक्ष मनुष्य अपनी आवश्यकताओं व बुद्धिमता के अनुसार नवीन मूल्यों का निर्माण करता है। डॉ. रमेश कुंतल मेघ के अनुसार– "बदले हुए सामाजिक संबंधों

के फलस्वरूप जब विराट जनता में नये जीवन–मान और जीवनानदर्शों को स्थापित करने की उद्दिग्नता होती है और जब उन्हीं के प्रतिनिधि स्वरूप मानवातावादी, दार्शनिक कलाकार धर्मगुरु या अन्वेषक समाज के उपेक्षित अथवा नये तत्वों की ओर ध्यान देते है और मानव समाज की आवश्यकताओं को समझते है तो नये मूल्यों की सृष्टि होती है।" अतः स्पष्ट है कि पुरातन सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन के साथ नवीन व्यवस्था में मानव के बदलते संबंध व रुचियाँ नये जीवन मूल्य के निर्माण हेतु प्रेरक बनते है।

प्रत्येक युग के अपने मूल्य होते है जो समकालीन परिवेश व समय के साथ गतिशील व विकसित होते है। मूल्य कभी भी समाप्त नहीं होते बल्कि अप्रासंगिक होकर परिवर्तित हो जाते है। कालानुसार व्यक्ति की आवश्यकताएँ व सोच बदलती रहती है। जिसके कारण मूल्य सापेक्ष नवीन धारणाएँ उत्पन्न होती है। क्योंकि समाज कभी भी मूल्य विहीन नहीं हो सकता है। अतः प्रत्येक समाज काल सापेक्ष नवीन मान्यताओं व धारणाओं को ग्रहण करता है।

मूल्यों का विकास समाज के विकास के साथ होता है और समय–समय पर मूल्यों के प्रति समाज का नजरिया भी बदलता रहता है। समाज की नींव जितनी गहरी होगी मूल्य भी उतने ही प्राचीन होंगे। समाज की विभिन्न मान्यताओं व परम्पराओं के साथ मूल्यों का निर्माण हुआ परन्तु समाज जैसे–जैसे सभ्य, शिक्षित होने लगा और धारणाओं को बुद्धि व तर्क के आधार पर परखने लगा। वैसे ही समाज के प्रति व्यक्ति का दृष्टिकोण बदलने लगा और सामाजिक धारणाओं के खण्डन के साथ प्राचीन मूल्य विलुप्त होकर नवीन सार्थक मूल्यों की स्थापना हुई। अतः स्पष्ट है कि मूल्यों की अपनी कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं होती है। बल्कि मूल्यों का निर्माण समाज के विकास व निर्माण से संबंधित होता है।

वर्तमान युग में मूल्य परिवर्तन में औद्योगिकरण व विज्ञान की अहम भूमिका है। आज व्यक्ति शिक्षित व सभ्य हो गया है और प्रत्येक वस्तु को विज्ञान के तर्क के आधार पर परखने लगा है। जिससे नैतिक व आत्मीय संबंधों से संबंधित मूल्यों का विघटन हो रहा है और उनका स्थान नवीन व्यक्तिवादी मूल्यों ने ले लिया है। इसी संदर्भ में धर्मवीर भारती के शब्द– "सम्पूर्ण सम्यता जिन मूल्यों पर आधारित थी, वे झूठे पड़ गये है, परिणाम यह है कि एक भयानक विघटन उपस्थित हो गया है।" अतः कहा जा सकता है कि समय के अनुसार मूल्य निर्माण व विकास के साथ मूल्य संक्रमण की प्रक्रिया निरन्तर गतिशील रहती है।

4.4 समकालीन महिला उपन्यास लेखन में मूल्य–चेतना –

मूल्य तथा व्यक्ति का गहरा संबंध होता है। मूल्य ही किसी भी स्वस्थ समाज का मेरुदण्ड होता है। मूल्यों का संबंध मानव के विवेक से है। विवेक के द्वारा ही विचारधारा

का प्रादुर्भाव होकर एक दृष्टिकोण का जन्म होता है। इसी दृष्टिकोण के द्वारा मूल्यों का सृजन होता है।

मूल्य समाज के सृजनकर्ता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में रचनात्मक और सर्जक मूल्यों की आवश्यकता होती है। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व दार्शनिक सभी क्षेत्रों में मूल्यों को तलाशने की आवश्यकता है। एक महान साहित्यकार वही होता है जो मानवीय मूल्यों को अपनी रचना में व्यक्त करें और जो मूल्य समाज के विकास में बाधक हो उन्हें नकारे। साहित्य के मूल्य जीवन मूल्यों से भिन्न नहीं होते है। इसी परिपेक्ष्य में समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतना के स्वरूप का अध्ययन करने का प्रयास इस अध्याय में किया गया है।

उषा देवी मित्रा हिन्दी साहित्य में एक प्रसिद्ध नाम है। उषा जी ने अपने उपन्यास 'वचन का मोल' में कंजरी द्वारा वचन पालन की दृढ़ता को प्रस्तुत कर मूल्य के आदर्शरूप को स्पष्ट किया है। 'जीवन की मुस्कान' उपन्यास में सामाजिक व आर्थिक मूल्य को अभिव्यक्ति करते हुए मूल्य विघटन को दर्शाया है। 'पथचारी' उपन्यास में आर्थिक असमानता व बेकारी की समस्या से अवगत कराते हुए युवा पीढ़ी द्वारा प्राचीन मूल्यों को नकारते हुए नवीन अवमूल्यों को आत्मसात करने पर प्रकाश डाला है।

स्वातंत्र्योत्तर महिला उपन्यासकारों में कृष्णा सोबती शीर्षस्थ महिला लेखिका है। कृष्णा सोबती ने अपने उपन्यासों में प्राचीन व रूढ मूल्यों से त्रस्त नारी की पीड़ा व संवेदना को उजागर किया है। इनके 'मित्रो मरजानी' उपन्यास में नारी जीवन के आदर्शवादी मूल्यों के पतन व अवमूल्यन की अभिव्यक्ति हुई है। लेखिका ने इस उपन्यास के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि कामवासना का भूखा व्यक्ति कोई भी अमानवीय व अनैतिक कार्य करने के लिए आतुर रहता है। 'डार से बिछुडी' उपन्यास समाज में व्याप्त खोखले मूल्यों की पोल खोलता है। इसमें स्पष्ट किया है कि पुरुष प्रधान समाज में पुरुष ने सदैव नारी का शोषण किया है। समकालीन युग में समाज में नारी का क्रय–विक्रय व अस्मत का तार–तार होना सामान्य बात थी। इस उपन्यास में पुरुषों के द्वारा नारी के प्रति उत्पीड़न व अमानवीय रूप को दर्शाया है।

मन्नु भण्डारी नारी अस्तित्व हेतु सामाजिक व पारिवारिक पक्ष को उद्‌घाटित करने वाली साहित्यकार है। इन्होंने अपने उपन्यास 'आपका बंटी' में विवाह तथा दांपत्य जीवन से संबंधित मूल्य दृष्टि का निरूपण किया है। परम्परागत रूप में पति–पत्नी का संबंध स्थायी व पवित्र माना जाता था लेकिन वर्तमान में नर तथा नारी अपने दांपत्य संबंध को अपनी स्वतंत्रता में बाधक मानते है। 'महाभोज' में इन्होंने शाश्वत व आदर्श राजनैतिक मूल्यों के

विघटन को दर्शाया है। इन्होंने अपने उपन्यास में राजनीति के कुत्सित परिवेश को उद्घाटित किया है।

स्वातंत्र्योत्तर महिला उपन्यासकारों में मृदुला गर्ग का एक विशिष्ट स्थान है। इन्होंने नारी के प्रेम और काम भावना संबंधी नवीन मूल्य दृष्टि को व्यक्त किया है। इन्होंने अपने उपन्यास 'चितकोबरा' में प्रेम व सेक्स से संबंधित भारतीय आदर्शरूपी मूल्यों का हनन करते हुए पाश्चात्य संस्कृति के नवीन मूल्यों के साक्ष्य को स्थापित किया है। इस प्रकार उन्होंने प्राचीन प्रेम संबंधी मूल्यों के अवमूल्यन को स्थापित किया है। इनका 'वंशज' उपन्यास लीक से हटकर उपन्यास है। इसके अन्तर्गत इन्होंने दो पीढ़ियों के मध्य उत्पन्न विचारों के अन्तराल को उद्घाटित किया है। इन्होंने स्पष्ट किया है कि जो मूल्य एक पीढ़ी के लिए उचित हो वह जरूरी नहीं की दूसरी पीढ़ी के लिए भी उचित हो। अर्थात दोनों पीढ़ियों के लिए मूल्यों की सार्थकता की परिभाषा भिन्न–भिन्न हो सकती है।

मालती जोशी हिन्दी साहित्य की एक चिरपरिचित उपन्यासकार है। इन्होंने अपने उपन्यास 'पाषाण युग' में विवाह के कई रूपों को उद्घाटित किया है तथा विवाह के रूप विधवा विवाह व बेमेल विवाह से संबंधित प्रश्नों को उठाया है। विधवा विवाह का समर्थन किया है और बेमेल विवाह का विरोध किया है। दूसरे उपन्यास 'राग विराग' के द्वारा परिवार रूपी संस्था की जड़ों को मजबूत रखने के लिए परोपकार, भाईचारा, सेवाभाव, पति प्रेम, कर्तव्यपरायणता जैसे मनवातावादी मूल्यों को प्रतिष्ठित किया है।

उषा प्रियवंदा हिन्दी साहित्य जगत में एक अलग स्थान रखती है। यह नारी जीवन में संस्कार रूपी मूल्यों को स्वीकारते हुएँ नवीन मूल्यों की आकांक्षिणी है। इन्होंने अपने उपन्यास 'पचपन खम्बे लाल दीवारें' में नारी से सम्बन्धी मूल्यों को उद्घाटित किया है। इन्होंने सामाजिक व्यवस्था से पीड़ित नारी की मार्मिक दशा को प्रस्तुत करते हुए अपने मनोभावों का दमन कर नारी के आदर्श रूपी मूल्यों को स्थापित किया है। इनके 'शेषयात्रा' उपन्यास में आधुनिक नारी के जीवन की समस्याओं को केन्द्रित कर आधुनिक नारी के अर्थ व स्वतंत्रता सम्बन्धी नवीन मूल्यों का उदघाटन किया है।

मेहरुन्निसा परवेज का अपना एक अलग मूकाम है। इन्होंने संघर्ष व तनाव से आंक्रात लोगो की मानसिकता को उभारा है। इन्होंने अपने उपन्यास 'कोरजा' में मुस्लिम जीवन व संस्कृति को अपनी पृष्ठभूमि बनाया है। इन्होंने इस उपन्यास के द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी परिवर्तित होते पारिवारिक, सामाजिक व नैतिक मूल्यों को प्रस्तुत किया है तथा नारी के नैतिक पतन का भी यथार्थ चित्रण किया है।

राजी सेठ पारदर्शी लेखन के कारण अपना अलग स्थान हिन्दी साहित्य जगत में रखती है। इनका उपन्यास 'निष्कवच' में इन्होंने भारतीय व पाश्चात्य संस्कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन व विवेचन करते हुए दोनों संस्कृतियों के मूल्यों को स्थापित किया है। लेखिका ने सबसे बड़ा मूल्यों का अन्तर अर्थ से किया है। पाश्चात्य संस्कृति में सभी रिश्ते अर्थ से जुड़े हुए है तथा भारतीय संस्कृति में सभी संबंध अर्थ पर आधारित नहीं है। सम्बन्धों में भावात्मकता का वास विद्यमान है। आज भी भारतीय संस्कृति पुराने व आदर्श मूल्यों को संजोए हुए है।

शिवानी एक संवेदनशील साहित्यकार है। इन्होंने अपने उपन्यास 'कृष्णकली' में समाज को जड़ मूल्यों से आहत होकर संघर्ष करते हुए विवेचित किया है। नारी के अस्तित्व हेतु नारी जीवन के नवीन मूल्यों को स्थापित किया है। इस उपन्यास के द्वारा इन्होंने समाज द्वारा मूल्यों के नाम पर नारी के शोषण को भी उद्घाटित किया है।

चित्रा मुद्गल आठवें दशक की प्रसिद्ध लेखिका है। इन्होंने अपने साहित्य के द्वारा समयानुसार मूल्यों में परिवर्तन कर नवीन मूल्यों की स्थापना की है अर्थात समय व परिवेश के अनुसार नवीन तथा सार्थक मूल्यों की स्थापना। इन्होंने अपने उपन्यास 'एक जमीन अपनी' में आधुनिकता के दौर में नारी के नये स्वरूप की पहचान द्वारा नारी जीवन से संबंधित नवीन मूल्यो की नींव को रखा है। समाज द्वारा प्रदत्त जड़ व निरर्थक मूल्यों को नकारते हुए समय सापेक्ष नारी के स्वालम्बन व अस्तित्व हेतु नवीन मूल्यों को उजागर किया है।

ममता कालिया व्यक्ति परक चेतना से सम्पुष्ठ एक आधुनिक लेखिका है। इन्होंने अपने उपन्यास 'बेघर' के द्वारा नारी के त्रासदी को वर्णित किया है। इन्होंने दकियानूसी विचारधारा तथा अधूरे ज्ञान के कारण पुरुष की संकुचित मानसिकता के द्वारा नारी के चरित्र पर लांछन की पीड़ा को उजागर किया है। ममता जी ने अपने उपन्यास द्वारा हर अपराध हेतु नारी पर दोषारोपण का विरोध करते हुए पुरुष की संकुचित मानसिकता में परिवर्तन का उद्देश्य निर्दिष्ट किया है। अतः इन्होंने इस उपन्यास के माध्यम से नारी के द्वारा अपने अस्मिता हेतु समाज के विरुद्ध खड़े होने संबंधी मूल्यों का आह्वान किया है।

हिन्दी साहित्य जगत में स्वस्थ व सटीक लेखन हेतु सूर्यबाला एक प्रसिद्ध नाम है। इन्होंने समाज के सामने गंभीर विषयों को उठाया है। इन्होंने अपने उपन्यास 'मेरे संधिपत्र' में अनमेल विवाह के रूप व उससे जुड़ी समस्याओं को उद्घाटित किया है। परिवार रूपी संस्था के लिए अहितकारी अनमेल विवाह का पुरजोर विरोध दर्शाते हुए विवाह से संबंधित ऐसी मूल्य हीनता का खण्डन किया है। वहीं इनके दूसरे उपन्यास 'सुबह के इंतजार तक'

में समाज व पुरुष की रूगण मानसिकता को उजागर किया है। हमारे समाज की संरचना में हर स्थान पर पुरुषों को श्रेष्ठ मानने के कारण समाज में नारी को बलात्कार जैसे अपराध से भी रूबरू होना पड़ता है। अतः लेखिका ने समाज द्वारा पुरुष श्रेष्ठ रूप विचारधारा का हनन करते हुए समाज में नारी समानता के समर्थक मूल्यों की स्थापना का प्रयास किया है।

निष्कर्षतः समकालीन महिला लेखिकाओं ने अपने साहित्य के द्वारा रूढ़ हो चूके सामाजिक व मानवीय मूल्यों का पुरजोर खण्डन किया है तथा उनके स्थान पर समाज व समय सापेक्ष नवीन तथा सार्थक मूल्यों की सफल अभिव्यक्ति हेतु समाज में नव विचारधारा को आत्मसात् करने का आग्रह किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. द सोशियल स्ट्रक्चर ऑफ वेल्युस, राधाकमल मुखर्जी, पृष्ठ – 21
2. हिन्दी साहित्यकोश, प्रभाकर माचवे (सं.) भाग–1, पृष्ठ – 660
3. एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, सं. 1968, पृष्ठ– 962
4. मानविकी परिभाषा कोश(दर्शन खंड), सं. 1965, डॉ नगेंद्र, पृष्ठ – 186
5. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में परिवर्तित नारी जीवन मूल्य, डॉ छाया देवी घोरपड़े,पृष्ठ – 31
6. हिन्दी उपन्यास और जीवन मूल्य, श्रीमती अंजुलता गौड़, पृष्ठ – 23
7. साहित्यमुखी, रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ – 56
8. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, डॉ देवराज, पृष्ठ – 168
9. साठोत्तर हिन्दी कहानी– मूल्यों की तलाश, डॉ वासुदेव शर्मा,पृष्ठ – 13
10. अध्ययन और आस्वाद, बाबू गुलाबराय, पृष्ठ – 2
11. भारतीय सौंदर्यशास्त्र की भूमिका, डॉ नगेंद्र, पृष्ठ – 160
12. साहित्य अमृत, सं. डॉ लक्ष्मी नारायण सिंघवी, पृष्ठ – 3
13. मानवमूल्य परक शब्दावली का विश्वकोश, चतुर्थ खंड, पृष्ठ – 1429
14. विविधा, डॉ लक्ष्मीसागर , पृष्ठ – 31
15. जयशंकर प्रशादः वस्तु और कला, डॉ रमेशवरलाल खंडेलवाल, पृष्ठ – 823
16. बदलते मूल्य और आधुनिक हिन्दी नाटक, डॉ ओमप्रकाश सारस्वत, पृष्ठ – 64
17. नयी कविता में मूल्य बोध, शशि सहगल, पृष्ठ – 25
18. हिन्दी उपन्यास और जीवन मूल्य, डॉ मोहिनी शर्मा, पृष्ठ – 23
19. नयी कविता में मूल्य बोध, शशि सहगल, पृष्ठ – 15

20. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में मूल्य संक्रमण, पानेरी, पृष्ठ – 11
21. मूल्यः संस्कृति, साहित्य और समय, रत्ना लाहिडी, पृष्ठ – 12
22. डॉ पूरनचंद टंडनः साहित्य और मानवीय मूल्य, मार्च–अप्रैल–2007, पृष्ठ – 74
23. मानवमूल्य परक शब्दावली का विश्वकोश, चतुर्थ खंड, पृष्ठ –1421
24. हिन्दी नाटक मूल्य चिंतन और रंग दृष्टि, डॉ ओमप्रकाश सारस्वत, पृष्ठ – 15
25. डॉ धर्मपाल मैनी– संत साहित्य में मानव मूल्य, मधुमती, अप्रैल–मई–2004, पृष्ठ – 5
26. द अमेरिकन एनसाइक्लोपीडिया, निकोलाई हार्टमन (भाग–19), पृष्ठ – 199
27. बदलते मूल्य और हिन्दी नाटक, डॉ ओमप्रकाश सारस्वत, पृष्ठ – 6
28. फंडामैंटल ऑफ एथिक्स, डब्ल्यू. एम. अर्बन, पृष्ठ –16–17–18
29. निराला के कथा साहित्य में मूल्य चेतना, दिनेश कुमारी, पृष्ठ – 70
30. वही, पृष्ठ – 71
31. प्रिन्सिपल ऑफ लिटरेसी क्रिटिसिज्म, आई.ए. रिचर्ड्स, पृष्ठ – 42
32. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास, मूल्य संक्रमण, डॉ हेमेन्द्र पानेरी, पृष्ठ – 13
33. निराला के कथा साहित्य में मूल्य चेतना, दिनेश कुमारी, पृष्ठ – 70
34. द डवलपमेंट ऑफ सोशियल थोट, बोगार्ड्स, पृष्ठ – 636
35. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास, मूल्य संक्रमण, डॉ हेमेन्द्र पानेरी, पृष्ठ – 2
36. द डिमेनशंस ऑफ वैल्यूस, डॉ राधाकमल मुखर्जी, पृष्ठ – 9
37. संस्कृति के चार अध्याय, डॉ रामधारी सिंह दिनकर, पृ.– 656
38. सौन्दर्य मूल्य और मूल्यांकन, डॉ. रमेश कुंतल मेघ, पृष्ठ – 34
39. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास में मानव मूल्य और उपलब्धियाँ, डॉ भागीरथ बडोले, पृष्ठ – 31
40. हिन्दी उपन्यास और जीवन मूल्य, डॉ मोहिनी शर्मा, पृष्ठ – 8
41. मूल्य की अवधारणा और रिचर्ड्स, डॉ धर्मपाल मैनी, पृष्ठ – 6
42. धर्म और समाज, डॉ एस राधाकृष्णन, पृष्ठ – 104
43. कल्याण, धर्मांक, पृष्ठ – 698
44. वहीं पृष्ठ – 458
45. आधुनिक काव्य में नवीन जीवन मूल्य, डॉ हुकुमचंद राजपाल, पृष्ठ – 118
46. भारतीय नीतिशास्त्र का इतिहास, डॉ भीखमराज अजेय, पृ. – 619
47. भारतीय सामाजिक संस्थाएँ, डॉ गोपाल, पृष्ठ – 94–95
48. भारतीय संस्कृति के आधार, प्रो. एस पी कर्नल, पृष्ठ – 11

49. डॉ के एम कापड़िया– भारत वर्ष में विवाह एवं परिवार, अनु. हरिकृष्ण रावत, पृष्ठ – 26 –27
50. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, डॉ देवराज, पृष्ठ – 79
51. आठवें दशक की हिन्दी कहानी और जीवन मूल्य, डॉ रमेश देशमुख, पृष्ठ – 22
52. रिलीजियस एंड द मॉडर्न माइंड, स्टेस, पृ. – 26
53. आधुनिक काव्य में नवीन जीवन मूल्य, डॉ हुकुमचंद राजपाल, पृ.– 70
54. हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य, डॉ रमेशचन्द्र लवानिया, पृष्ठ – 14
55. भारतीय जीवन मूल्य, डॉ धर्मपाल मैनी, पृष्ठ – 7
56. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, डॉ देवराज, पृष्ठ – 163
57. जलते और उबलते प्रश्न, डॉ विश्वम्भर उपाध्याय, पृष्ठ – 23
58. मानव मूल्य और साहित्य, धर्मवीर भारती, पृष्ठ – 28
59. धर्मगाथा और जातीय संघर्ष, डॉ ममता गुप्ता, पृष्ठ – 56
60. हिन्दी की राष्ट्रीय काव्यधाराः एक समग्र अनुशीलन, डॉ देवराज शर्मा पथिक, पृष्ठ – 45
61. भारतीय जीवन मूल्य, डॉ धर्मपाल मैनी, पृष्ठ – 9
62. नयी समीक्षा, नये संदर्भ, डॉ नगेंद्र, पृष्ठ – 80
63. साहित्यमुखी, दिनकर, पृष्ठ – 56 – 57
64. साहित्य समीक्षा, बाबु गुलाबराय, पृष्ठ – 18
65. अज्ञेय की काव्य संवेदना, डॉ कमल कुमार, पृष्ठ – 128
66. मानव मूल्य और साहित्य, डॉ धर्मवीर भारती, पृष्ठ – 1
67. भारतीय संस्कृति में मानव मूल्य और लोक कल्याण, सुकेश शर्मा, पृष्ठ – 10
68. साठोत्तरी महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में पात्रों का परिवर्तित मूल्य–बोध, डॉ सीता मिश्र, पृष्ठ – 13
69. अशोक के फूल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ – 78
70. भारतीय संस्कृति में मानव मूल्य और लोक कल्याण, सुकेश शर्मा, पृष्ठ – 5
71. मानव मूल्य और साहित्य, डॉ धर्मवीर भारती, पृष्ठ – 65
72. नई कविता स्वरूप और समस्याएँ, डॉ जगदीश गुप्त, पृष्ठ –1
73. हिन्दी साहित्य का आधुनिक परिदृश्य, अज्ञेय, पृष्ठ – 10
74. आधुनिकता और भारतीय परंपरा, महावीर दाधीच, पृष्ठ 37–38
75. राममनोहर लौहिया के विचार, सं. ओंकार शरद, पृष्ठ – 390

पंचम अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यासों में मूल्यों के विविध पक्ष

पंचम अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यासों में मूल्यों के विविध पक्ष

प्रस्तावना

5.1 सामाजिक मूल्य

5.1.1 बदलते सामाजिक दृष्टिकोण व समाज का स्वरूप

5.1.2 पारिवारिक विघटन व संबंधों में अलगाव

5.1.3 नारी चेतना शक्ति के रूप

5.1.4 समाज में नारी का स्वरूप

5.1.5 दहेज संबंधी विकृत मूल्य

5.1.6 रूढ़ियों व परम्पराओं के प्रति विद्रोह

5.1.7 दाम्पत्य जीवन की विकृतियाँ

5.2 आर्थिक मूल्य

5.2.1 नारी विषयक आर्थिक आयाम

5.2.2 बिगड़ते पारिवारिक समीकरण

5.2.3 दहेज प्रथा का उन्मूलन

5.2.4 सामाजिक व व्यावसायिक मूल्य में द्वंदात्मक स्थिति

5.2.5 आर्थिक विषमता

5.3 राजनैतिक मूल्य

5.3.1 राजनीतिक परिवेश

5.3.2 व्यापार की राजनीति

5.3.3 भ्रष्ट राजनीति

5.3.4 श्वेत–अश्वेत संघर्ष

5.3.5 मार्क्सवाद प्रभावित राजनीति

5.3.6 राजनीति का विकृत रूप

5.4 धार्मिक मूल्य

5.4.1 आस्था के रूप में

5.4.2 अंधविश्वास

5.4.3 रूढ़िवादिता

5.4.4 संस्कार रूप में मान्य

5.4.5 धर्म का विकृत रूप

5.4.6 आजीविका के साधन के रूप में

5.4.7 धर्म की आड़ में शोषण की प्रवृति

5.5 सांस्कृतिक मूल्य

5.5.1 भारतीय संस्कृति का स्वरूप

5.5.2 पाश्चात्य संस्कृति का स्वरूप

5.5.3 प्रेम

5.5.4 नारी प्रदत्त संस्कार व ह्रास

5.5.5 विवाह संस्कार

5.5.6 ममता

5.5.7 संस्कार

5.5.8 सांस्कृतिक मूल्य का विकृत रूप

प्रभा खेतान के उपन्यासों में मूल्यों के विविध पक्ष

प्रस्तावना –

मानव एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज के भीतर अपने अस्तित्व को साकार करता है। समाज की अन्तःक्रियाएँ तथा व्यवस्था मूल्यों के द्वारा अनुशासित होती है। समाज मूल्यों के माध्यम से ही व्यक्तित्व का निर्माण करता है। व्यक्ति के सामाजिक जीवन में उसके उद्देश्य, संकल्प, नीतियों, आदर्शों व प्रतिमानों का निर्धारण मूल्यों के द्वारा ही होता है। परिणामतः जीवन के संदर्भों में संघर्ष की भावना व असंतोष उत्पन्न होने के कारण युवावर्ग सभी सामाजिक, सांस्कृतिक नैतिक, और धार्मिक संस्कारों को छोड़कर आगे बढ़ना चाहती है। पीढ़ियों के अन्तर्द्वन्द्व व संघर्ष से वैचारिक तथा यथार्थ रूप में मूल्यों में टकराव की स्थिति उत्पन्न होकर मूल्य संक्रमण की स्थिति उत्पन्न हो जाती है फलस्वरूप नए मूल्यों की सृष्टि होती है। कालगत परिवेश के साथ–साथ जीवन की परिस्थितियों, आवश्यकताओं में परिवर्तन होता है जिसके कारण समाज तथा व्यक्ति विशेष की धारणाओं और दृष्टिकोणों में परिवर्तन उत्पन्न होने पर मूल्य आधारित धारणाएँ व दृष्टिकोण के मापदंड भी बदलते है। इन परिस्थितियों के रूपांतरण के कारण सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक व सांस्कृ तिक मूल्यों में परिवर्तन होता है। अतः प्रचीन मूल्यों के प्रति संघर्ष से मूल्य विघटन व मूल्य संक्रमण के कारण समकालीन उपन्यासों में नव मूल्यों का प्रतिष्ठित होना स्वाभाविक है। प्रभा जी के उपन्यासों में परिस्थितियों के अनुरूप सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक व राजनैतिक मूल्यों का प्रादुर्भाव हुआ है। जिसका अध्ययन प्रस्तुत अध्याय के माध्यम से किया जाएगा।

5.1 सामाजिक मूल्य –

प्रत्येक समाज की अपनी कुछ मान्यताएँ व नियम विध्यमान होते है। जिन्हें स्वीकारना प्रत्येक सामाजिक का कर्तव्य होता है तथा उन्हीं नियमों के अनुरूप आचरण व्यक्ति का धर्म होता है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में समाज के दोनों स्तर के यथार्थ को उजागर किया है। प्रभा जी ने सर्वजन हिताय व सर्वजन सुखाय, सर्व सम भाव, उच्च आदर्शों की स्थापना के लिए एक स्वस्थ, स्वच्छ, उच्चादर्श युक्त प्रगतिशील समाज की कल्पना अपने उपन्यास के द्वारा की है। प्रभा जी के उपन्यास साहित्य में व्यक्त मूल्य धरती पर पड़ने वाली उन प्रकाशमयी किरणों के समान है, जो अंधेरे को कोंने–कोंने से खींचकर समाप्त करने का प्रयास करती है। प्रभा जी का साहित्य अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करता हुआ, नए सामाजिक मूल्यों की प्रतिष्ठा मानवीय धरातल पर करता है। इनका उपन्यास साहित्य मूल्यों के गहरे सागर में डूबकी लगाता हुआ प्रतीत होता है। इनके उपन्यासों में व्यक्त सामाजिक मूल्यों को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट कर सकते है।

5.1.1 बदलते सामाजिक दृष्टिकोण व समाज का स्वरूप –

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। व्यक्ति चेतना के कारण सामाजिक जीवन का प्रत्येक पक्ष परिवर्तित हो रहा है। आधुनिकता के दौर में समाज परिवर्तित होकर एक नई दिशा ग्रहण कर रहा है। शहरी व ग्रामीण समाज में मान्यताओं, धारणाओं तथा व्यवहार मूल्यों में तनाव व आर्थिक विषमता के उत्पन्न होने से परिवर्तित हो रहे है। समाज में व्यक्ति ने प्राचीन के स्थान पर आधुनिक विचारों का प्रतिपादन किया है। आधुनिकता के बोध के कारण मूल्य संक्रमित होकर नवीन मूल्यों का प्रादुर्भाव हो रहा है। प्रभा जी के उपन्यासों में समाज में मूल्यों के परिदृश्य की स्पष्ट झलक मिलती है।

प्रभा जी ने अपने उपन्यास में मारवाड़ी समाज का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। मारवाड़ी समाज के रिश्तों की उधेड़बन का सजीव चित्रण किया है। उन्होंने मारवाड़ी समाज में बेटी के जन्म की निस्सारता को प्रकट किया। मारवाड़ी समाज में बेटी के जन्म होनें पर उसे बड़ा उपेक्षित जीवन जीना पड़ता है। उसे अपनों के स्नेह व प्यार से वंचित रहना पड़ता है। "कैसा अनाथ बचपन था अम्मा ने कभी मुझे गोद में लेकर चूमा नहीं। मैं चुपचाप घंटो उनके कमरे के दरवाजे पर खड़ी रहती। शायद अम्मा मुझे भीतर बुला ले।"[1] 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में मानवीयता के मूल्य को गहरी चोट पहुचाई है। लादुराम खेतान की उनके मित्र द्वारा हत्या कर दी जाती है क्योंकि वह व्यापार में अपना हिस्सा मांगते है– "दूसरे दिन अखबार में सुर्खिया थी प्रसिद्ध उद्योगपति लादुराम खेतान की रहस्यमयी मौत।"[2]

प्रभा जी ने अपने उपन्यास में मारवाड़ी समाज की परम्पराओं व रीति–रिवाजों का भी वर्णन किया है तथा उनके परम्परागत मूल्य के पालन का भी निवेदन किया है। मारवाड़ी समाज के नारी के प्रति दकियानूसी सोच अर्थात उसके सजने–सवरने व आत्मनिर्भर न होने वाली सोच को उजागर किया है। मारवाड़ी समाज में पैसे की महत्ता को प्रकट किया है।

5.1.2 पारिवारिक विघटन व सम्बन्धों में अलगाव –

पारिवारिक मूल्यों के विघटन ने सर्वाधिक प्रभावित संयुक्त परिवार को किया है। करुणा, प्रेम, आत्मीयता, सम्मान व सहयोग आदि मानवीय मूल्यों के स्रोत माने जाने वाले परिवार का स्वरूप विघटित होता जा रहा है। आज के बदलते परिवेश में औद्योगिकरण, व्यक्तिवादिता, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, आर्थिक परिपेक्ष्य ने परिवार के विघटन में अहम भूमिका निभाई है। प्रभा जी ने भी अपने उपन्यासों में परिवार विघटन के कई रूपों के दर्शन कराये है। 'स्त्री–पक्ष' की वृंदा भी इसी समस्या से दुखी है। अपने पति के विश्वासघात के कारण वृंदा का परिवार अलगाव के दहलीज पर खड़ा हो जाता है और वह उसे बचाने का प्रयास करती है तथा सोचती है– "क्या यह केवल मेरी ही जिन्दगी में घटा है? जिधर देखो

उधर ही तो संबंध चटक रहे है। दोस्त जुदा हो रहे है। अनचाहे किसी एक को मौत घेर लेती है और पति–पत्नी बिखर जाते है।"[3]

'आओ पे पे घर चले' मरील, क्लारा ब्राऊन, एलिजा सभी परिवार के विघटन से विचलित है। मरिल किसी पुरुष के साथ साल भर टिक नहीं पाती है और इसी कारण उसका पति भी उसे छोड़कर चला जाता है। एलिजा का परिवार भी अपने पति की प्रेमिका के कारण टूट जाता है। तब वह कहती है– "मैं क्या करू? मैं क्लारा ब्राऊन नहीं हो सकती और जार्ज को छोड़ भी नहीं सकती। मैं उससे प्यार करती हूँ। बेहद अपने से ज्यादा।"[4]

'तालाबंदी' में सुमित्रा के परिवार में तनावपूर्ण स्थिति होती है। परिवार टूटने की कगार पर खड़ा होता है तब सुमित्रा श्यामबाबू से कहती है– "जी, कम खा लेगें, पर यह क्या रात–दिन की झकझक? वह भी कोई जीवन हुआ? आपको तो मुझसे बच्चों से बात करने की फुर्सत तक नहीं...... हम लोग पहले सुखी थे।"[5] इनके व्यवसाय के कारण पति–पत्नी के सम्बन्धों में तनाव है।

'छिन्नमस्ता' की प्रिया व नरेन्द्र के मध्य आपसी तनाव व विचारों में मतभेद के कारण उनके सम्बन्धों में अलगाव उत्पन्न होने से उनका परिवार टूट जाता है। नरेन्द्र प्रिया को भोग की वस्तु समझता था। जब चाहता तब उसके शरीर का भोग करने लग जाता है। इससे परेशान होकर भोग की वस्तु न बने रहने के कारण प्रिया आत्मनिर्भर होना चाहती है तब नरेन्द्र कहता है– "दरअसल तुम्हें इतनी खुली छूट देने की गलती मेरी ही थी। मुझे पहले ही चिड़िया के पंख काट डालने चाहिए थे, पर मैं तुम्हारी बातों में आ गया। तुम्हारे इस भोले चेहरे के पीछे एक मक्कार औरत का चेहरा है।"[6] अतः नरेन्द्र की सोच के कारण इनके संबंधों में बिखराव बढ़ता गया है।

5.1.3 नारी चेतना शक्ति के रूप –

प्रभा जी ने नारी के प्रति अपने विचारों को जिस साहस और निर्भयता के साथ प्रकट किया है वह प्रशंसनीय है। उन्होंने परम्परा से हट कर नारी का चित्रण किया। उन्होंने नारी को नारी के रुप में ही परिभाषित किया है। कहीं पर भी उन्होंने नारी को आदर्शवाद, त्याग व तपस्या की देवी के रूप में वर्णित नहीं किया है।

प्राचीन समय से परम्परा व रूढ़ियों में जकड़ी नारी की लेखनी नारी के यौन संबंधों, काम भावनाओं से पोषित नारी की सोच व दृष्टि को चित्रित करने में असमर्थ थी परन्तु प्रभा जी ने मुक्त यौन संबंधों व काम व वासना की भावना को खुले रूप से चित्रित किया है।

उनके उपन्यासों की नारियाँ समाज से खौफ रहित जीवन जीती है तो कहीं अपने अस्तित्व हेतु नयी शक्ति के रूप में उदित होती नारी के रूप को दर्शाया गया है।

'छिन्नमस्ता' की प्रिया के रूप में उन्होंने सामान्य नारी को दर्शाया है। जो अपनी कमजोरियों से उभर कर संघर्ष करते हुए अपनी राह प्रशस्त करने वाली नारी के रूप में उभर कर आई है। प्रिया के संदर्भ में वैशाली देशपांडे लिखती है– "प्रिया का यह व्यवहार आधुनिक नारी के उस रूप को उद्घाटित करता है, जो पुरुष प्रधान समाज के अत्याचार के विरोध में खड़ी रहकर अपनी क्षमता को साबित करती है। शोषण के सामने चुनौती बनकर खड़े रहने की क्षमता आज की नारी में आ चुकी है और प्रिया उस नारी का प्रतिनिधित्व कर रही है।"[7]

प्रिया को किसी भी विषय पर बात करने या उसका सामना करने में कोई शर्म नहीं। जब प्रिया अपने भाई द्वारा शोषण का शिकार होती है और इस बात को वह अपने परिवार वालों के सामने रखना चाहती है तब दाई माँ द्वारा रोकने पर वह कहती है– "स्त्री जब यौन उत्पीड़न पर कुछ कहना चाहती है तो पुरुष व्यवस्था इसका विरोध क्यों करती है। व्यवस्था इतनी आतंकित क्यों होती है।"[8]

लेखिका ने नारी के अस्तित्व व प्रतिष्ठा हेतु उसकी श्रेष्ठता को सर्वोपरि स्थान देने की कोशिश की है। प्रिया का दोस्त फिलिप जब पुरुष के गुणों का बखान करता है तब प्रिया पुरुष का स्थान नारी से दोयम दर्जे का साबित करने हेतु कहती है– "पुरुष भूमि है, आकाश है, हवा है, अग्नि है, जल है लेकिन स्त्री बीज बनकर धरती के नीचे दबना जानती है, वक्त आने पर अंकुरित होती है और फिर शाखा–प्रशाखों में फैलती हुई पूरा जंगल हो जाती है।"[9]

उन्होंने अपने उपन्यासों में परम्पराओं व मान्यताओं को तोड़कर आत्मनिर्भर बनने की खोज को तलाशती नारी को भी वर्णित किया है तथा उसके अस्तित्व को पहचान दिलाने में सफलता को उद्घाटित किया है। प्रिया आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता को प्राप्त करने के लिए नरेन्द्र से अलग होती है और अपने व्यवसाय में सफलता को प्राप्त करने के पश्चात नरेन्द्र से कहती है– "नरेन्द्र मैं व्यवसाय रूपये के लिए नहीं कर रही। हाँ चार साल पहले जब मैंने पहले–पहल काम शुरू किया था, मुझे रुपयों की जरूरत थी पर आज मेरा व्यवसाय मेरी आइडेंटिटी है।"[10]

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में पुरुष के वर्चस्व से मुक्त होकर अपने स्वहित हेतु स्त्री अस्मिता व अस्तित्व को महत्व देने वाली नारी का भी वर्णन किया है– "मैं बोल्ड हूँ या

मेरी अपनी कोई मजबूरी है। यह मैं नहीं जानती। किन्तु इतना भर जानती हूँ कि स्त्री की जिन्दगी केवल पुरुष की तलाश बनकर नहीं रह सकती।"[11]

5.1.4 समाज में नारी का स्वरूप –

नारी उदात्त चरित्र से युक्त श्रेष्ठ व्यक्तित्व की धात्री है। वह कोई वासना या भोग की वस्तु नहीं है। अगर पुरुष नारी को उनके मूल्यों के द्वारा आकलन कर उसका वरण करे तो वह उसके लिए शक्ति बन सकती है। परन्तु पुरुष का अंहकार सर्वोपरि होने के कारण वह नारी के गुणों का आचमन नहीं कर सकता है और वह नारी को मात्र भोग की वस्तु स्वीकारता है।

जिसकी पृष्ठभूमि हम 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में देख सकते है। नरेन्द्र प्रिया को भोग की वस्तु समझ उसका शोषण करता है तब प्रिया उसके इस व्यवहार से परेशान होकर कहती है– "नरेन्द्र के वहशी भूख से मैं सच में घबरा गई। केवल रात के प्रथम प्रहर में ही नहीं बल्कि रात में दिन में शाम को वक्त बेवक्त कभी भी। पार्टी के लिए तैयार होकर हम निकलने वाले होते की वह वापस कमरे में घसीट लेता।"[12]

प्रभा जी के उपन्यासों में आदर्श पत्नी के रूप में परम्परागत नारी का वर्णन भी हुआ है। तालाबंदी की सुमित्रा अपने पति से बहुत प्यार करती है। अपने पति से प्रेम की चाह अधूरी रहने पर वह उससे कोई शिकायत नहीं करती है खुद की भावनाओं का दमन करके वह अपने पति की खुशी, अच्छे स्वास्थ्य व उन्नति की कामना ईश्वर से करती है।

इनके उपन्यासों में समाज के परम्परावादी मूल्यों का दंश झेलती नारी का चित्रण है। समाज में परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना तथा घरेलू कार्यों में संलग्न रहने को नारी की नियति माना है परन्तु जब छिन्नमस्ता की प्रिया नारी के धर्म व संस्कारों को परे रखकर व्यवसाय में संलग्न होती है तो उसे कई सामाजिक संस्थाओं व समाज का विरोध सहना पड़ता है।

वही दूसरी ओर नीना अपने नाजायज होने के कारण समाज के विरोध का सामना करती हुई अपनी परिस्थितियों से संघर्ष करती है। "नीना के लिए आग हो या पानी वह सब कुछ को जिन्दगी का धर्म मानती है....... ऐसा नहीं की अकेलापन उसे नहीं चुभता पर वह हर तूफान का हँसकर स्वागत करती है और निर्भय होकर हँसती है।"[13]

प्रभा जी ने भारतीय संस्कृति के समान ही विदेशी परिवेश में नारी को जीवन संघर्ष से जुझते हुए उसकी दयनीयता को प्रकट किया है। 'अग्निसंभवा' की आइवी अपने पति के नशे में मस्त रहने के कारण दिन–रात फैक्टरी में काम करके अपने परिवार का पालन करती है। उस पर भी उसका पति उसे पीटता है तब आइवी कहती है– "मेरा पति और

खूँखार हो गया था। दिन भर माओ की निंदा करना और रात को शराब के नशे में मुझे पीटना।"[14]

इसके अतिरिक्त प्रभा जी ने नारी के सशक्त रूप का चित्रण भी अपने उपन्यास के माध्यम से किया है। नारी के सशक्तिकरण के रूप में प्रकट होकर आइवी कहती है– "नहीं, यदि औरत अपने को नीचे न गिराये तो दुनिया में किसी की हिम्मत नहीं की उसके कंधो पर हाथ रख दे।"[15]

निष्कर्षतः प्रभा जी के उपन्यासों में समाज में नारी की दयनीय स्थिति को अधिकांश रूप से उजागर किया है। औरत के नारी होने के दंश को स्वीकारा है इसीलिए वह प्रिया के माध्यम से कहती है– "औरत कहाँ नहीं रोती? सड़क पर झाड़ू लगाते हुए, खेतों में काम करते हुए, एयरपोर्ट में बाथरूम साफ करते हुए...... हाड़माँस की बनी ये औरतें अपने–अपने तरीके से जिन्दगी जीने की कोशिश में छटपटती ये औरतें, हजारों सालों से इनके ये आँसू बहते जा रहे है।"[16]

5.1.5 दहेज संबंधी विकृत मूल्य –

आज की सामाजिक व्यवस्था में दहेज एक अनिवार्य तत्व है। इसके अभाव में विवाह कार्य सम्पन्न नहीं होता। दहेज प्रथा का चलन विवाह में प्रतिष्ठा का सवाल होता है। चाहे दहेज के कारण कन्या को वर की प्रतीक्षा उम्र भर करनी पड़े। दहेज प्रथा से संबंधित कुरीतियों को उभारने में प्रभाजी के उपन्यास सक्षम है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास में दहेज देने के अभाव के कारण नरेन्द्र के बारे में सबकुछ जानते हुए भी विजय प्रिया की शादी नरेन्द्र से करवाकर उसका जीवन नर्क तुल्य बना देता है। वही दूसरी ओर सल्लों की शादी अच्छे घर में करने के लिए सभी गहनों के अतिरिक्त एक लाख रुपये नकद दहेज के रूप में दिये जाते है। दहेज प्रथा का कितना भयावह रूप हमारे समाज में प्राचीन समय से चलन में है इसका आकलन प्रिया के इस वक्तव्य से लगाया जा सकता है– "1962 में भी अच्छे घर–वर के लिए दहेज में नकद लाख रुपये की जरूरत थी।"[17]

5.1.6 रूढ़ियों व परम्पराओं के प्रति विद्रोह –

समाज के पतन का कारण रूढ परम्पराएँ व सामाजिक रूढ़ियाँ है। जो मनुष्य को कूपमंडूक बनाकर उसका दायरा व सोच सीमित कर देती है और मनुष्य की उन्नति के मार्ग को अवरुद्ध कर देती है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में ऐसी रूढ परम्पराओं व रूढ़ियों का विद्रोह करती नारी का चित्रण किया है।

'पीली आँधी' की सोमा एक शिक्षित नारी है जो अपने पति की नपुसंकता के कारण माँ नहीं बन पाने के दंश से बाहर निकालने के लिए परम्परागत संस्कारों का विरोध करते हुए सुजीत से शारीरिक संबंध बना उसके बच्चे को जन्म देकर मातृत्व को प्राप्त करती है। वहीं दूसरी ओर 'अपने–अपने चेहरे' की रमा समाज की रूढ़ियों को नकारते हुए मिस्टर गोयनका के साथ अपने संबंध को आगे बढ़ाती है तथा रीतु को समाज की बेड़ियों को तोड़कर स्वतंत्र जीवन जीने के लिए प्रेरित कर ग्लानि से मुक्त करती है। वह रीतु से कहती है– "पुरुष व्यवस्था ने हर गुनाह के लिए औरत को जिम्मेदर ठहराया है जबकि गुनाह खुद पुरुष करता है।"[18]

समाज की कुप्रथाओं ने नारी को बड़ी घुटन भरी जिंदगी जीने को विवश किया है। वे इससे मुक्त होना चाहती है परंतु परिस्थितियों वश मजबुर है। अपनी इसी विवशता को 'पीली आँधी' की ताईजी के माध्यम से प्रकट किया है। ताईजी प्रेम पांश में बंधी होने पर भी अपने वैधव्य के कारण परिवार की परंपराओं का उल्लंघन नहीं कर पाती है। वहीं 'छिन्नमस्ता' की सरोज विवशता प्रकट करते हुए कहती है– "इस परंपरा की जड़े शरीर के रेशों में समाई है? सदियों की इस परंपरा को किस बीमारी का नाम दूँ।"[19]

5.1.7 दाम्पत्य जीवन की विकृतियाँ –

भारतीय संस्कृति में गृहस्थाश्रम को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना है। गृहस्थ्य जीवन की कड़ी पति–पत्नी को एक ही गाड़ी के दो पहिए के समान माना है। जिनके तालमेल से जीवन रूपी गाड़ी प्रगति के पथ पर आगे बढ़ती है। पत्नी–पति का संबंध प्रेम, सहयोग व विश्वास पर निर्भर करता है और इनके अभाव में दाम्पत्य जीवन बिखरने लगता है। आज के दौर में पति–पत्नी के मध्य विश्वास व समर्पण की भावना का हास होता जा रहा है फलस्वरूप दाम्पत्य जीवन खंडित होकर विकृत होता जा रहा है। प्रभाजी ने अपने उपन्यासों में दाम्पत्य जीवन के विविध रूपों को बड़ी संजीदगी के साथ उभारा है।

'अपने–अपने चेहरे' की मिस्टर गोयनका का रमा के साथ संबंध होने के कारण उनका वैवाहिक जीवन विकृत हो जाता है परंतु मिसेज गोयनका का समाज से भय व बच्चों के भविष्य के कारण सब सहन करती है और कहती है– "मैं ही हूँ जो बर्दाश्त कर रही हूँ पर समाज कैसे करे? गलत को तो गलत ही कहा जाएगा।"[20] दूसरी तरफ मिसेज गोयनका अपनी बेटी के विवाह के सत्य को जानते हुए उसकी पीड़ा को जानते हुए भी उसे गृहस्थी चलाने के लिए विवश करती है और कहती– "मैं तो बस इतना समझती हूँ कि पति को वश में रखना है तो झुककर चलों। इतनी छोटी–छोटी बातों को लेकर बहस उठाएगी तो चल चुकी गृहस्थी। अरे औरत तो गृहस्थी के पैरों तले दबी घास है।"[21]

'पीली आँधी' की सोमा अपने वैवाहिक जीवन में माँ न बनने व समानता का अधिकार नहीं होने के कारण अपने पति से संबंधों को तोड़ देती है और कहती है– "विवाह एक संस्था है, रजिस्टर के कागजों पर सही किया हुआ नाम है। तलाक की व्यवस्था कानून ने बनाई है..... तब इस बंधन को तोड़ ही देना चाहिए।"[22]

निष्कर्षतः प्रभा जी के उपन्यासों में पारिवारिक विघटन, संबंधों में अलगाव, नारी की स्थिति, दहेज प्रथा, विवाह के विविध रूप व विवाहेत्तर संबंधों की छवि, परंपरा व रूढ़ियों के नाम पर शोषण, दाम्पत्य जीवन की यथार्थता आदि संबंधित मूल्यों तथा उनके विकृत रूप की अभिव्यक्ति बड़ी सच्चाई व गहरी संवेदना के साथ चित्रित हुई है।

5.2 आर्थिक मूल्य –

वर्तमान समय में आर्थिक उदारीकरण व वैश्वीकरण के जगत में अर्थ की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो गई है। आज किसी भी देश की समृद्धि का पैमाना उसकी आर्थिक सम्पन्नता को माना है। मनुष्य के जीवन का मूल आधार भी अर्थ को ही माना गया है। मनुष्य जीवन की मुलभूत आवश्यकताएँ भी अर्थ के द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है। अतः व्यक्ति का कर्मशील बन आर्थिक रूप से सशक्त होना ही उसके जीवन की सफलता का मापदंड है। आर्थिक रूप से सशक्त मनुष्य अपने स्वतंत्र निर्णयों के माध्यम से अपने कर्तव्यों का निर्वहन सफल रूप से कर सकता है।

हमारे संत महापुरुष कबीर ने कहा है–

"साई इतना दीजिए जामै कुटुम्ब समाये।
मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाये।"[23]

अर्थात हमें उतने ही धन की आवश्यकता है जिसके द्वारा मैं परिवार का पालन व अतिथि का सत्कार कर सकु। परन्तु आज विडम्बना यह है कि व्यक्ति के धनोपार्जन की कोई सीमा नहीं रही है। धन को प्राप्त करने हेतु वह सही गलत सभी कार्यों में संलग्न रहता है। आज व्यक्ति के जीवन में आर्थिक मूल्य बदल गये है। अर्थ ने आज सारे मानवीय संबंधों के समीकरण को बदल डाला है। फलस्वरूप आर्थिक मूल्यों का विघटन हो रहा है तथा समाज में विषमताएँ बढ़ती जा रही है। जिसके कारण समाज कई वर्गों में विभाजित हो रहा है। यही वर्ग भावना वर्ग संघर्षों को जन्म दे सामाजिक संघर्षों का मूल साबित हो रही है। प्रभा खेतान भी स्त्री हित हेतु अर्थ को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करती है परन्तु प्रभाजी के लिए अर्थ साध्य न होकर साधन मात्र है। अतः उनके उपन्यासों में व्यक्त हुए आर्थिक मूल्यों को निम्न बिन्दुओं द्वारा समझ सकते है।

5.2.1 नारी विषयक आर्थिक आयाम –

प्रभाजी के उपन्यासों में नारी जीवन से संबंधित आर्थिक आयाम दृष्टव्य है। 'आओ पे पे घर चले' की प्रभा जब स्टूडेंट एक्सचेंज प्रोग्राम के तहत अमेरिका जाती है तो विदेशी मुद्रा का अवमूल्यन होने के कारण डॉ चोपड़ा प्रभा की सहायता करने में अपनी असमर्थता को प्रकट करते है। बीस डॉलर में निर्वाह की चिंता में व्याकुल प्रभा की मदद मिसेज डी करती है। प्रभा के प्रति संवेदना व्यक्त करते हुए आइलिन कहती है– "बास्टर्ड इंडियन। यह भी नहीं सोचा कि इतनी दूर से आई हुई अकेली लड़की के दिल पर क्या गुजरी होगी। पैसा–पैसा तुम्हारे देश में भी शाईलोक होते हैं।"[24] अमेरिका में रहने के पश्चात प्रभा जी ने विकसित व विकासशील देश व उनके नागरिकों के मध्य अंतर की समझ पैदा हुई। प्रभा जी अपनी आर्थिक स्थिति पर विचार करती हुई कहती है– "मुझे अपनी दरिद्रता समझ में आई। कुछ भी नहीं मेरे पास। जिन्दगी में इतना गरीब अपने को मैंने कभी नहीं समझा।"[25] अमेरिका की भोग विलासिता व ऐश्वर्य को देखने के बाद प्रभा व ट्रेसी भी वहाँ की संस्कृति के प्रति आकर्षित होती है। ट्रेसी अपनी आर्थिक रूप से विवशता को व्यक्त करती हुई कहती है– "क्या करे प्रभा, हम जैसों को गरीब देश से इतने बड़े आदमियों के पैर रगड़ने आना पड़ता है। मैं भी घर की याद में रातों को रोती हूँ।"[26]

प्रभा मेहनती व परिश्रमी है। वह मेहनत द्वारा पैसा कमाने में विश्वास रखती है। वह किसी की दया को स्थान नहीं देती बल्कि आर्थिक रूप से विवशता की स्थिति में भी वह स्वाभिमान को बनाये रखती है। मरील द्वारा दिये गये कपड़ों को उसके मुँह पर मारते हुए वह कहती है– "तुम क्या सोचती हो मैं भिखमंगी हूँ? क्लारा ब्राउन के उतरे हुए कपड़े पहनूँगी। ग्रेटा गारबों से टिप लूँगी? मिसेज डी की सेक्रेटी की मेहरबानी पर पलूँगी? क्या समझा है तुम लोगों ने? रुपये का अवमूल्यन हो गया, विदेशी मुद्रा हमारे देश में नहीं आ पा रही, पर क्या मेरा कोई आत्मसम्मान नहीं है ?"[27]

5.2.2 बिगड़ते पारिवारिक समीकरण –

आज हमारे समाज में व्याप्त परिवार के मूल्य विघटित होते जा रहे है। आज पारिवारिक संबंधों पर अर्थ की सत्ता हावी होती जा रही है। परिवार के समीकरण अर्थ से संचालित होकर बनते व बिगड़ते जा रहे है। 'अपने–अपने चेहरे' के मिस्टर गोयनका की विवाहित बेटी अपना ससुराल छोड़कर मायके आती है तो भाई व भाभी से जायदाद को लेकर मनमुटाव हो जाता है। तब मिस्टर गोयनका पत्नी को कहते है– "अच्छा सुनो बिना बात के जी खराब मत करो। रीतु हम लोगों को बेटी है, उसके प्रति हम दोनों की जिम्मेदारी है। तुम ठीक ही कह रही थी कि रीतु को पेंट हाउस में रख देते है और तुम्हारे

हिस्से का मकान रीतु के नाम कर दूंगा।"[28] तब प्रतिरोध स्वरूप मिसेज गोयनका कहती है– "यह कैसे हो सकता है? मैं समूची रीतु की कैसे हो जाँऊ? बहुएँ क्या कहेगी कि देखो मम्मी ने कैसे दुभात किया। कल आपको कुछ हो गया तो? वे लोग तो मेरा कुछ करने से रही।"[29] उपन्यास में अर्थ के कारण उत्पन्न सांसारिक बुद्धि को प्रकट किया है।

छिन्नमस्ता की 'कस्तुरी' धन की कमी व धन के अभाव में परिवार की आवश्यकताएँ को प्राथमिकता देने व परिवार को टूटने से बचाने के लिए अपने पति के हत्यारों को कोर्ट नहीं ले जाना चाहती है। ताकि धन के अभाव से विचलित होकर अपने जिम्मेदारियों को निभाने की अक्षमता के कारण परिवार के सम्बन्धों में दूरी उत्पन्न होकर परिवार विघटित ना हो।

5.2.3 दहेज प्रभा का उन्मूलन –

भारतीय समाज की परम्पराओं में विवाह सम्बन्धी दहेज प्रथा का प्रचलन भी अधिक है। अर्थ की सत्ता ने दहेज प्रभा को और बढ़ावा दिया है। दहेज देने में असमर्थता के कारण कन्या को अविवाहित रहने पर भी मजबूर होना पड़ता है। दहेज के कारण घरेलू उत्पीड़न का दंश भी झेलना पड़ता है। इसलिए प्रभा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने पर जोर देती है। वह अपने समाज में अर्थ की लालसा व दहेज प्रथा के बारे में अपनी प्रधानाध्यापिका को कहती है– "मैं उस समाज की हूँ जहाँ आदमी की एक ही विशेषता होती है वह लाख रुपये का आदमी है या करोड़ का।"[30] इस कारण वह नारी के आर्थिक रूप से समपन्नता व स्वतंत्रता का होना आवश्यक मानती है ताकि दहेज का दंश कम झेलना पड़े और लड़की को अच्छा घर व वर दोनों प्राप्त हो। इसलिए वह कहती है– "औरत की सारी स्वतंत्रता उसके पर्स में निहित है।"[31]

5.2.4 सामाजिक व व्यावसायिक मूल्य में द्वंदात्मक स्थिति –

आज सामाजिक व व्यावसायिक दोनों परिवेश में स्वार्थ का बोलबाला है। स्वार्थ के वशीभूत होकर आज मूल्य विघटित हो रहे है। स्वार्थभावना की प्रबलता के कारण व्यक्ति किसी भी अनैतिक तरीके से भी धन का अर्जन करना चाहता है। तालाबंदी में पीनु धन के अर्जन हेतु अपना ईमान बेच देता है और अपनों के लिए व्यवसाय में समस्याएँ उत्पन्न करता है। तब इस सब को जानकार सुमित्रा अपने पति के पैसे को पाने की लालसा को कम करने को कहती है तब श्यामबाबू कहते है– "धन अपने साथ कितना झमेला ले आता है। पर हम लोग भी महत्वाकांक्षाओं की सीढ़ियों पर कहा रुक पाते है।"[32] इसी पैसे की चाहत के कारण श्यामबाबू अपने बेटे से दूर हो जाते है तब हरिनारायण चट्टोपाध्याय

श्यामबाबू को समझाते हुए कहते है– "अर्थ की व्यवस्था सारे मानवीय संबंधों को घुन की तरह खा जाती है।"[33]

धन व्यक्ति को विलास व अनैतिकता की ओर प्रेषित करता है। वही धन का अभाव व्यक्ति को संघर्ष व शोषण का शिकार भी बनाता है। 'पीली आँधी' में युवावर्ग के धन के अर्जन व परिवार के पालन–पोषण हेतु अपने घर से दूर जाने की पीड़ा को उजागर किया है। "वहाँ गरीबी है। भुखमरी है, राजा रजवाड़ों की झूठी शान शौकत है। कम्पनी सरकार की चालबाजियाँ है। वहाँ कुछ भी सुरक्षित नहीं।"[34]

धन की लालसा व धन का अभाव दोनों ही परिस्थितियों ने विवाह संस्था के विकृत रूप को उजागर किया है। 'पीली आँधी' की पद्मावती को अपने पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण अनमेल विवाह का दंश झेलना पड़ता है। डॉ वैशाली देशपांडे लिखती है– "पद्मावती एक स्वस्थ एवं सुन्दर लड़की होने के बावजूद पिता की आर्थिक दुरावस्था के कारण अनमेल विवाह की शिकार होती है।"[35]

प्रभा जी ने व्यापार में प्रचलित विकृत मूल्यों पर दृष्टि डाली है। व्यक्ति अपने व्यापार की सफलता हेतु किसी भी सोच को स्थान नहीं देता है। व्यापार की उन्नति के लिए व्यक्ति कुछ भी कर सकता है। 'अग्निसंभवा' में आइवी व्यापार करने हेतु प्रभा से कहती है– "व्यापार के लिए दस मिनट मेरी नौकरानी बन भी जाती तो क्या बिगड़ जाता? तुम तो जैकी डिक्रे के तलवे हर समय सहलाती है।"[36] वहीं दूसरी ओर हांगकांग के व्यापारियों के बारे में बताती हुई कहती है– "हांगकांग के व्यापारियों में मनुष्यता नहीं है वे खाली पैसा समझते है, पैसे के लिए रात–दिन दौड़ते रहना, बेचारे टूरिस्ट लोगों को कितनी परेशानी हुई।"[37]

5.2.5 आर्थिक विषमता –

स्वतंत्रता पश्चात भारत की आर्थिक स्थिति में निरन्तर परिवर्तन हुआ। लोगों की प्रवृत्ति अधिक से अधिक धन संग्रह की रही है। जिससे गरीब और अधिक गरीब तथा अमीर और अधिक अमीर बनता जा रहा है। इसने आर्थिक विषमता को बढ़ा दिया है। प्रभाजी ने अपने उपन्यासों में आर्थिक विषमता से संबंधित कई पहलुओं को उजागर किया है। विदेशी संस्कृति में औरतें ऐयाशी से भरी जिन्दगी जीती है। जो कुछ काम नहीं करती और पानी की तरह पैसा बहाती है। तब उनके ऐसे व्यवहार से प्रभा सोचती है– "तुम अमीर देश की, अमीर बाप की अमीर आदमी की बीवी, तुम कैसे समझोगी कि यहाँ आकर कैसे हम लोगों को एक–एक डॉलर के लिए मोहताज होना पड़ता है।"[38]

'छिन्नमस्ता' में आर्थिक विषमता से उत्पन्न नारी की लाचारी को उजागर किया है। वह कहती है– "पैसा....पैसा....पैसा जन्म से आज तक वैभव के बीच हाथ में कभी कुछ नहीं रहा और ससुराल यहाँ छप्पनभोग परोसकर आप भूखे बैठे रहिए। इनका स्थायी ढाँचा है खर्च करने के बंधे–बंधाए तरीके है। आत्मग्रस्तता की सीमा से परे.... ये लोग कितने ग्रस्त है पैसे से?।"[39] आर्थिक विषमता से युक्त व्यवस्था ने स्त्री के प्रति श्रम के शोषण को भी उजागर किया है। प्रभा जी कहती है– "स्त्री श्रम की कम कीमत का सबसे बड़ा कारण उसका स्त्री होना है।"[40]

निष्कर्षतः प्रभा जी ने अपने उपन्यासों के द्वारा आर्थिक मूल्यों में आये विघटन को उजागर किया है तथा उससे उत्पन्न समस्याओं व परिस्थितियों का वर्णन बड़ी संवेदनशीलता के साथ किया है।

5.3 राजनैतिक मूल्य –

सम्पूर्ण राष्ट्र के विकास व मानव समुदाय की उन्नति हेतु जिस नीति का पालन किया जाता है उसे राजनीति कहते है। देश की व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने व मानव जीवन की जटिलताओं को मिटाने के लिए राजनीति की आवश्यकता होती है अर्थात राजनीति राज्य की नीति, व्यवस्था से संबंधित होती है। स्वतंत्रता पूर्व राजनीति में देश सेवा, सहयोग, त्याग, राष्ट्रीय एकता, समानता व स्वतंत्रता आदि राजनीतिक मूल्य के रूप में समादृत थे परन्तु समयानुसार राजनीति के स्वरूप में परिवर्तन होने से राजनीतिक मूल्य भी परिवर्तित हुए।

स्वतंत्रता पश्चात की राजनीति में सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय चेतना तथा व्यक्ति चेतना का विकास हुआ तथा साथ ही उसमें वर्ग संघर्ष व जातिवाद की भावना का अनुकरण भी हुआ। जिसके कारण राजनीति स्वार्थवाद, सामयिक विषंगतियों, भ्रष्टाचार व नैतिक मूल्यों के पतन का अखाड़ा बन गई है। प्रभा जी के उपन्यासों में राजनैतिक परिवेश व मूल्यों का बहुत विशद व व्यापक वर्णन तो नहीं हुआ है परन्तु उन्होंने अपने उपन्यासों में राजनैतिक परिवेश व मूल्य के संकेत मात्र दिए है। उनके उपन्यासों में व्यक्त राजनीतिक मूल्य निम्नानुसार है।

5.3.1 राजनीतिक परिवेश –

प्रभाजी ने अपने उपन्यासों में राजनैतिक परिवेश का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है। 'पीली आँधी' की कथावस्तु का मूल राजनीतिक वातावरण है। जब राज्य ब्रिटिश उपनिवेशवाद से आंतकित व सांमती अत्याचारों से प्रताड़ित था। सम्पूर्ण परिवेश पानी व शिक्षा से वंचित था। किसी का सम्मान व संपदा सुरक्षित नहीं थी। तब उनके आंतक से

बचने के लिए मारवाड़ी परिवार बंगाल व बिहार की ओर प्रस्थान कर रहा था। रुंगटा परिवार का वैभव समाप्त हो अपने जीवन पालन हेतु अपना देश छोड़कर जाने के कारण वहाँ की परिस्थितियों के बारे में किशन कहता है– "वहाँ गरीबी है। भुखमरी है, राजा–रजवाड़ों की झुठी शान–शौकत है। कम्पनी सरकार की चालबाजियाँ है। वहाँ कुछ भी सुरक्षित नहीं। ब्राह्मण संस्कृत भूलने लगा है। राजा प्रजा की रक्षा नहीं करता।"[41]

'अग्निसंभवा' में चीन पर दो महाशक्तियों के दबाव के कारण देश विरोधी गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है और दूसरे देश हांगकांग के व्यापारियों का राजनैतिक हस्तक्षेप बढ़ने से वहाँ गंदी राजनीति पनपने लगती है। इसका विरोध करते हुए लीपेंग के शब्द– "बढ़ती हुई अराजकता से देश खतरे में है, मुट्ठी भर लोगों के कारण क्या पूरे राष्ट्र की व्यवस्था को जोखिम में डाल दे? बाहरी शक्तियों की दखल अंदाजी हम नहीं सहन करेंगे।"[42]

'एड्स' उपन्यास में प्रभा राजनीति के कारण उत्पन्न हुए युद्ध के हालातों पर विचार करती है तथा यादों के द्वारा उन परिस्थितियों का चित्रण करती है– "यह युद्ध क्यों? साधारण पुरुष और विशिष्ट पुरुष, साधारण सिपाही मरता हुआ। विशिष्ट पुरुष सुर्खियों में चमकता हुआ। चाहे बुश हो या सद्दाम अपने–अपने देश की जनता के भाग्य विधाता ये लोग है। इनकी अमरावती का सिंहासन कभी खाली नहीं हो सकता कभी नहीं। लड़ते रहेंगे। हमेशा नेपम नर्ग गैस गोला बारूद बरसते रहेंगे। लड़ाई पहले पारम्परिक थी, फिर परम्परा के विकास में एक कड़ी की तरह जुड़ गई।"[43]

प्रभा जी ने चीन में व्याप्त राजनीति परिवेश का चित्रण बहुत सुक्ष्म रूप से किया है। वहाँ व्याप्त राजनैतिक व्यवस्था को देखकर प्रभा जी कहती है– "मुझे राजनीति से चिढ़ है राजनीति वह क्षेत्र है, जहाँ स्त्री, स्त्री नहीं रहती, पुरुष हो जाती है, मगर मुसीबत यह है की राजनीति से बचकर कोई कैसे लिख सकता है? प्रतिबद्धता भी तो अनिवार्य है।"[44]

5.3.2 व्यापार की राजनीति –

प्रभा जी ने व्यापार के क्षेत्र में राजनीति हस्तक्षेप को स्वीकारा है तथा व्यापार में आए उतार चढ़ाव राजनीति को प्रभावित करते है। वर्तमान में राजनीति अर्थ पर निर्भर हो गई है। व्यापार की राजनीति का चित्रण 'तालाबंदी' उपन्यास में उभर कर आया है। श्यामबाबू ने बंगाल की राजनीति का यूनियन पर बढ़ते दबाव का चित्रण किया है। "नहीं सर सीटू इतनी कमजोर नहीं है। आजकल जरा ऊपर से ज्योतिबाबू का दबाव है। पार्टी कैडर कोई आंदोलन नहीं कर पा रहे। इसलिए मजदूरों को बाहर वाले भड़काते है।"[45] अर्थात मजदूरों की यूनियन राजनेताओं के इशारे पर चलती है। इसलिए हरिनारायण

चट्टोपाध्याय श्यामबाबू को कहते है– "राजनीति वास्तव में अब अर्थ नीति के ऊपर हावी है।"[46]

'एड्स' में प्रभा जी ने राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक क्रियाकलापों से युद्ध के हालात उत्पन्न होने से व्यापार पर उसके प्रभाव का चित्रण किया है। प्रभा जी वैचारिक स्तर पर व्यापार की राजनीति को उद्‌घाटित करते हुए कहती है– "तुम चाहे अमेरिकन हो या जर्मन, तुम सब एक हो। वही गोरी चमड़ी वाले लुटेरे। दुनिया को दहलाकर रख दिया। तुम्हें अपने लिए सब कुछ चाहिए। तुम इस धरती की पचहत्तर प्रतिशत ऊर्जा खा जाते है और ऊर्जा की बचत कैसे की जाय, हमारे जैसे गरीब देशों को सिखाने चले आते हो।"[47]

इस उपन्यास के द्वारा व्यापार के क्षेत्र में राजनेता, राजनीतिक व्यवस्था का वर्णन करते हुए प्रभा जी लिखती है– "मंहगाई बढ़ती हुई मंहगाई। घटता वही है जो हमारे नेता चाहते।"[48]

5.3.3 भ्रष्ट राजनीति –

प्रभा जी ने राजनीति के यथार्थ को उजागर करते हुए स्पष्ट किया है कि आज की राजनीति अपने पारम्परिक मूल्यों को त्यागकर भ्रष्टता के क्षेत्र में लिप्त हो गई। 'तालाबंदी' उपन्यास में मध्यम ग्राम के रास्ते की दुर्दशा को देखकर राजनीति में छाये भ्रष्टाचार पर प्रकाश डाला है। किसी भी पार्टी का नेता भ्रष्टाचार के माध्यम से पैसे कमाता है। लोगों को धोखा देकर राजनीति के द्वारा पैसा कमा रहा है। तालाबंदी का – "पीनु एक ओर मार्क्सवाद के सिंद्धातों को महत्व देता है, तो दूसरी ओर पैसा कमाने के लिए सिंद्धातों से समझौता करता है।"[49] वहीं दूसरी ओर इस उपन्यास में राजनेता द्वारा पूंजीवादी लोगों के माध्यम से सर्वहारा वर्ग में राजनीति का गंदा खेल खेलने का वर्णन किया है। श्यामबाबू की फैक्टरी के मजदूर अपने अधिकारों के लिए फैक्टरी में हड़ताल करते है तब भूतोड़िया नाम का राजनेता मजदूरों के विरोध को दबाने के लिए श्यामबाबू को 'फुट डालो राज करो' की नीति को अपनाकर राजनीति करने का सुझाव देता है।

'अग्निसंभवा' में वॉग चीन की राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार को उजागर करते हुए कहता है– "अब हमें बोलना होगा हमें चाहिए वैचारिक स्वतंत्रता पार्टी के शिंकजे से प्रेस की मुक्ति हम चाहते है। वास्तव का जनतंत्र जनता का राज ताकि नौकरशाही का जुल्म और भ्रष्टाचार खत्म हो सके, यह मैंने हांगकांग रहकर समझा की किस तरह हांगकांग के व्यापारी और चीन की नौकरशाही हमारा राष्ट्रीय शोषण कर रहे है।"[50]

5.3.4 श्वेत–अश्वेत संघर्ष –

प्रभा जी ने 'आओ पे पे घर चले' में अमेरिका में व्याप्त राजनीतिक समस्या श्वेत–अश्वेत के मध्य संघर्ष को यथार्थ के धरातल पर उभारा है। श्वेत वर्ग की सम्पन्नता व अश्वेतों की हीन सामाजिक स्थिति का चित्रण किया है। नीग्रो लोग श्वेत वर्ग के लोगों से नफरत करते है। उनमें किसी प्रकार की कोई मानवता नहीं होती है। वह श्वेत महिला को देखते ही उसके साथ बलात्कार जैसे जघन्य अपराध को करने में भी संकोच नहीं करते है। नीग्रो श्वेतों के प्रति अपना क्रोध जताते हुए कहते है– "वी विलफक यू द बास्टर्ड सन ऑफ विच।"[51]

5.3.5 मार्क्सवाद प्रभावित राजनीति –

प्रभा जी ने मार्क्सवाद से प्रभावित राजनीति का वर्णन अपने उपन्यास 'तालाबंदी' व 'अग्निसंभवा' में अधिकांश रूप से किया है। 'पीली आँधी' में भी मार्क्सवादी राजनीति के कुछ अंश परिलक्षित होते है। 'तालाबंदी' उपन्यास में बंगाल की राजनैतिक परिवेश का चित्रण किया है जो पूर्णतः मार्क्सवाद से प्रभावित है। व्यापार जगत में प्रवेश पश्चात मार्क्सवाद के सिद्धातों को जानने के बाद वह श्यामबाबू से कहती है– "आदमी जब कम्युनिस्ट हो जाता है तब मार्क्सवादी सिद्धातों और मार्क्सवाद को अच्छी तरह समझ सकता है।"[52] बंगाल में उस समय कांग्रेस पार्टी सत्ताधीन थी और वह कांग्रेस पार्टी की विचारधारा को मार्क्सवाद से प्रभावित मानती थी। वह कहती है– "इन्दिरा गांधी ने पूरी शिक्षा मार्क्सवाद का इतिहास, सिद्धांत, यूनियन की भूमिका, वर्ग संघर्ष सब कुछ भूपेन गुप्त जैसे खाँटी कम्युनिस्ट से ली थी।"[53]

'अग्निसंभवा' में मार्क्सवाद प्रभावित राजनीति का वर्णन ज्यादा हुआ है। आइवी अपने देश चीन से बहुत प्रेम करती है और अपने पुत्र को हांगकांग से चीन पढ़ने के लिए भेजती है। वॉग वहाँ जाकर मार्क्सवाद से प्रभावित हो क्रांतिकारी दल का सदस्य बन जाता है तब वह चीन की राजनीति के चलते मृत्यु को प्राप्त होता है। आइवी उसके पुत्र द्वारा लिखे गये पत्रों के माध्यम से चीन की खोखली राजनीति से परिचित होती है और आइवी कहती है– "भूख गरीबी और मार्क्ससिज्म के नाम पर नौकरशाही का जुल्म उनमें बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार।" ५४ प्रभा जी मार्क्सवादी व्यवस्था का पर्दाफाश करते हुएँ कहती है– चीन में भले ही माओ ने सांस्कृतिक क्रांति कर कम्युनिस्ट अवधारणा का परिचय दिया हो परन्तु उसके पीछे तानाशाही और नौकरशाही का जुल्म छुपा है।

5.3.6 राजनीति का विकृत रूप –

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में राजनीति के खोखले व दोगलेपन को स्पष्ट करते हुए उसके विकृत रूप का दर्शन कराया है। राजनीति की विकृतता के कारण उत्पन्न भयंकर राष्ट्र विरोधी समस्याओं को उजागर किया है। 'अग्निसंभवा' में हांगकांग के नेताओं द्वारा चीन में छात्रों को भड़काकर अराजकता फैलाने के प्रयास को उजागर करने का वर्णन किया है। यह सब देख आइवी राजनीति के विकृत रूप को व्यक्त करते हुए कहती है– "प्राफा! तुम बार दृबार सत्ता का हवाला क्यों दे रही है ? क्या करेगी सत्ता ? मार डालेगी सबको ? अरे सत्ता तो एक फुला हुआ गुब्बारा है जिसने जनता के फेफड़ो में हवा भरी होती है। इस गुब्बारे में सुई चुभा दो। बस हवा निकल जायेगी।"[55]

'एड्स' उपन्यास में प्रभा जी ने राजनीति की विकृत्ता के कारण देश में मानवता विरोधी समस्याओं को उजागर किया है। 'एड्स' उपन्यास में राजनैतिक मामलों के कारण देश को आंतकवाद व युद्ध की भंयकर विभीषिकाओं का सामना करना पड़ता है। प्रभा युद्ध की भयावहता को प्रकट करते हुए सोचती है– "खाड़ी युद्ध समाप्ति पर था। तब चर्चा यह होने लगी कितने लोग मारे गए? कितना नुकसान हुआ ? नेपम बनाने वालों ने पहले उसे बेचा फिर उसका प्रयोग सिखाया तत्पश्चात स्वयं ने ही नेपम बरसाया। वह टी.वी. पर देखती है कि इराकी माँ के हाथों में घायल बच्चा है। बंकर के भीतर हजारों औरतें, बच्चों की लाशे, रोते हुए पुरुष! यह आंतक, अत्याचार कौन करवाता है? साधारण सिपाही मरता है और विशिष्ट पुरुष सत्ता का प्रतीक बनकर दुनिया की सुर्खियों में चमकता है।"[56]

'पीली आँधी' उपन्यास में राजनीतिक विकृति के फलस्वरूप जनता के शोषण को उजागर किया है। राजनैतिक सत्ता धारी, राजा रजवाड़ों से और राजा रजवाड़े आम जनता व व्यापारिक लोगों से धन प्राप्त करते थे। अतः जनता के दो पाटों के बीच पिसने की व्यथा को उजागर किया है। पीतसरा जी कहते है– "अपने तो दोहरी गुलामी झेल रहे है। एक ओर तो ये अंग्रेज सरकार और दूसरी ओर ये बिगड़े रईस, राजा–रजवाड़ों के बेटे। न इनमें शिक्षा की रुचि, न राज–काज की, संस्कृति सिर्फ शराब पीना और उद्धृत भाव से कामुक जीवन बिताना ही इनके जीवन का सार है।"[57]

'एड्स' उपन्यास के द्वारा चुनाव की राजनीति में विकृति को स्पष्ट किया है तथा लोकशाही के नाम चुनाव की बर्बरता को स्पष्ट किया है। इरीना प्रभा से कहती है– "पश्चिम से बाहर पूर्वी यूरोप तथा मिडिल ईस्ट या कुछ और उससे आगे अभी तक डेमोक्रेसी यानी एक स्वस्थ डेमोक्रेसी नहीं विकसित हो पायी है। एक न एक प्रकार की तानाशाही रही है।

चाहे दक्षिणपंथी की हो या फिर वामपंथी की। अब तुम अपने देश को ही देखो न फिर से चुनाव की तैयारी।"[58]

निष्कर्षतः प्रभा जी ने अपने उपन्यास के द्वारा राजनीति के प्राचीन मूल्यों के हनन को दर्शाते हुएँ नवीन विकृत मूल्यों के प्रादुर्भाव को स्पष्ट किया है।

5.4 धार्मिक मूल्य –

भारत देश व भारतीय समाज सदैव से धर्म प्रधान रहा है। भारतीय संस्कृति में भी धर्म के पालन पर विशेष रूप से बल दिया है। धर्म से तात्पर्य धारण करने से है। व्यक्ति या समाज जिन संस्कारों व सिद्धांतों का पालन आजीवन करता है, उन्हें धर्म की संज्ञा दी गई है। धर्म का जन्म व विकास भी समाज के माध्यम से ही होता है। धर्म के द्वारा ही व्यक्ति का विकास होकर वह कर्म पथ पर अग्रसर होता है। सम्पूर्ण विश्व ही मानवता रुपी धर्म के स्वरूप से जुड़ा है। प्रभा खेतान ने भी अपने उपन्यासों में धर्म के स्वरूप को उजागर किया है। इन्होंने अपने उपन्यासों में धर्म से जुड़े मूल्य व अवमूल्य दोनों को उजागर किया है। इनके उपन्यासों में व्यक्त धार्मिक मूल्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा स्पष्ट किया है।

5.4.1 आस्था के रूप में –

मानव समाज में धर्म आस्था का विषय है। इस कारण व्यक्ति इसमें विश्वास रखता है। अपने हर कार्य हेतु ईश्वर पर विश्वास रखता है। प्रभाजी ने भी अपने उपन्यासों में धर्म के प्रति मानव के मन में विश्वास को उजागर किया है। 'तालाबंदी' के श्यामबाबू ने अपने व्यापार के सुचारु रूप से बिना विघ्न के उत्तरोत्तर वृद्धि हेतु ईश्वर के प्रति विश्वास को उजागर किया है। इसलिए हर दिन ऑफिस पहुँचते ही राणी सती और हनुमान जी की तस्वीरों को धुप–बत्ती कर अपने काम की शुरुआत करते है। वहीं दूसरी ओर श्यामबाबू की पत्नी श्यामबाबू को पतिरूप में वरण के पश्चात ईश्वर के प्रति आस्था प्रकट करते हुए कहती है– "देवता जैसे पति सभी कुछ तो भगवान ने दिया था, इसलिए शिकायत क्यों करे? और किसलिए मन में घमंड लाये।" 'छिन्नमस्ता" की दाई माँ प्रिया को अपने डर से मुक्ति पाने और अपनी समस्याओं को मिटाने हेतु बालाजी व राणीसती से मनौती मांगने की सलाह देती हुई ईश्वर के प्रति विश्वास के प्रतीक के रूप में उभरी है।

'आओ पे पे घर चले' की आइलिन के ईश्वर के प्रति विश्वास को पुष्ठ किया है। आइलिन मानती है कि ईश्वर यदि व्यक्ति को कष्ट देता है तो उससे उभरने की शक्ति भी देता है। इसी विश्वास को मानते हुए वह आश्रय न मिलने की निराशा में ग्रस्त प्रभा को हौसला व हिम्मत देती है तथा उसे श्री हनुमान की आराधना करने को कहती है।

5.4.2 अंधविश्वास –

धर्म आस्था का विषय होने के कारण लोगों का ईश्वर पर विश्वास रखना स्वाभाविक है परंतु इस विश्वास के साथ–साथ लोगों में अंध–विश्वास भी पनपता है। इसी अंधविश्वास के कारण व्यक्ति कर्म को छोड़कर भाग्य पर अधिक भरोसा करने लगता है और धर्म के यथार्थ स्वरूप को भूलाकर अंधविश्वाश में धँसते जाता है और अपनी तरक्की की राह में अंकुश लगा देता है। इसी संदर्भ में इलाचन्द्र जोशी लिखते है– "धर्म के लिए जानबूझकर सहर्ष अपनी बलि देना इस देश की विशेषता रही है, और जन महासागर के बीच में कूदकर उतने लोगों ने अपनी बलि देकर महापुण्य लूटा है।"[59] 'तालाबंदी' उपन्यास में श्यामबाबू की माँ अपने बेटे की तरक्की के लिए उसे कर्मठ बनने के सीख देने की बजाय ईश्वर से मिन्नतें माँगती है– "हे मेरी सती माता। मेरा लंगड़िया बाबा हनुमान जी। थे सागे चलियों, मेरे लाल की थे रक्षा करोगा।"[60]

5.4.3 रूढ़िवादिता –

आज हमारा देश जहाँ विज्ञान की दिशा में उन्नति कर रहा है वहीं दुसरी ओर आज भी हमारा देश वही घिसी–पिटी परम्पराओं, रीति–रिवाजों व बाह्यडंबरों में फँसा हुआ परिलक्षित होता है। विशेषतः हमारे ग्रामीण परिवेश में रूढ़ियों के प्रति अंधविश्वास ज्यादा देखने को मिलता है। वर्तमान में भी हमारे गाँव अंधविश्वासों एवं भ्रांत धारणाओं के बंधन से मुक्त नहीं हो पाए है। इस कारण आज भी हमारे गाँव पिछड़े हुए है। नगरों में भी धर्म के नाम पर रूढ़िवादिता में कोई कमी नहीं है। ऐसे कई उदाहरण हमें नगरों व पढे–लिखे लोगों में भी देखने को मिल जायेगें।

'तालाबंदी' के श्यामबाबू अपने व्यापार में आने वाली मुसीबतों के लिए ईश्वर को जिम्मेदार मानते है। कोई भी मेहनत या प्रयास को किए बिना परिस्थितियों से नहीं उभरने का जिम्मेदार वह ईश्वर को मानने के कारण उन पर क्रोध भी व्यक्त करते है। वे कहते है– "हे भगवान यह कैसी यंत्रणा है। तु सब ले ले। मुझे मुक्ति दे। एलिगन रोड़ के मोड़ पर हनुमान जी के मंदिर के सामने उनहोंने गाड़ी रोकने को कहा। उतरकर बाबा को प्रणाम किया। ग्यारह रुपए चढ़ाए, चरणामृत लेकर मन थोड़ा शांत हुआ। संकटमोचन का जप करने लगे साथ ही यह भी सोचने लगे कि आज यदि मेरा काम न हुआ तो मैं.....हाँ मैं कभी तेरा नाम नहीं लूँगा।"[61]

'छिन्नमस्ता' की प्रिया भी रूढ़िवादिता के कारण अपना सम्पूर्ण बचपन उपेक्षा की आड़ में जीती है तथा धार्मिक संस्कारों में नारी के मासिक धर्म को अपावन मानने के कारण समय से पूर्व मासिक धर्म आने पर प्रिया अपनी माँ के द्वारा दी जाने वाली यातनाओं का

शिकार होती है।

'पीली आँधी' उपन्यास भी रूढ़िवादिता के झाल को विस्तार देता है। माधो की पत्नी के मिर्गी के दौरे पड़ने पर उसका इलाज करवाने की बजाय राधाबाई उसे हनुमान जी का स्मरण कर अपने गुनाहों की माफी मांगने की बात कहती है तथा स्वयं चाँदी का कलश चढ़ाने व रात्री जागरण रखने की मनौती माँगती है। वही दूसरी ओर काशी में मौत को स्वर्ग प्राप्ति का मार्ग खुलने का प्रतीक मानने की धारणा के कारण काशी में राधाबाई की मौत होने पर उसे पुण्यात्मा मान उसके रहने के स्थान पर बाबा विश्वनाथ का मंदिर बनाया जाता है जो हमारी रूढ़िवादी सोच का परिचायक है।

5.4.4 संस्कार रुप में मान्य–

भारतीय संस्कृति में ईश्वर में आस्था होने के कारण धार्मिकता लोगों में कूट–कूट कर भरी है। तैंतीस करोड़ देवी–देवताओं को मानने वाली हमारी संस्कृति में देवी–देवताओं की पूजा–अर्चना की जाती है और अपनी भक्ति से संबंधित अनुष्ठान को पूरा किया जाता है। लोग पाप–पुण्य में विश्वास के कारण धार्मिक संस्कारों को पूरी तन्मयता के साथ सफल करने के लिए प्रयासरत रहते है। भारतीय संस्कृति में कई धार्मिक संस्कार हैं। उनमें से एक संस्कार तीर्थाटन भी हैं। उसकी एक झलक हमें 'अपने–अपने चहरे' उपन्यास में दिखाई देती हैं। मिसेज गोयनका अपने पति को कहती हैं– "मैं तो कहती हूँ अब छोड़िए दुनिया जहान का प्रपंच रमेश का ब्याह हो जाए तो फिर चलते है तीरथ करने। अब जरा भागवत भजन में मन लगाइए। पूजा पाठ किया कीजिए।"[62]

विवाह संस्कार में पति–पत्नी के एकाकार होने से पहले पहली रात अलग रहकर देवी–देवताओं की आराधना को प्रमुख माना जाता है। इस प्रथा के पीछे लोगों की मान्यता है कि इस तरह ईश्वर की अर्चना करने पर ईश्वर दंपति के वैवाहिक जीवन को सुखद व सफल बनाने का आशीर्वाद देते है। 'छिन्नमस्ता' में नरेंद्र की माँ उसे समझाती हूई कहती है– "बेटा शादीवाली रात तो अलग ही सोते है ना, कल देवी–देवताओं की पुजा हो जाए, सुहागथाल जीमले, उसके बाद ही......।"[63]

भारतीय परंपरा में प्रत्येक कार्य के प्रारम्भ हेतु कुछ धार्मिक अनुष्ठान व विधि विधान है जिसका पालन लोग बड़ी आस्था के साथ करते है। जिसके कुछ अंश हमें 'पीली आँधी' उपन्यास में देखने को मिलते है– जैसे पहली बार कुएँ में पानी आने पर अन्नदान किया जाता है। व्यापार में लाभ होने पर ईश्वर को आभार प्रकट करने हेतु दान–दक्षिणा देना व महाप्रसाद बना कर लोगों को भोजन करवाना शामिल है।

'स्त्री पक्ष' में धार्मिक संस्कारों का वर्णन मिलता है। अपने पति की लंबी आयु व सुरक्षा हेतु वृंदा की माँ द्वारा सतीमाता की पूजा करना तथा सुहाग के रक्षार्थ माता से मनौती माँगना आदि।

5.4.5 धर्म का विकृत रूप –

आज धर्म आस्था का विषय न होकर कट्टरता का विषय बन गया है। धर्म लोगों को प्रेम व सौहार्द सिखाता है परंतु धार्मिक कट्टरता ने धर्म के स्वरूप को बदलकर उसको विकृत कर दिया है। धार्मिक कट्टरता ने समाज में कई समस्याओं को जन्म दिया है– जैसे जातिगत भेदभाव, वर्ग–संघर्ष, आतंकवाद, सांप्रदायिकता आदि। आज लोग धर्म के नाम पर हिंसा व लोगों को मारना अपना धर्म समझने लगे है। इसी संदर्भ में शील प्रभा वर्मा के शब्द– 'धर्म के संदर्भ में लोग गर्व तो करते है। अपने धर्म को लेकर अकड़ते भी है, किन्तु धर्म का प्रमुख तत्व क्या है? वे नहीं जानते है।"[64]

प्रभा जी ने अपने उपन्यास 'अग्निसंभवा' में धर्म के विकृत रूप को उजागर किया है। ईसाई तथा मुस्लिम लोग अपने–अपने धर्म को श्रेष्ठ व महत्व देने के कारण दोनों धर्मों के बीच हिंसा भड़काने का कारण बनते है। हिन्दू धर्म में ईश्वर रूप में पूज्य श्री राम का मंदिर बनाने का प्रश्न एक धार्मिक समस्या बन धर्म का विकृत रूप धारण कर सांप्रदायिक दंगे होने का कारण बनता है। वही दुसरी ओर अमेरिका व इराक का युद्ध भी धर्म की विकृतता का ही परिणाम है। हैम्प कहता है– "सद्धाम इस शताब्दी का दुसरा हिटलर है उसने सारी दुनिया की गर्दन अपनी मुट्ठी में बंद कर रखी है। एडाल्फ हिटलर तो केवल जर्मनी का वर्चस्व चाहता था मगर यह फैनाटिक मुस्लिम।"[65]

5.4.6 आजीविका के साधन के रूप में –

आज धर्म लोगों की आस्था के खिलवाड़ को बढ़ावा दे रहा है। धर्म आज ब्राह्मणों व साधु संतो के लिए आजीविका कमाने का साधन बन गया है। लोगों की परेशानियों व आस्था का फायदा उठाकर ब्राह्मण लोग हजारों लाखों रुपये कमाते है। आस्था के नाम पर मंदिरों में दानपुण्य करवाकर अपने जीवन का निर्वाह करते है। ऐसे ही कुछ उदाहरण स्त्री पक्ष में देखने को मिलते है। कई बाबा लोग स्त्री को बहला–फुसलाकर, उनके अंदर भय पैदा कर आस्था के नाम पर उनसे निजात पाने के लिए अंगूठियाँ ताबीज व भस्म बनाकर देने के नाम पर हजारों रूपये ऐंठ लेते है।

5.4.7 धर्म की आड़ में शोषण की प्रवृत्ति –

भारत धर्म प्रधान देश होने के कारण यहाँ की जनता अंधविश्वास के गर्त में फंसी हुई है। धर्म के नाम पर भय उन्हें अपना अच्छा बुरा नहीं सोचने देता है। अंधविश्वास व

भ्रांत धारणाओं को मानने वाले लोग धर्म के ठेकेदारों के हाथों ठगे जाते है तथा उनके द्वारा कहे गये शब्दों को ब्रह्म वाक्य मानकर उसका पालन करते है। जिसका लाभ यह धर्माधिकारी उठाते है। इन धर्माधिकारियों ने अनेक मान्यताओं के नाम पर धर्म को खोखला बना कर लोगों के मध्य अंधविश्वास को बढ़ाया है। प्रभाजी ने अपने उपन्यास 'स्त्रीपक्ष' में इसी अंधविश्वास के नाम पर शोषण की प्रवृत्ति के यथार्थ को उजागर किया है। धर्माधिकारों व पाखंडी बाबा महिलाओं की धर्म के प्रति मानसिकता को जान उनका शोषण करते है। उन्हें पूजा व्रत कई विधियाँ करने को कहते है तथा जब कार्य पूरा नहीं होता है तो उन्हें भगवान के नाम पर डराते है और कहते है कि ईश्वर उनकी परीक्षा ले रहा है। अतः धीरज से काम लेना चाहिए। यह धर्म के प्रति अंधविश्वास ही है– "जो प्रार्थना पूरी हुई, बाबाजी का ताबीज, पत्थरों वाली अंगूठियों का चमत्कार था। जो पूरी नहीं हुई, लोग उसके बारे में भूल जाते। कुल मिलाकर औरतों की भीड़ बढ़ती रही, भीड़ कभी खत्म नहीं हुई।"[66]

अतः प्रभाजी ने धर्म के नाम पर लोगों के साथ खिलवाड़ व धर्म में आई विकृति से उत्पन्न समस्याओं को उजागर किया है।

5.5 सांस्कृतिक मूल्य –

मानव, समाज और संस्कृति परस्पर अन्तर सम्बन्धित है। मानव जीवन में सभ्यता और संस्कृति का बहुत महत्व है। व्यक्ति को मानवता की ओर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करने वाले आदर्शों, आचार–विचार और कार्य, अनुष्ठानों की समष्टि का नाम संस्कृति है। अर्थात संस्कृति मनुष्य को मनुष्य बनाने वाली और जीवन को अर्थ प्रदान करने वाली प्रक्रिया है। डॉ बाबूगुलाब राय के अनुसार– "संस्कृति का संबंध संस्कार से है, जिसका अर्थ संशोधन करना, उत्तम बनाना।"[67]

सांस्कृतिक मूल्य से तात्पर्य– अपने देश व समाज के रीति–रिवाजों और आचार व्यवहारों एवं व्यवहत मूल्यों के प्रति मनुष्य की प्रतिबद्धता से है। सांस्कृतिक चेतना से सम्पन्न मनुष्य ही मानवता का अधिकारी है तथा सांस्कृतिक चेतना से विहीन मनुष्य पशुवत समान है। आज के युग में सांस्कृतिक मूल्य भूमण्डलीकरण से युक्त व्यापार की वस्तु बन गए है। आज हमारे सांस्कृतिक मूल्यों का संक्रमण हो वह पतन की ओर अग्रसर हो रहे है। प्रभा जी के अपने उपन्यासों में सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन को अधिकांश रूप से उभारा है। इनके उपन्यासों में व्यक्त सांस्कृतिक मूल्यों का स्वरूप निम्नानुसार है।

5.5.1 भारतीय संस्कृति का स्वरूप –

भारत की संस्कृति सारे विश्व में महान संस्कृति के रूप में जानी जाती है। भारत की संस्कृति प्राचीन संस्कृतियों में से एक है। इसी संदर्भ में डॉ अरुण गंगेले लिखते है–

"भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीन संस्कृतियों में से एक है। विश्व में प्राचीन काल से ही अनेक संस्कृतियों का उत्थान, पतन हुआ किन्तु भारतीय संस्कृति एवं उसकी प्राचीन सभ्यता हजारों वर्षों बाद भी आज जीवित है।"[68] इसकी सबसे बड़ी विशेषता भारतीय संस्कृति में समन्वय की भावना से है। भारतीय संस्कृति की प्रथम ईकाई परिवार है जिसके द्वारा व्यक्ति स्नेह, दया, ममता, सेवाभाव, सहानुभूति आदि संस्कारों को सीखता है। प्रभाजी ने अपने सभी उपन्यासों में नारी संबंधित सभी संस्कारों के आदर्श मूल्यों को स्थापित किया है। 'आओ पे पे घर चले, पीली आँधी, छिन्नमस्ता, स्त्री पक्ष, अपने–अपने चेहरे' में स्त्री के सेवाभावी, पतिवत प्रेम, ममता, नारी का सबला रूप जैसे आदर्श मूल्यों को स्थापित किया है।

5.5.2 पाश्चात्य संस्कृति का स्वरूप –

प्रभा जी ने जहाँ भारतीय संस्कृति के आदर्श को स्थापित किया है वही दूसरी ओर उन्होंने पाश्चात्य संस्कृति के विकृत रूप का यथार्थ वर्णन किया है। पाश्चात्य संस्कृति में नारी के असंयमित जीवन जीने व भोग विलास में रिश्तों के अलगाव रूपी मूल्यों का वर्णन हुआ है। 'आओ पे पे घर चले' में आइलिन का ऐयाश व कामुक स्त्री के रूप में चित्रण हुआ है जो दो पति व पाँच प्रेमी रखकर भी संतुष्ट नहीं है। वही दूसरी ओर पाश्चात्य नारी का एक व्यक्ति के साथ जीवन बिताने के प्रति आस्था के मूल्य के विकृत रूप को उभारा है। मरिल के द्वारा भी उन्होंने इसी मूल्य के विकृत रूप का समर्थन के कारण बच्चों से अलगाव का वर्णन भी किया है।

5.5.3 प्रेम –

प्रभा जी नें अपने उपन्यासों में प्रेम के आदर्श व विकृत दोनों मूल्यों का वर्णन किया है। छिन्नमस्ता की प्रिया अपने बेटे से प्रेम के कारण ही उसे अपने पति के पास उसके अच्छे भविष्य के कारण छोड़ती है तथा स्वयं उसकी याद में तड़पती रहती है। 'अपने–अपने चेहरे' की मिसेज गोयनका अपने बच्चों से ममता के कारण ही अपने पति के धोखे को बर्दाश्त करती है। 'स्त्री पक्ष' में वृंदा के बच्चे अपनी माँ से प्रेम के कारण ही उसके प्रेमी को अपनाते है। 'तालाबंदी' उपन्यास में माँ बेटे के मध्य प्रेम को उजागर किया है। श्यामबाबू अपनी माँ से कहते है– "माँ तू खा–पी दान–पुण्यकर चिंता ही मत कर तेरे सांवरों तन तकलीफ कोनी देव।"[68] 'आओ पे पे घर चले' की हेल्गा अपने बच्चों के प्रति प्रेम व ममता को विस्मृत कर देती है। हेल्गा के माध्यम से प्रभाजी ने बच्चों के प्रति प्रेम के विकृति को उभारा है– "मुझे मेरे बच्चों से प्यार नहीं, वे मरे जिए या कहीं भी जाए।"[70]

5.5.4 नारी प्रदत्त संस्कार व उनका हास –

भारतीय संस्कृति में प्रेम, त्याग, समर्पण व सेवाभाव आदि नैतिक मूल्यों को अधिक महत्ता प्रदान की गई है तथा इन सभी की छवि को भारतीय संस्कृति में नारी के मध्य देखने की परम्परा है। 'छिन्नमस्ता, स्त्री पक्ष' में नारी प्रदत्त संस्कारों की अनुगूंज ज्यादा सुनाई देती है। प्रिया' वृंदा की माँ उन्हें स्त्रीवत संस्कार शिष्टाचार, अनुशासन, सेवा, त्याग, समर्पण, मौन स्वीकृति' सदआचरण, शील व सौन्दर्य से युक्त चरित्र आदि संस्कारों को आत्मसात करने व उनके अनुपालन पर जोर देती है। उन्हें पति को परमेश्वर मान उसे सम्मान देना, पवित्र आचरण, व चरित्रवान रहने की सीख दी जाती है तथा हर कार्य हेतु दूसरों पर दोषारोपण करने के बजाय स्वयं में दोष को ढूंढने पर जोर देने को कहा जाता है। अतः पूर्व रूप से उसे मानव की पदवी से विलग हो अपने प्रति समभाव को भूलने जैसे आदर्श को स्थापित करने का प्रयास किया गया है। वहीं दूसरी ओर प्रभा जी ने ऐसे ही स्त्रीत्व रूपी नैतिक मूल्यों की विकृति को भी उजागर किया है। भारतीय नारी पर पाश्चात्य नारी के जीवन के संस्कारों की छाया का दर्शन कराया है। पाश्चात्य नारी जीवन से प्रभावित होने के कारण 'स्त्री पक्ष' की नारी पात्र के माध्यम से अपने शील को त्याग शारीरिक रूप से समर्पण की भावना को उजागर किया है– "यदि मन मिलजाए तो शरीर को क्यों संजोना? कुवारपन कोई सम्पति तो नहीं है कि उसे इतना संभाल कर तौल कर सात तालों में बंद रखा जाए।"[71]

5.5.5 विवाह संस्कार –

प्रभा जी नें अपने सभी उपन्यासों के माध्यम से विवाह रूपी संस्कार के प्रति मूल्यों का विकृत रूप ही उजागर किया है। भारतीय संस्कृति में प्रचलित विवाह जन्म जन्मातर का बंधन मानने वाली परम्परा को विश्रुंखलित कर उसके स्थान पर विवाह विच्छेद, अनमेल विवाह, विवाहेत्तर संबंधों की अधिकता को प्रकट किया गया है। 'अपने–अपने चेहरे' की मिस्टर व मिसेज गोयनका, 'स्त्री पक्ष' के सुमित व वृंदा, 'छिन्नमस्ता' के प्रिया व नरेन्द्र, 'पीली आँधी' के गौतम व सोमा आदि के द्वारा विवाह रूपी संस्था के विच्छेद को दर्शाया है साथ ही साथ में प्रत्येक के विवोहत्तर सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से उभारा है। विवाह रूपी संस्कार की सार्थकता को 'अपने–अपने चेहरे' की रमा के द्वारा स्पष्ट किया है– "अरे कितना भी बिजनेस कर ले, पढ़ाई कर ले, लेकिन एक चुटकी सिंदूर का आत्मबल ही अलग होता है।"[72] इस प्रकार प्रभाजी ने अपने भोग व कामुक भूख की लालसा के कारण सभी पारिवारिक नैतिक मूल्यों के पतन की अवस्था को दर्शाया है।

5.5.6 ममता –

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में ममता के स्वरूप को उजागर करते हुए उसके हास का भी उल्लेख किया है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में नारी के द्वारा पुत्र के प्रति ममता को अधिक उजागर किया है। इनके सभी उपन्यासों में नारी का माँ रूप पुत्र के लिए ममत्व व पुत्री के लिए उपेक्षित रूप में उभर कर आया है। 'छिन्नमस्ता' में प्रिया के जन्म पर जब उनके पिता लादुरामजी को उनकी माँ सावचेत करती है तब वह अपनी माँ को समझाते हुएँ कहते है– "माँ सब अपना–अपना भाग्य लेकर आती है जैसी राम की मर्जी।"[73] 'अपने–अपने चेहरे की' मिसेज गोयनका ने पति के विश्वासघात के बाद अपने रिश्ते की मजबूरी को व्यक्त किया है– "मुझे क्या अच्छा लगता हैं, तुम बच्चों का मुह देखकर बर्दाश्त कर लेती हूँ।"[74]

5.5.7 संस्कार –

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में संस्कारों के सभी रूपों का वर्णन किया है। उन्होंने जन्म से लेकर मृत्यु तक होने वाले संस्कारों को अपने उपन्यास में स्थान दिया है। 'पीली आँधी' में स्त्री के पारिवारिक दायित्व संबंधी संस्कार जैसे सुबह चाकी पर बैठना, बिलोना, रसोई बनाना, पुजा अर्चना करना आदि विवाह संबंधी संस्कार जैसे गाना, नांचना, मामा द्वारा वधु को उठाकर लाना, नववधु का श्रंगार आदि का वर्णन इसमें किया है।

प्रभा जी नें अपने उपन्यास 'पीली आँधी' में जीवन के अंतिम संस्कार अंत्येष्ठि संस्कार से जुड़े श्राद्ध संस्कार का भी वर्णन किया है। "आज बड़े बाबू का श्राद्ध है। ब्राह्मणों को भोजन करवाया गया। धोती गमछा और सवा रुपया दक्षिणा दी गई। अन्नदान, वस्त्रदान, गोदान सब कुछ दिया गया। चुरू में धर्मा दे का रुपया भेजा गया।"[75]

5.5.8 सांस्कृतिक मूल्य का विकृत रूप –

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों के द्वारा सांस्कृतिक मूल्यों के आदर्शवादी रूप के स्थान पर उसके विकृत रूप का यथार्थ वर्णन किया है। इन्होंने समाज व परिवार के यथार्थ सांस्कृतिक मूल्यों का चित्रण किया है। भारतीय व पाश्चात्य संस्कृति दोनों के मध्य उन्होंने मूल्यों के पतन को उजागर किया है। इसी मूल्य विकृति का एक उदाहरण हमें 'आओ पे पे घर चले' उपन्यास में दिखाई देता है जहाँ कैथी श्वेत–अश्वेत के मध्य संघर्ष का शिकार होती है। श्वेत के द्वारा प्राप्त अपमान के कारण ही अश्वेत की प्रतिशोध की भावना व घृणा के कारण कैथी पर अश्वेत द्वारा बलात्कार का प्रयास किया जाता है। ऐसी घटना सांस्कृतिक मूल्यों के हास को ही परिलक्षित करती है।

वहीं दूसरी ओर 'तालाबंदी' में एक युवा के द्वारा अपने पिता के सामने विचारों के माध्यम से विद्रोह प्रकट करने की प्रवृत्ति भी सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को दर्शाती है। श्यामबाबू का बेटा पप्पू अपने पिता से कहता है– "पापा आप ह्यूमन नहीं। आपके लिए घर, परिवार किसी का कोई महत्व नहीं। मम्मी बोलती नहीं। उनको आपसे डर लगता है पर आप? आप तो अपने व्यवसाय के अलावा कुछ और सोच ही नहीं पाते।"[76]

निष्कर्षतः प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में भारतीय संस्कृति के विविध पहलुओं व पुराने आदर्शवादी मूल्यों को स्थान दिया है। इनमें परम्परागत सांस्कृतिक मूल्य, बदलते परिवेश के साथ नये संदर्भों में नवीन मूल्यों की खोज व सांस्कृतिक मूल्यों में पनपती विकृति का यथार्थ रूप में चित्रण किया है।

संदर्भ सूची –

1. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 31
2. वहीं पृष्ठ – 33
3. स्त्री पक्ष, प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग जून 1999, पृष्ठ –20
4. आओ पेपे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 10
5. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 55
6. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, उषाकीर्ति राणावत,पृष्ठ –97
7. स्त्रीवाद और महिला उपन्यासकर, डॉ वैशाली देशपांडे, पृष्ठ –186
8. नारी विमर्श, डॉ. बच्चनसिंह, सं. डॉ नगेंद्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ – 434
9. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 117
10. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 10
11. अपने–अपने चेहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ –181
12. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 134
13. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 154
14. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, हंस पत्रिका, अप्रैल 1992, पृष्ठ – 58
15. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, हंस पत्रिका, मार्च 1992, पृष्ठ – 63
16. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 189
17. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ अशोक मराठे, पृष्ठ – 77
18. अपने–अपने चेहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 124

19. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 10–11
20. अपने–अपने चेहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 33
21. वहीं पृष्ठ – 91
22. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 240–241
23. प्रभा खेतान के उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन, प्रेम रंजन भारती, पृष्ठ – 120
24. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 16
25. वही, पृष्ठ – 27
26. वही, पृष्ठ – 62
27. वही, पृष्ठ – 62–63
28. अपने अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 131
29. वही, पृष्ठ – 131
30. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 36
31. वही, पृष्ठ – 36
32. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 56
33. वही, पृष्ठ – 56
34. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 23–24
35. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ अशोक मराठे, पृष्ठ – 75
36. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, हंस पत्रिका, मार्च 1992, पृष्ठ – 6
37. वही, पृष्ठ – 52
38. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 109
39. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 194
40. उपनिवेश में स्त्रीः मुक्ति कामना की दस वार्ताएँ, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 190–191
41. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 23–24
42. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, हंस पत्रिका, अप्रैल 1992, पृष्ठ – 58
43. एड्स, डॉ प्रभा खेतान, आज– पुजा वार्षिकांग, पृष्ठ – 65
44. प्रभा खेतान के साहित्य में नारी विमर्श, डॉ कामिनी तिवारी, पृष्ठ – 252
45. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 44
46. वही, पृष्ठ – 44
47. एड्स, डॉ प्रभा खेतान, आज– पुजा वार्षिकांग, पृष्ठ – 65
48. वही, पृष्ठ – 44

49. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ अशोक मराठे, पृष्ठ – 79
50. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, हंस पत्रिका, मार्च 1991, पृष्ठ – 57
51. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 139
52. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 25
53. वही, पृष्ठ – 38
54. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, हंस पत्रिका, अप्रैल 1992, पृष्ठ – 8
55. वही, पृष्ठ – 58
56. एड्स, डॉ प्रभा खेतान, आज– पुजा वार्षिकांग, पृष्ठ – 66
57. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 12
58. एड्स, डॉ प्रभा खेतान, आज– पुजा वार्षिकांग, पृष्ठ – 76
59. जहाज का पंछी, इलाचन्द्र जोशी, पृष्ठ – 444
60. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 23–24
61. वही, पृष्ठ – 69
62. अपने अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 18
63. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 113
64. महिला उपन्यासकार के रचना में बदलते सामाजिक संदर्भ, डॉ शील प्रभा वर्मा, पृष्ठ – 182
65. एड्स, डॉ प्रभा खेतान, आज– पुजा वार्षिकांग, पृष्ठ – 68
66. स्त्री पक्ष, डॉ प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग, जून 1999, पृष्ठ–23
67. भारतीय संस्कृति की रूपरेखा, बाबू गुलाबराय, पृष्ठ – 3
68. महिला उपन्यासकारों के रचनाओं में वैचारिकता, डॉ शशि`जेकब, पृष्ठ – 126
69. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 23
70. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 82
71. स्त्री पक्ष, डॉ प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग, मार्च 1999, पृष्ठ – 20
72. अपने अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 10
73. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 23
74. अपने अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान
75. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 269–270
76. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 80

षष्ठम अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यास – विविध आयाम

षष्ठम अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यास– विविध आयाम

प्रस्तावना

6.1 नारी जीवन के विविध रूप

6.1.1 परम्परागत नारी

6.1.2 ममतामयी नारी

6.1.3 शिक्षाधात्री नारी

6.1.4 व्यवसायी नारी

6.1.5 शोषित नारी

6.1.5.1 सामाजिक शोषण

6.1.5.2 आर्थिक शोषण

6.1.5.3 शारीरिक शोषण

6.1.6 विदेशी नारी

6.1.7 विद्रोही नारी

6.2 प्रेम और सेक्स का स्वरूप

6.2.1 सेक्स

6.2.2 प्रेम

6.2.2.1 निश्छल प्रेम

6.2.2.2 अवैध व असफल प्रेम

6.2.2.3 प्रेम के विविध रूप

6.3 सामाजिक आयाम की तलाश

6.3.1 परिवार संस्था

6.3.2 पारिवारिक संबंध

6.3.2.1 माँ–बेटी

6.3.2.2 माँ–बेटा

6.3.2.3 भाई–बहन

6.3.2.4 ननद–भाभी

6.3.2.5 पति–पत्नी

6.3.2.6 सास–बहू

6.3.3 ग्रामीण संस्कृति

6.3.4 शहरी संस्कृति

6.4 वैवाहिक व विवाहेत्तर सम्बन्ध

6.4.1 विवाह

6.4.1.1 परम्परागत विवाह

6.4.1.2 अनमेल विवाह

6.4.1.3 प्रेम विवाह

6.4.2 विवाहेत्तर संबंध

प्रभा खेतान के उपन्यास–विविध आयाम

प्रस्तावना –

हिन्दी साहित्य में शताब्दियों से अनेक रचनाकारों ने विविध विषयों पर रचनात्मक लेखन कार्य किया है। उन रचनाकारों में महिला लेखिकाएँ भी शामिल है। यह महिला साहित्यकाराएँ अपनी नारी जाति की जागृति, अधिकार व सम्मान के प्रति अधिक सजग, सशक्त व मुखरित होकर साहित्य क्षेत्र में अपने पंख को उड़ान देती हुई नये युग के आरम्भ की ओर कदम बढ़ा रही है। साहित्य में किसी भी नये युग की शरूआत तब तक नहीं होती जब तक उस युग की चेतना का आह्वान विश्वास रूप में परिणित नहीं होता। अतः हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में नव युग हेतु कई महिला साहित्यकारों ने नारी संबंधित हर पहलू को उद्घाटित करते हुए नारी त्रासदी को उजागर करते हुए नारी सशक्तिकरण का आह्वान किया हैं। जिसमें कई महिला साहित्यकारों ने अपना अतुलनीय योगदान दिया है। इनमें एक प्रमुख नाम 'प्रभा खेतान' का भी है।

प्रभा खेतान का साहित्य संसार अपने जीवन के अनुभवों का दस्तावेज है। प्रभा जी ने सर्वप्रथम कविताओं से अपने मन की बातों को रखना चाहा। परन्तु वह पूर्णरूप से उन भावनाओं को स्पष्ट न कर सकने के कारण उन्होंने उपन्यास विधा की ओर रुख किया। प्रभा जी के उपन्यास नारी मुक्ति व यातना के लम्बे दस्तावेज है। कथ्य व शैली में नयापन प्रभा जी के उपन्यासों की विशेषता रही है। प्रभाजी का सारा उपन्यास साहित्य नारी जीवन पर केन्द्रित है। उन्होंने कुल आठ उपन्यास लिखे है। उनमें 'आओ पे पे घर चले', 'अग्निसंभवा', व 'एड्स' आदि विदेशी परिवेश में नारी त्रासदी से वर्णित है। 'छिन्नमस्ता', 'अपने–अपने चेहरे', 'तालाबंदी', पीली–आँधी' व 'स्त्री पक्ष' आदि भारतीय परिवेश में नारी संघर्ष से वर्णित है। उन्होंने नारी जीवन से संबंधित निराशा, प्रेम, अस्तित्व की तलाश, अकेलापन, सामाजिक संबंधों से संघर्ष आदि समस्याओं को उजागर किया है। उन्होंने नारी के कई रूपों को अपने उपन्यासों में स्थान दिया है। उन्होंने अपने उपन्यास के द्वारा भारतीय नारी व विदेशी नारी के जीवन से संबंधित हर पहलुओं को उद्घाटित करने का सफल प्रयास किया है। प्रभा खेतान की लेखन कला व विचारों के संबंध में सरला माहेश्वरी ने लिखा है– "महिला के दुख दर्द को समझती और शब्दों में ढालती उन्होंने लेखनी के माध्यम से स्त्री की स्वायत्ता का नया संसार निर्मित किया है।"[1]

आधुनिक युग में भी नारी अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत है। आज भी वह घुटन, पीड़ा, मानसिक यातनाओं का सामना कर रही है और पुरुष की दासता झेल रही है। आज भी वह समाज में उचित स्थान की आकांक्षा को मन में समाए हुएँ है। इसी संदर्भ में विमला

शर्मा कहती है– "नारी स्वातंत्र्य एवं जागृति को लेकर पिछले चार दशकों में कितने ही आंदोलनों ने जन्म लिया है, उनका प्रभाव नारी की अंतरंग मानसिकता पर तो स्पष्ट परिलक्षित होता है किन्तु उसकी बहिरंग प्रासंगिकता का संदर्भ विशेष परिवर्तित नहीं हुआ है। वह माँ, पत्नी, प्रेयसी, बहन, भाभी, विधवा, वैश्या, रखैल आदि रूपों मे किसी न किसी तरह पुरुष से स्थापित सह–संबंधों द्वारा ही जानी जाती है।"[2]

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में नारी के विविध रूपों का वर्णन किया है। प्रभाजी ने घरेलु महिला, व्यवसायी महिला, प्रेम में अभिभूत महिला, संबंधों में चोटिल नारी की व्यथा का वर्णन किया है।

प्रभा जी ने विभिन्न सामाजिक आयामों के संदर्भों को भी अपने उपन्यास में स्थान दिया है। प्रभा जी ने समाज और व्यक्ति के संघर्षों के बीच नारी के अस्तित्व की पहचान को उकेरा है। इस प्रकार उन्होंने अपने उपन्यासों में विविध विषयों पर लेखनी चलाई है, जो प्रस्तुत अध्याय मे वर्णित है।

6.1 नारी जीवन के विविध रूप –

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान युग तक साहित्य में नारी का जीवन विभिन्न अवस्थाओं में वर्णित हुआ है। प्राचीन काल में स्वतंत्रता से पूर्व नारी की स्थिति काफी दयनीय थी। नारी को मात्र भोग की वस्तु माना जाता था। पुरुष की अधिकारिणी नारी वस्तु रूप में समर्पित हो संतान उत्पति का साधन मात्र थी।

प्राचीन काल में नारी को सतीप्रथा, बालविवाह, अनमेल विवाह, जैसी कुप्रथाओं को झेलना पड़ता था। उस समय नारी आर्थिक रूप से असहाय व गुलामी का जीवन जीने का दंश झेल रही थी। प्राचीन समय में नारी हर अधिकारों से वंचित थी। शिक्षा का अधिकार भी उससे छीन लिया गया था। वह मात्र पुरुष की दासी बन जीवन का निर्वाह कर रही थी। इसी संदर्भ में अरविंद जैन ने कहाँ है– "सांमती व्यवस्था में नारी एक वस्तु है, संपति है, संभोग और संतान की इच्छा पूरी करने वाली मादा है।"[3]

स्वतंत्रता पूर्व नारी की स्थिति में परिवर्तन हुआ है। नये–नये कानूनों व समाज–सुधारकों के प्रयासों के द्वारा नारी शोषण को रोक समाज में उचित स्थान दिलाने के प्रयास में सफलता प्राप्त की है तथा स्वयं नारी ने भी अपनी शक्ति को पहचान अपने अस्तित्व के प्रति जागरूकता लाने का प्रयास किया है। आज नारी शिक्षित बन हर क्षेत्र में अपनी पहचान को कायम कर पुरुष के समकक्ष समान स्थान की अधिकारिणी बन गई है।

समकालीन युग में नारी के स्वरूप में आमूलचुल परिवर्तन हुआ है। वह पुरुष के समकक्ष स्थान को प्राप्त कर समाज में उत्तरोत्तर अपने अस्तित्व को प्रकट कर रही है परन्तु

उसकी जड़ों में आज भी वह सिसक रही है। नारी की इसी सिसकियों व कठोर एवं दयनीय जीवन का चित्रण कई महिला साहित्यकारों ने अपने साहित्य में किया है और इन्हीं साहित्यकारों में एक प्रसिद्ध नाम है– प्रभा खेतान। इन्होंने नारी जीवन से संबंधित कई रूपों को अपने उपन्यासों में प्रकट किया है। इनके उपन्यासों में नारी जीवन की अव्यक्त यातनाओं व पीड़ा को स्वर मिला है। प्रभाजी ने नारी जीवन के हर पहलू को उजागर करते हुए नारी विषयक विभिन्न आयामों को चित्रित किया है। इनके अनुसार नारी ही नारी की पीड़ा को सफल रूप से व्यक्त कर लोगों की आत्मीयता से जोड़ सकती है। इसी संदर्भ में वह लिखती है। "अक्सर सोचती हूँ कि औरत अपने बारे में ऐसा कुछ लिखे जिसे किसी पुरुष ने अभी तक न लिखा हो। क्या लिखना चाहिए? मैं अब भी नहीं समझ पा रही हूँ ऐसी कोई स्पष्ट विचारधारा मेरे पास नहीं है। किन्तु जानती हूँ स्त्री के अनुभवों की अभिव्यक्ति कुछ विशेष और अलग रंगों और रेखाओं की पहचान है। कम से कम कुछ तो ऐसा खोजा जा रहा है जिसे केवल औरत ही खोज सकती है।"[4] प्रभाजी ने प्रत्येक परिवेश व हर क्षेत्र में नारी जीवन की विविध दशाओं व पहलुओं का अपने उपन्यासों में वर्णन किया है।

6.1.1 परम्परागत नारी –

आधुनिक नारी जीवन की वाहक प्रभा खेतान के उपन्यासों में परम्परागत नारी का चित्रण भी परिलक्षित होता है। 'छिन्नमस्ता', 'तालाबंदी', 'स्त्री पक्ष', 'पीली–आँधी' आदि उपन्यासों में परम्परागत मूल्यों को संजोती हुई नारी का रूप दृष्टिगोचर होता है। प्रभा जी के अधिकांश उपन्यासों में संयुक्त परिवार को दर्शाया गया है। जिसमें धर्म, व परम्परा के नाम पर स्त्री को पुरुषों की दासी बन स्व अस्तित्व को मिटाते हुए शोषित होने पर मजबूर किया जाता है। ऐसे परिवारों में बेटे को प्रभुत्व का साक्षी व बेटी के अस्तित्व को नकारा जाता है। 'छिन्नमस्ता' की कस्तुरी रूढ़िवादी माँ का रूप है। जिसने पाँचवी संतान के रूप में लड़की के जन्म को मन से नहीं स्वीकारा और कभी भी उसे माँ का आँचल व स्नेह प्राप्त नहीं हुआ। अपनी ही माँ से उपेक्षा के कारण वह हीन भाव से ग्रस्त होकर अपने भाई का हवस का शिकार होती है। इस उपन्यास में संयुक्त परिवार के द्वारा सास व बहू के मध्य रिश्तों को भी उजागर किया गया है। सास को परम्परागत मूल्यों के नाम पर बहुओं को उत्पीड़न देते हुए दिखाया गया है। कस्तुरी के चौथी बेटी के जन्म के समय सास उसे देखने भी नहीं आती है और अपने बेटे से कहती है– "सावर भाया तेरा तो सारा रुपिया लुगाई के ऊपर खर्च होव जाव। म्हे भी तो सात–सात पैदा किया– इकाई ज्यादा नखरो हूँ, ति जिंतों सहारणों बित्तों ही या नखराली नार तने नचावेगी।"[5]

पीली आँधी में परम्पराओं के नाम पर अपनी भावनाओं को दमितकर त्यागमयी जीवन जीने वाली स्त्री का रूप है– पद्मावती। जब पद्मावती ब्याह कर माधो के साथ घर आती है तब राधा चाची को अच्छा नहीं लगता और वह दोनों को अलग रखने के लिए सांवरमल के बच्चों को दोनों के बीच भेज देती है। चाची की सोच थी कि माधो के बच्चा होने पर सांवरमल के बच्चों का महत्व कम हो जाएगा। इस उपन्यास में परम्परा में दबी स्त्री व परम्परागत विचारों की वाहक सांस का चित्रण मिलता है।

प्रभा के उपन्यासों में पुत्र कामना व कल्याण हेतु अंधविश्वासों से गिरी नारियाँ भी दिखाई देती है। वहीं कुछ परम्पराओं व प्रथाओं के नाम पर दहेज की आकांक्षी व नारी शोषण की जिम्मेदार नारियाँ भी परिलक्षित होती है।

स्त्रीपक्ष की वृंदा भी उपेक्षित बचपन की साक्षी है। उसकी माँ उसे बोझ समझ हमेशा डांटती रहती थी। वृंदा की माँ हर परिस्थिति के लिए वृंदा को जिम्मेदार मानती थी इसीलिए वह कहती है। "वृंदा यदि थोड़ी पकी होती, तो दुपट्टा उधाड़े इधर–उधर नहीं टहला करती तो भला उस मरे की क्या ताकत थी? यदि औरत के साथ कुछ गलत घटता है तो इसके लिए वह स्वयं जिम्मेदार है।"[6] "स्त्री पक्ष" उपन्यास पुरानी परम्परा "स्त्री पराया धन होती है" का सजीव चित्रण करता है। इसीलिए वृंदा का भाई हमेशा चिढ़ा–चिढ़ाकर कहता– "यह घर मेरा है, तू तो चली जाएगी। वृंदा तो पराई है, तू तो पराई होती है।"[7] यह जन्म से ही लड़की को पराया मानने की सीख को समेटे हुए है।

'अपने–अपने चेहरे' की मिसेज गोयनका द्वारा ऐसी परम्परावादी स्त्री को दर्शाया है जो परम्परा व संस्कारों के नाम पर अपने आत्मस्वाभिमान को कुचलकर परिवार की नींव मजबूत करने की सीख देती है, मिसेज गोयनका अपनी बेटी रीतु को परिवार के बिखराव को समेटने हेतु परम्परा व संस्कार रूपी दृष्टि को समझाने का प्रयास करती है– "देख बेटा, अकेली जिन्दगी काटे नहीं कटेगी। वह आज नहीं तो कल लौट आएगा तेरे पास। ये सब अफेयर चलते है क्या? जरा धीरज से काम ले। आज तो सिर पर ससुरजी है, मुन्ने के लिए बड़ा सा ट्रस्ट बना देंगे। करोड़ो की बात है। कुणाल तुमसे बात नहीं करता, नहीं करे क्या फर्क पड़ता है? तू तो आराम से खा पी और खुश रहा कर। खूब खर्च कर और सास–ससुर की सेवा कर, सब ठीक हो जाएगा।"[8] अतः स्पष्ट है कि प्रभाजी के उपन्यासों में परम्परागत नारियों का चित्रण भी दिखाई देता है।

6.1.2 ममतामयी नारी –

भारतीय शास्त्रों में नारी को एक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। इसीलिए शास्त्रों में लिखा है– "यत्र नारीयस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता"। इसी हेतु सामाजिक जीवन

में नारी को आदरस्वरूपा माना है। त्याग, समर्पण, सेवा, निष्ठाभाव, प्रेम, स्नेह आदि महानगुणों के द्वारा नारी का साकार रूप एकाकार हुआ है। इसके अतिरिक्त नारी का मातृत्व रूप हमारी संस्कृति में सर्वोपरि व सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसीलिए हमारी संस्कृति में कहा गया है– "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"[9] इसीलिए नारी के अन्य रूपों में माँ के रूप को अधिक महत्ता प्रदान की गई। नारी के जीवन की सार्थकता ही माँ बनने में मानी गई है। बच्चों का पालन, स्नेह, ममता, सेवा आदि मातृत्व की विशेषताएँ है। प्रभा जी के उपन्यासों में भी ऐसी ममतामयी नारी के विविध रूप उभर कर आये है।

'स्त्री पक्ष' उपन्यास की वृंदा एक ऐसी ही माँ का उदाहरण है। वृंदा का अपने पति से तलाक होने के बाद भी वह टूटती नहीं है बल्कि वह अपने बच्चों की अच्छी परवरिश हेतु ब्युटी क्लिनिक खोलकर अपने पैरों पर खड़ी होती है ताकि वह अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा व सही रूप से उनका पालन पोषण कर सके। "छिन्नमस्ता" उपन्यास में नरेन्द्र की माँ सदैव उसके लिए चिंतित रहती है। उसके खाना न खाने पर हमेशा पीछे–पीछे घूमती रहती है और कहती है– "खा ले बेटा, मेरा मन रखले, एक फुल्का भी खाएगा तो मैं रात को चैन से सो सकूँगी।"[10] दूसरी ओर 'छिन्नमस्ता' उपन्यास की दूसरी माँ 'कस्तुरी' भी अपने दोनों बेटों के लिए सदैव चिंता मे व्याकुल रहती है और बार–बार ईश्वर से मन्नतें माँगती रहती है और अपना सारा प्यार वह अपने दोनों बेटों पर लुटाती है। वहीं दूसरी ओर प्रिया भी अपने बेटे संजु से बहुत प्यार करती है। इसी कारण अपने बेटे के सुखद भविष्य के लिए वह अपने पति से तलाक के बाद उसे अपने पति के पास छोड़ देती है और हमेशा उसे याद करते हुए तड़पती रहती है।

'अपने–अपने चेहरे' की नायिका रीतु भी अपने पति से मतभेद के कारण उसे छोड़कर आ जाती है और हर पल अपने बेटे के लिए व्याकुल व रोती रहती हैं। 'पीली आँधी' उपन्यास की सुराणा की माँ भी अपने बेटे की हत्या से अत्यंत दुखी होती है और अपने बेटे को खोने का सदमा बर्दाश्त नहीं कर पाती है। उसके बिछोह में वह भी कुएँ में कूदकर आत्महत्या कर लेती है। वहीं दूसरी ओर ताईजी भी कभी माँ नहीं बन पाने के कारण अपनी सर्वस्व ममता अपने देवर के बच्चों पर न्यौछावर कर देती है। ऐसी ही एक ममतामयी माँ का स्वरूप 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में एक दायीं के रूप में उभरकर आया है। जिसमें वह दायीं अपनी माँ द्वारा उपेक्षित प्रिया पर अपार ममता लुटाती है। वह प्रिया की बीमारी में रात भर जागकर उसकी देखभाल करती है। उसे उसकी सगी माँ के प्यार की कमी कभी महसूस नहीं होने देती है।

प्रभा जी के उपन्यासों में अधिकांशत माँ का रूप बेटे के प्रति स्नेह व बेटियाँ के प्रति उपेक्षित भाव वाला प्रकट हुआ है।

6.1.3 शिक्षा धात्री नारी –

पुरातन समय में स्त्री को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। वह शिक्षा से वंचित रहती थी और अपना सम्पूर्ण जीवन ग्रहकार्यों व पारिवारिक सेवा में न्यौछावर करती थी और शिक्षा के अभाव के कारण सदैव शोषित होती थी। परन्तु आज वर्तमान समय या आधुनिक युग में नारी भी शिक्षा की अधिकारिणी बन गई है। आज वर्तमान युग में स्त्री शिक्षा को महत्व प्रदान किया गया हैं। आज नारी शिक्षा ग्रहण कर आत्मनिर्भर बन अपने परिवार के विकास में सहयोगिनी बन रही है और सही समय पर सही फैसले लेकर स्वयं के स्वाभिमान की रक्षा कर रही है। प्रभा जी के उपन्यासों में ऐसे ही कई शिक्षित नारियों के रुप दिखाई देते है।

'अपने–अपने चेहरे' की रमा एक शिक्षित नारी है जो विवाहित पुरुष के प्रेम जाल में फँस जाती है परन्तु अपनी उचित शिक्षा व समझ के दम पर उससे बाहर निकल कर आत्मनिर्भर बन व्यवसाय चलाती है। दूसरी नायिका 'रीतु' जो अपने पति के धोखे से आहत होकर अपने मायके आ जाती है और रमा के साथ कंधे से कंधा मिलाकर उसकी राह पर अग्रसर होती है। 'स्त्री पक्ष' की वृंदा पति से सम्बन्ध–विच्छेद के बाद अपनी शिक्षा के द्वारा अपने बच्चों का सही पालन–पोषण कर उन्हें सही दिशा की ओर बढ़ने को प्रेरित करती है। 'छिन्नमस्ता' की प्रिया अपने पति से पीड़ित नारी है जो शिक्षित व बुद्धिमान है। अपनी शिक्षा व बुद्धि के दम पर वह अपनों से विद्रोह कर अलग राह पर अग्रसर होकर व्यवसाय में नयी बुलंदियों को छूती है। वही दूसरी ओर 'पीली आँधी' की सोमा को अपनी राह चुनने व फैसले लेने का अधिकार प्राप्त नहीं था परन्तु वह शिक्षा ग्रहण कर उचित मार्ग अपनाने में सफल होती है।

अतः स्पष्ट है प्रभाजी के उपन्यासों 'अपने–अपने चेहरे' की रीतु, 'स्त्री पक्ष' की वृंदा, 'छिन्नमस्ता' की प्रिया व 'पीली आँधी' की सोमा आदि शिक्षित व प्रज्ञावान नारियाँ है जो आत्मविश्वासी, आत्मनिर्भर, साहसिकता के रूप में नारी की संपूर्णता की परिचायिका है।

6.1.4 व्यवसायी नारी –

आधुनिक युग में समाज की व्यवस्था व ढाँचे में परिवर्तन हो रहा है। समाज के स्वरूप में बदलाव के साथ–साथ नारी की स्थिति व स्थान में परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है। आज नारी शिक्षा प्राप्त कर अपने अधिकारों के प्रति सजग हो गई है तथा अपने कर्तव्यों व सीमाओं के दायरे में पुरुष के समक्ष समान अधिकारों की लड़ाई लड़ रही है। आज

वर्तमान समय में नारी नौकरी व व्यवसाय के क्षेत्र में अग्रसर हो नई ऊंचाईयों को छु रही है। इसी संदर्भ में प्रभा जी कहती है कि "स्त्री की मुक्ति उसके आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी होने में है।"[11]

आज के इस आधुनिक युग में पुरुष प्रधान समाज में नारी के प्रति विचारों में आज भी रूढ़िवादिता ही दिखाई देती है। समाज अपने आप में कितना ही आधुनिकता का चोला ओढ़ ले परन्तु अपना सही रंग व रूप प्रकट हो जाता है। इसी कारण इस वर्तमान युग में नारी अपने अधिकार हेतु संघर्षरत है। इसी भावनाओं व संवेदनाओं का प्रकटीकरण प्रभाजी के उपन्यासों में व्यवसायी नारी व उसकी व्यथा के रूप में हुआ है।

प्रभा जी नारी संबल व नारी सशक्तिकरण की अभिलाषी थी। इसी का चित्रण उन्होंने 'छिन्नमस्ता' में प्रिया के माध्यम से किया है। प्रिया अपने पैरों पर खड़ी हो आत्मनिर्भर बनना चाहती थी परन्तु उसका पति दकियानुसी विचारधारा वाला होनें के कारण दोनों के बीच तनाव व कलह बना रहता था। इसी कारण प्रिया अपने पति से अलग होकर अपने अधिकार व सम्मान की लड़ाई लड़ती है। इसी संदर्भ में मालती अदवानी लिखती है– "प्रिया ऊर्जावान बनकर, मनुष्य बनकर पारिवारिक दमन व शोषण के विरुद्ध स्वयं आवाज उठाती है। दूसरों को भी प्रेरित करती है।"[12] प्रिया इसी आत्मबल व संकल्प शक्ति के द्वारा उस मुकाम पर पहुँच जाती है जहाँ से उसे रोकना या उसके अस्तित्व को मिटाना असंभव हो जाता है। इसी कारण प्रिया के बारे में वैशाली देशपांडे लिखती है– "प्रिया का यह व्यवहार आधुनिक नारी के उस रूप को उद्घाटित करता है, जो पुरुष प्रधान समाज के अत्याचार के विरोध में खड़ी रहकर अपनी क्षमता को साबित करती है। शोषण के सामने चुनौती बनकर खड़े रहने की क्षमता आज की नारी में आ चुकी है और प्रिया उस नारी का प्रतिनिधित्व कर रही है।"[13]

प्रभाजी के उपन्यासों में व्यवसाय में कार्यरत नारियों के शोषण का चित्रण दिखाई देता है। 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में नरेन्द्र की स्टेनो टाइपिस्ट, 'स्त्री पक्ष' की डॉ. सुमित की सेक्रेटरी सुनीता, 'अग्निसंभवा' की आइवी आदि नारियों का अपने बोस के द्वारा दिये गये शोषण का चित्रण प्रभाजी के उपन्यासों में परिलक्षित होता है।

अतःस्पष्ट है कि प्रभा जी के उपन्यासों में आधुनिक युग में आधुनिकता की होड़ में अपने अस्तित्व के रक्षार्थ व्यवसायी नारियों का चरित्र उभार कर सामने रखा गया है वहीं दूसरी ओर कामकाजी नारी की पीड़ा, व्यस्तता, घुटन से भरी जिंदगी, दैनिक कार्यों के तानेबाने की पीड़ा, नौकरी में असुरक्षा की भावना, पारिवारिक स्तर पर आर्थिक सहायता

करने की उम्मीद व उच्च पदासीन व्यक्तियों द्वारा शोषण आदि के चित्रण को बड़ी संजीदगी के साथ उभारा है।

6.1.5 शोषित नारी –

पुरुष प्रधान समाज में अनादिकाल से नारी का शोषण होता आ रहा है। प्राचीन समय से ही नारी का स्वरूप उपेक्षित रहा है तथा पुरुषों के द्वारा हमेशा व हर प्रकार से नारी का शोषण किया गया है। समाज में स्त्री सदैव पुरुषों के लिए भोग या शोभा की वस्तु बनी रही है। डॉ. तिवारी लिखते है– "नारी कभी किसी को सीढ़ी दिखाती है, कभी स्वयं सीढ़ी बन जाती है फिर गंतव्य पाने के लिए सीढ़ी का महत्व मिट जाता है।"[14]

प्राचीन समय से ही नारी दो रूपों में शोषित होती आ रही है। एक नारी द्वारा नारी का शोषण व दूसरा पुरुषों द्वारा नारी का शोषण। इसके साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक, दैहिक हर स्तर पर नारी का शोषण हो रहा है। नारी का सम्पूर्ण जीवन ही समस्या का पर्याय बन चुका है जिसके कारण उसे सदैव अपमान व तिरस्कार का दंश झेलना पड़ता है। नारी परिवार व समाज दोनों स्तर पर शोषित होती है। जिसके कारण उसे बलात्कार की समस्या, विकट विधवा जीवन का दंश, तनाव व अकेलापन, अमातृत्व की पीड़ा, दहेज संबंधी समस्या आदि अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस कारण नारी सदैव समाज व परिवार तथा परम्परा व आधुनिकता के बीच जूझती रहती है।

आज वर्तमान युग में आधुनिकता के इस दौर में शिक्षा के कारण उसमें जागरूकता का संचार होनें से उसमें विद्रोह की भावना जाग गयी है और वह पुरुष के समक्ष अधिकारों के लिए खड़ी हो गयी है परन्तु आज भी वह पूर्ण रुप से अपने स्थान को प्राप्त नहीं कर पाई है। वर्तमान में नारी का शोषण किसी न किसी स्तर पर आज भी विध्यमान है।

प्रभाजी के उपन्यासों में नारी शोषण के कई रूप उभर कर आए है और शोषण के साथ–साथ इनके उपन्यासों में नारी संघर्ष का चित्रण परिलक्षित होता है।

6.1.5.1 सामाजिक शोषण –

सामाजिक स्तर पर परिवार में नारी माँ, बेटी, पत्नी, बहिन आदि कई भूमिकाएँ निभाती है। भारतीय संस्कृति के संदर्भ में नारी की महत्वपूर्ण भूमिका माँ व पत्नी के रूप में होती है और हमारी सांस्कृतिक मान्यताओं के अनुसार स्त्री सदैव पुरुष की अनुपथगामिनी होती है। उसका स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं होता है। वह मात्र वंश बढ़ाने वाली धात्री के रूप में देखी जाती है। भारतीय समाज की रूढ़िवादिता व पुरुषवादी व्यवस्था के कारण स्त्री को अपना सम्पूर्ण जीवन पुरुषों के अनुरूप निर्धारित मान्यताओं के अनुसार यापन करना पड़ता है। उसकी किसी भी प्रतिभा व सोच का कोई स्थान नहीं होता है। इस कारण नारी

को सदैव सामाजिक स्तर पर मानसिक व भावात्मक रूप से शोषित होना पड़ता है। ऐसे ही शोषण का संत्राश झेलती नारी का चित्रण प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में किया है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास की तिलोत्तमा अवैधानिक संबंध के साथ रिश्ते को निभाती है और अपनी बेटी को नाजायज औलाद का दर्जा देने के कारण समाज के साथ संघर्ष करती है। वही दूसरी ओर प्रिया अपने बचपन की अवस्था से ही माँ व परिवार के अन्य सदस्यों के द्वारा व शादी पश्चात अपने पति नरेन्द्र के द्वारा भावात्मक व मानसिक शोषण का शिकार होती हैं।

'आओ पे पे घर चले' की एलिजा अपने पति से बहुत प्रेम करती है। लेकिन डॉ. डी क्लारा ब्राउन के प्रेम पाश में बंधे होने के कारण अपनी पत्नी को बहुत मानसिक यातनाएँ देते है। जिसके कारण वह आत्महत्या का प्रयास करती है।

प्रभा जी के उपन्यास 'अपने–अपने चेहरे' की रीतु व मिसेज गोयनका 'पीली आँधी' की पद्मावती व सोमा, 'स्त्री पक्ष' की वृंदा आदि स्त्रियाँ एलिजा के समान अपने पति के प्यार से वंचित रही है। उनका सम्पूर्ण दाम्पत्य जीवन यातना व संघर्ष की दास्तान बनकर रह गया है। ऐसी ही भारतीय व विदेशी नारियों का चित्रण प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में किया है।

6.1.5.2 आर्थिक शोषण –

प्राचीन समय से ही पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अनुसार स्त्री सदैव पुरुष आश्रित रहती थी। पुरुष परिवार हेतु धन अर्जन करता था और स्त्रियाँ पारिवारिक दायित्वों को निभाती थी। नारी सदैव पुरुष पर आश्रित रहने के कारण आर्थिक शोषण का शिकार होती थी। इसी संदर्भ में डॉ. सुमन शर्मा का मंतव्य है– "मार्क्सवाद के अनुसार नारी शोषण का मुख्य कारण नारी की आर्थिक पराधीनता है। आर्थिक परतंत्रता के कारण ही समाज तथा परिवार में नारी को हीन दृष्टि से देखा जाता है नारी पराधीन भी इसीलिए है क्योंकि वह आर्थिक दृष्टि से दूसरों पर आश्रित रहती है और उसके व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता।"[15]

प्रभा जी के उपन्यासों में संयुक्त परिवार की परम्परा का पालन करने के कारण उनमें स्त्रियों का शोषण का वर्णन अधिक हुआ है। 'अपने–अपने चेहरे' की रमा को मिस्टर गोयनका से बहुत प्यार है। इसीलिए वह कहती है कि प्यार एक ही बार होता है, एक ही पुरुष से। वह इसी प्यार के प्रति समर्पित भावना के कारण गोयनका का सारा व्यापार संभालती है। जिससे मिस्टर गोयनका अपने परिवार की देखभाल करते है और इस तरह मिस्टर गोयनका रमा का आर्थिक शोषण करते है। 'छिन्नमस्ता' की प्रिया को भी अपने पिता

की मृत्यु के पश्चात कई आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। इसी कारण उसे अल्पायु में अपनी भाई की वासना का शिकार बनना पड़ा और विवाह के बाद अपने पति के द्वारा आर्थिक शोषण का शिकार होना पड़ा। उसी प्रकार 'अग्निसंभवा' की आइवी को अपने शराबी पति के द्वारा आर्थिक शोषण को झेलना पड़ा। आइवी पूरे दिन मेहनत कर पैसे कमाती है और उसका पति उसके साथ मारपीट कर सारा पैसा शराब में उड़ा देता था।

प्रभाजी ने अपने उपन्यास 'पीली आँधी' में दहेज के द्वारा बहुओं के आर्थिक शोषण को उजागर किया है। मि. अग्रवाल की तीन बेटियाँ है। परंतु उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण अपनी बेटी सोमा का विवाह आयु में अधिक बड़े गौतम के साथ करते है और शादी में दहेज भी काफी देते है।

'स्त्री पक्ष' की वृंदा का अपने पति द्वारा दूसरी औरत के लिए छोड़े जाने पर आर्थिक शोषण का शिकार होना पड़ता है। वृंदा को तलाक के पश्चात अपने भरण–पोषण हेतु मात्र पाँच हजार की रकम ही मिलती थी।

प्रभाजी ने अपने उपन्यास में धर्म व अंधविश्वास के नाम पर नारी के आर्थिक शोषण को उभारा है। समाज में धर्म के ठेकेदार बने साधु आस्था व विश्वास के नाम पर महिलाओं का फायदा उठा उनसे लुटपाट करते है। 'स्त्रीपक्ष' में ऐसी ही स्त्रियों का चित्रण किया गया है जिसमें बाबा अंधविश्वास के दम पर भस्म, ताबीज, व अंगूठियों के नाम पर हजारों रुपये लुटते है और तब भी काम नहीं होने पर महिलाओं द्वारा फटकारने पर कहते है कि "तुम्हारी जन्म कुंडली में विषयोग है, इसलिए तुम्हें पति का सुख नहीं मिल रहा।"[16]

प्रभाजी ने अपने उपन्यास में निम्नवर्गीय व मजदूर महिलाओं के आर्थिक शोषण का वर्णन भी किया है। 'आओ पे पे घर चले' की प्रभा आत्मनिर्भर बनने हेतु ब्युटी थैरेपी का कोर्स करने विदेश जाती है। जहाँ उसे मरील नाम की महिला मिलती है। वह उससे बेल बुटों का काम करवाकर उसे 200 डॉलर के दाम में बेचती है और उसे मात्र बीस डॉलर देती है और इस तरह वह उसका आर्थिक शोषण करती है। "अग्निसंभवा" की आइवी एक फैक्ट्री में कमीज सिलाई का काम करती है। जहाँ भ्रष्टाचार के कारण कई मजदूरों को कम मेहनताना व उनके शोषण को देखती है। इसीलिए वह कहती है– "मैंने माओ को देवता माना। उनकी लाल किताब मेरे लिए बाईबिल थी। माओ की सांस्कृतिक क्रांति में मैंने हिस्सा लिया था। रात को उन अफसरों के लिए स्पेशल खाना पकता। सेक्स के लिए मजदूर औरतों की सप्लाई की जाती है। मैं सोचती रहती क्या यही माओ का चीन है।"[17]

अतः स्पष्ट है कि प्रभा जी अर्थ की महत्ता को स्पष्ट करना चाहती है। अर्थ मानव जीवन में अहम भूमिका निभाता है। सभी रिश्ते तथा संबंध अर्थ की सत्ता पर बिछे होते है।

इसीलिए नारी की स्वतंत्रता, अधिकार व स्वाभिमान के लिए उसका आर्थिक रूप से मजबूत होना आवश्यक है।

6.1.5.3 शारीरिक शोषण –

सृष्टि के निर्माण व उसके सुचारु रूप से विकासवान व गतिमान होनें के लिए शारीरिक संबंधों को अनिवार्य माना गया है। जिसके लिए विवाह का होना अनिवार्य माना गया है क्योंकि भारतीय समाज में शादी के पश्चात ही स्त्री–पुरुष के मध्य शारीरिक संबंधों को उचित माना गया है तथा शादी के बाद वह बिना किसी संकोच के खुलकर एक दूसरे के साथ संभोग कर सकते है। परन्तु इस के लिए पति–पत्नी दोनों के मध्य प्रेम, अपनत्व की भावना व विश्वास होना चाहिए और जब दाम्पत्य जीवन में पति द्वारा किसी अमानवीय आचरण को अपनाया जाता है तो नारी शारीरिक शोषण का शिकार बनती है। प्रभा जी के उपन्यासों में ऐसे ही रिश्तों के नाम पर नारी के शारीरिक शोषण को उजागर किया गया है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास की प्रिया का मात्र नौ साल की उम्र में ही अपने भाई द्वारा शारीरिक शोषण किया जाता है और यह कई वर्षों तक निरन्तर उसके साथ होता रहता है। जिसने पवित्र भाई बहिन के रिश्ते को कलंकित किया है और मानवता को शर्मसार किया है। थोड़ी बड़ी होनें पर उसी प्रिया का अपने प्रोफेसर द्वारा दैहिक शोषण किया जाता है। प्रिया के सर उसे धोखे में रखकर कई दिनों तक उसके साथ संभोग करते रहते है और इस तरह उन्होंने गुरु के रिश्ते को कलंकित किया है। तत्पश्चात जब उसकी शादी नरेन्द्र के साथ होती है तो उसका पति भी उसे उसकी वासना की भूख मिटाने का मात्र साधन ही समझता हैं। उसे कभी पत्नी का सम्मान नहीं देता है। प्रिया के साथ अपने वहेशीपन के कारण उसने पति–पत्नी के संबंधों को भी तार–तार कर दिया है। प्रिया अपने पति के इसी कामवासना की भूख के बारे में कहती है कि– "नरेन्द्र के वहशी भूख से मैं सच में घबरा गई। केवल रात के प्रथम प्रहर में ही नहीं बल्कि रात में दिन में शाम को वक्त–बेवक्त कभी भी। पार्टी के लिए तैयार होकर हम निकालने वाले होते कि वह वापस कमरे में घसीट लेता।"[18] प्रभाजी ने भाई, प्रोफेसर व पति के द्वारा प्रिया के शारीरिक शोषण का वर्णन करते हुए स्पष्ट किया है कि नारी समाज में अपने परिवार में भी सुरक्षित नहीं है। बल्कि अपने पारिवारिक व घनिष्ठ आत्मीय रिश्तों से ही छली जाती है। हमारा समाज कितना ही आधुनिक बन जाए परन्तु आज भी नारी पुरुषों के लिए मात्र भोग की वस्तु ही है।

'अग्निसंभवा' उपन्यास में आइवी के माध्यम से रेड लाइट एरिया के रहने वाली कॉल गर्ल्स के शारीरिक शोषण को प्रकट किया है। आइवी बताती है कि "रातभर टैकसी

चलाने के साथ खाना पीना, ऊपर से दो सो डॉलर मिलते है लेकिन उन कॉल गर्ल्स को मात्र पचास डॉलर ही मिलते है।"[19] अतः इससे स्पष्ट है कि आज भी समाज की विचारधारा में नारी के प्रति कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। आज भी नारी पुरुष के लिए कमवासना को तृप्त करने का साधन मात्र है।

6.1.6 विदेशी नारी –

भारतीय नारी हो या विदेशी नारी दोनों की आवश्यकताएँ व भावनाएँ समान ही है। विदेश में रहने वाली नारी की स्थिति भी भारतीय नारियों के समतुल्य ही है। वह भी घुटन, यातनाओं, अकेलेपन व अविश्वास की पीड़ा से गुजरती रहती है। प्रभा जी ने अपने उपन्यास 'आओ पे पे घर चले', 'अग्निसंभवा', और 'एड्स' में विदेशी नारी की व्यथा को उजागर किया है। इन उपन्यासों में प्रभाजी ने विदेशी नारियों के कई रूप जैसे विद्रोही नारी, धार्मिक नारी, ममतामयी नारी, स्वतंत्रता की कामना रखने वाली नारी, महत्वाकांक्षी नारी, कार्यक्षेत्र में तल्लीन नारी, पीड़ित नारी आदि अनेक रूपों का वर्णन अपने उपन्यास में किया हैं।

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में विद्रोही नारी के स्वर को मुखरित किया है। 'अग्निसंभवा' की आइवी, 'आओ पे पे घर चले' की हेल्गा अपने पति के प्रति विद्रोह करती नजर आती है। 'आओ पे पे घर चले', की एडिना अपने माता–पिता से विद्रोह करते हुए कहती है कि– "जो माँ–बाप मेरी भावनाओं की कद्र नहीं कर सकते, जिनकी निगाहों में मेरे लिए सम्मान नहीं है उनसे न मुझे संबंध रखना है और नहीं उनके पास जाना है।"[20] प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में मरील, डॉ डी, क्लारा ब्राउन व आइलिन के माध्यम से अनेक पुरुषों से संबंध रखने वाली, भोग विलासी व सम्पन्न नारियों का वर्णन किया है तथा स्पष्ट किया है कि इनके पास सब कुछ होते हुए भी यह अकेलेपन व घुटन भरी जिन्दगी जीने को विवश है।

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में अभाव में जीवन को हंसकर जीने वाली महिला का वर्णन किया है। मिसेज डी जो हर साल पति की कमाई का दसवाँ हिस्सा चर्च में देती है उसके माध्यम से भलाई को जीवन में साकार रूप देने वाली नारियों का चित्रण भी किया है।

अर्थ व व्यवसाय को जीवन में अधिक महत्व देने वाली विदेशी नारियों का चित्रण भी प्रभा जी के उपन्यासों में मिलता है। 'अग्निसंभवा' की आइवी दिन रात काम करने में खाना पीना भी भूल जाती है और पैसा कमाती है। 'आओ पे पे घर चले' की प्रभा ब्यूटी थैरेपी का कोर्स करने विदेश जाती है और विदेशी संस्कृति की होड़ में दिन–रात काम करती है और अपनी आर्थिक स्वतंत्रता को पाना चाहती है।

प्रभाजी ने अपने उपन्यास 'आओ पे पे घर चले' की आइलिन व आइवी के माध्यम से मातृत्व चाहने वाली व धार्मिक नारी के रूपों का वर्णन भी किया है।

अतः स्पष्ट है कि प्रभा जी ने अपने उपन्यास के माध्यम से विदेशी संस्कृति व विदेशी नारी के अनेक रूपों का वर्णन किया है। उन्होंने विदेशी नारी की जीवन शैली, उनके रहन–सहन, खानपान, समाज में उनके स्तर व मानसिकता को अपने उपन्यास के द्वारा चित्रित किया है। प्रभाजी ने विदेशी नारी के आर्थिक रूप से सबलता को भी उजागर किया है।

प्रभा जी ने विदेशी नारी के जीवन की भयावहता को भी प्रकट किया है। उनके जीवन में पैसे की भूख, अकेलेपन से त्रस्त, मानसिक व शारीरिक शोषण, संबंधों का खोखलापन आदि को हमारे सामने प्रस्तुत किया है तथा उनके जीवन के संघर्ष को भी उजागर किया है। विदेशी नारियों के जीवन की पीड़ा को समझने के कारण प्रभा जी कहती है– "औरत कहाँ नही रोती? सड़क पर झाड़ू लगाते हुए, खेतों में काम करते हुए, एयरपोर्ट पर बाथरूम साफ करते हुए या फिर सारे भोग ऐश्वर्य के बावजूद.... हजारों सालों से इनके आँसू बहते आ रहे है।"[21] अतः स्पष्ट है कि प्रभा ने अपने उपन्यासों के द्वारा विदेशी नारी के प्रत्येक रूपों का वर्णन बड़ी कुशलता के साथ किया है।

6.1.7 विद्रोही नारी –

आदिकाल से नारी यातनाओं व शोषण का शिकार होती आई है। वह त्याग, समर्पण, दासी, ममता आदि का पर्याय बनकर रह गयी थी। परन्तु आज आधुनिक समय में नारी का स्वरूप ऐसा नहीं रह गया है। वह शिक्षा प्राप्त कर अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गई है। उसमें स्वाभिमान व सम्मान की भावना जाग्रत हो गई है। वह अपने अस्मिता व अस्तित्व को लेकर सजग हो गई है। इसी कारण नारी आज खोखली व प्राचीन परम्पराओं का विरोध करती नजर आती है। इस पुरुष प्रधान समाज में पुरुष यातनाओं से पीड़ित अबला नारी के स्थान पर अत्याचार के विरुद्ध खड़ी सजग व सबला नारी का रूप दिखाई देता है। प्रभाजी के उपन्यासों में भी परम्पराओं का विरोध करने वाली, पुरुषसत्ता के प्रति विद्रोह करने वाली, आर्थिक रूप से स्वतंत्रता की अभिलाषी नारियों का वर्णन मिलता है।

'छिन्नमस्ता' की प्रिया, 'पीली आँधी' की सोमा, 'अपने–अपने चेहरे' की रीतु व 'अग्निसंभवा' की आइवी सभी के द्वारा पत्नियों के विद्रोही रूप का वर्णन मिलता है। 'छिन्नमस्ता' की प्रिया अपने पति नरेन्द्र के साथ रिश्ते को बचाने के लिए कई वर्षों तक प्रयास करती है। परन्तु प्रिया का व्यवसाय के प्रति गहरे आकर्षण से वह परेशान हो जाता

है। इस कारण दोनों के रिश्ते में तनाव उत्पन्न हो जाता है। जिसके कारण प्रिया अपने पति व बेटे दोनों को छोडकर चली जाती है। तथा व्यवसाय में बहुत ऊंची उड़ान भरती है।

'पीली आँधी' की सोमा मातृत्व की आस रखने के कारण अपने पति गौतम को छोड़कर प्रो. सुजीत सेन के पास चली जाती है। सोमा परिवार के मूल्यों व गौतम के प्रति विद्रोह की भावना प्रकट करती है और विद्रोह के भाव संजोये सोमा कहती है– "गौतम? तुम्हारी नजर में मैं छिणाल हूँ। ठीक है, मुझे फेंक दो गटर में। इससे अधिक तुम क्या कर सकते हो।"[22] 'अपने–अपने चेहरे' की रीतु का पति कुणाल के किसी अन्य औरत के साथ संबंध होने के कारण वह उसे छोड़कर पीहर आ जाती है और रमा के साथ व्यापार में कार्यरत होती हैं। 'स्त्री पक्ष' की वृंदा का पति डॉ. सुमित दूसरी औरत के साथ संबंध स्थापित कर उसके साथ अत्याचार करता है और वह उससे छुटकारा पाने के लिए तलाक माँगता है। तब वृंदा अपने व बच्चों की परवरिश के लिए उससे अपना हक व हिस्सा मांगती है। तब डॉ. सुमित द्वारा इस बात का विरोध व सवाल करने पर वृंदा कहती है– "मैं इनका कुछ भी करू, चाहे गंगा में बहा दूँ। तुम्हारे घर की हर ईट पर मेरा आधा हिस्सा होना चाहिए।"[23]

'आओ पे पे घर चले' की मरील को उसका पति छोड़कर चला जाता है। तब वह विद्रोह के रूप में अपने पति के संबंध में कहती है– "भाग गया साला किसी बीस बरस की लड़की को लेकर। कोर्ट का दरवाजा खटखटाने पर आजकल हजार डॉलर महीने का भेजता है बास्टर्ड।"[24]

अतः स्पष्ट है कि प्राचीन समय से ही नारी का शोषण होता आ रहा है। नारी की स्थिति काफी दयनीय थी। परन्तु आज वह अपने अस्मिता, स्वतंत्रता व सम्मान के लिए विद्रोह प्रकट कर अपने अस्तित्व को साकार करने में सफल हो रही है।

6.2 प्रेम और सेक्स का स्वरूप –

6.2.1 सेक्सः–

सेक्स तथा प्रेम दोनों एक ही सिक्के के दो पहलु है। दोनों के स्वरूप में भिन्नता है परंतु भिन्न होनें पर भी दोनों में भिन्नता परलक्षित नहीं होती। सेक्स एवं प्रेम दोनों एक–दूसरे से अंतर्सम्बन्धित है। प्रेम को सेक्स की आकांक्षा के रूप में ही स्वीकारा गया है। प्रभा जी उपन्यासों में प्रेम व सेक्स के खोखलेपन व भूख के रूप में दर्शाया गया है। इनके उपन्यासों में पात्रों के जीवन के अधूरेपन व खोखलेपन की संतुष्टि हेतु इनको आधार प्रदान किया है। इन्होंने अपने उपन्यासों में प्रेम व सेक्स के उदात्त व भावात्मक पक्ष का निरूपण न करते हुए इनकी निकृष्टता व हवस को अपनी अधारभूमि बनाया है।

इनके "आओ पेपे घर चले" उपन्यास में मरील अपने जीवन के अकेलेपन को दूर करने व सेक्स की भूख को शांत करने के लिए दो पति व पाँच प्रेमी रखती है। मरील का पति भी अपनी शारीरिक भूख को शांत करने के लिए दूसरी लड़की के साथ मरील को छोड़कर भाग जाता है। "छिन्नमस्ता" की प्रिया अपने उपेक्षित बचपन में अपनों के द्वारा भोगी गई शारीरिक पीड़ा के कारण उसे प्रेम तथा सेक्स के नाम से ही घृणा हो जाती है। वह कहती है– " मैं बारह साल की थी। ठसाठस भीड़। कंधो से कंधो की टकराहट। मुझसे चला नहीं जा रहा था। मैं पैर घसीट रही थी।..... मेरे साथ मेरे पीछे–पीछे पेन्ट के बटन खोले वह आदमी। पुरुष का रुग्ण प्रदर्शन .... मैं किसी से प्रेम नहीं करूँगी। कभी शादी नहीं करूँगी। सेक्स से घृणा है मुझे, बेहद घृणा।"[25] प्रिया के बचपन की इस बुरी घटना के बाद जब उसका विवाह होता है तो उसे विवाह में दाम्पत्य संबंध में प्रेम के नाम पर पति का वहशीपन ही प्राप्त होता है। अपने पति की शारीरिक भूख को शांत कर–करके आहत प्रिया कहती है– "मुझे प्रेम, सेक्स, विवाह ये सारे सदियों पुराने घिसे हुए शब्द लगे थे। नहीं, शब्द नहीं माँस के ताजा टुकड़े लहू टपकाते हुए। इन शब्दों के पीछे की दीवानगी और आदिकाल से चली आ रही परम्पराओं का चेहरा सिर्फ औरत के आसुओं से तरबतर है।"[26] 'एड्स' उपन्यास की सोफिया भी अपनी पति से प्रेम की अतृप्तता के कारण पति की दोस्त के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करती है। स्त्रीपक्ष का सुमित अपनी पत्नी वृंदा के साथ कुछ सालों तक प्रेम से वैवाहिक जीवन जीता है परन्तु कुछ वर्षों बाद वह अपनी पत्नी से ऊब जाता है। उसे उसकी औरत ठंडी औरत लगने लगती है और वह दूसरी औरतों के साथ संबंध स्थापित कर अपनी सेक्स की भूख को शांत करता है और अपनी पत्नी को सेक्स में अतृप्ति के लिए कहता है कि "एक रात में दोबारा सेक्स करने पर मेरी सारी शक्ति खत्म हो जायगी।"[27]

'तालाबंदी' का श्यामबाबू भी अपनी पत्नी की सेक्स की प्यास को पूरा नहीं कर पाता है। उसकी पत्नी सुमित्रा धीरे से आकार पति के बगल में लेट गई। गले में बाहों कों लपेटते हुए पूछा "क्या सोच रहो हो? कभी तो रिलैक्स किया कीजिए।"[28] पत्नी के ऐसे शारीरिक हाव–भाव को श्यामबाबू समझकर सुमित्रा को अपनी ओर खींचते है तब सुमित्रा ने कहा "हम लोगों को प्यार किए हुए कितने दिन हो गये पता है?"[29] 'पीली आँधी' की सोमा भी अपने पति के नपुसंक व प्यार नहीं मिलने के कारण सुजित के साथ शारीरिक संबंध बनाती है। 'अपने–अपने चेहरे' का मिस्टर गोयनका अपनी पत्नी से संतुष्ट नहीं होने के कारण रमा नाम की महिला के साथ शारीरिक संबंध स्थापति करता है।

अतः प्रभाजी के उपन्यासों में सेक्स संबंधी दृष्टिकोण वैवाहिक जीवन के खोखलेपन, अकेलेपन, शारीरिक संतुष्टि के रूप में परिलक्षित होता है।

6.2.2 प्रेम –

प्रेम व्यक्ति के भीतर समाहित एक अंतरंग शक्ति का नाम है। प्रेम मानव के मन की कोमल भावात्मक अनुभूति है। एरिक फ्राम के शब्दों में:– "प्रेम व्यक्ति के भीतर एक सक्रिय शक्ति का नाम है। यह वह शक्ति है जो व्यक्ति और दुनिया के बीच दीवारों को तोड़ डालती है। उसे दूसरों से जोड़ देती है। प्रेम उसके अकेलेपन और विलगाव की भावना को दूर कर देता है, पर इसके बावजूद उसकी वैयक्तिकता बची रहती है। प्रेम एक ऐसी क्रिया है जिसमें दो व्यक्ति एक होकर भी दो बने रहते है।"[30]

प्रेम एक एहसास व अनुभूति है जो व्यक्ति को अपनत्व के भाव से दूसरे के साथ जोड़ती है। जिसमें स्वतंत्र अस्तित्व के साथ एकत्व समाहित होता है। डॉ. वसंत मुगदल लिखते है– "वस्तुतः प्रेम एक रागात्मक अनुभूति है। अपने से अन्य के प्रति अनुभूत होनें वाली लगन, अनुराग, अनुरक्ति, स्नेह, प्रीति, सौहार्द, प्रियता की भावना को प्रेम शब्द के अन्तर्गत समाहित किया जाता है।"[31] स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि प्रेम अलौकिक होता है तथा इसके अनेक रूप व रंग होते है। प्रेम किसी एक रूप को साकार नहीं करता है। प्रेम अगर दिल की गहराई से अनुस्यूत होता है तो वह व्यक्ति की आत्मा का अभिन्न हिस्सा बन जाता है और उस व्यक्ति को सर्वोत्कृष्ट पद पर आसन्न कर सकता है। इसी संदर्भ में डॉ. ओमप्रकाश अवस्थी लिखते है– "साहित्य में प्रेम शब्द बहुधंधी है। स्त्री–पुरुष, भाई–बहन, माँ–बेटी आदि के मानवीय संबंध तक तो इसका विस्तार है ही और ऊंचाई बढ़ने पर देश प्रेमी, प्रकृति प्रेमी, भगवत प्रेमी तक हो जाते है तथा प्रेमी जीव कहे जाने के अधिकारी होते है।"[32]

डॉ. प्रभा जी प्रेम को एक मधुर व सहज भाव मानती है। वह प्रेम से करुणा को अधिक ऊंचा स्थान प्रदान करती है। "प्रेम केवल देह के स्तर पर नहीं होता। प्रेम के दौरान व्यक्ति अपनी सीमाओं को लाँघ जाता है और इस प्रक्रिया में स्त्री जो कुछ भी छोड़ती है उसे त्याग कहा जाता है।"[33] इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि प्रेम का अर्थ तो एक ही है परन्तु स्त्री व पुरुष के लिए प्रेम का अर्थ भिन्न भिन्न होता है। सीमोन द बोउवार ने सही लिखा है– "स्त्री और पुरुष के लिए प्रेम शब्द का अर्थ अलग अलग होता है। प्रेम से स्त्री क्या समझती है? स्पष्ट ही यह केवल अनुराग न होकर, शरीर और आत्मा का ऐसा वरदान है जो न तो बंधन मानता है, न किसी की परवाह करता है। चूंकि स्त्री का प्यार शर्तहीन होता है इसलिए उसके लिए यह एक विश्वास है। स्त्री केवल एक को ही अपनाती हैं। पुरुष यदि

किसी से प्यार करता है तो प्रतिदान में वह उससे भी प्रेम पाना चाहता है।"[34] अर्थात स्पष्ट है कि स्त्री व पुरुष के लिए प्रेम के मापदंड अलग अलग है। जहाँ स्त्री प्रेम में निस्वार्थ भाव से अपने आप को समर्पित कर देती है वहीं पुरुष सिर्फ पाना चाहता है और इसी प्रवृति के कारण वह आक्रामक रूप धरण कर स्त्री पर मालिकाना हक समझने लगता है। इस कारण स्त्री अपने प्रति तुच्छ व हीन भाव रख अपने को असहाय समझती है। शायद इसीलिए कहा गया है कि– "मनुष्यता के प्रति अपना दावा न त्यागने वाली स्त्री भी उच्च अस्तित्व के साथ मिल जाना चाहती है उसके पास अपनी आत्मा और देह पुरुष को सौंप देने के अलावा और कोई विकल्प नहीं रहता पुरुष मुख्य होता है। वह सर्वोतम का प्रतिनधित्व करता है। चूँकि स्त्री के भाग्य में आश्रित होकर रहना लिखा है इसलिए वह किसी अत्याचारी, माता–पिता और संरक्षक की आज्ञा शिरोधार्य करने की अपेक्षा एक देव की सेवा करना अधिक पसंद करती है। वह दासत्व स्वीकार करने के लिए इस प्रकार बैचेन हो जाती है मानों वह उसकी स्वतंत्रता को व्यक्त करता है। वह अपनी गौंण अवस्था को स्वीकार करने के बावजूद उससे ऊपर उठने की चेष्टा करती है। अपने शरीर, भावनाओं और व्यवहार द्वारा वह अपने प्रेमी को महान हस्ती के रूप में सिंहासनासीन करती है। उसके सम्मुख वह अपना अस्तित्व मिटा देती है प्रेम उसके लिए धर्म का रूप ले लेता है।"[35] अतः कह सकते है कि आज भी नारी के लिए प्रेम के प्रति समर्पण व आस्था भाव सर्वोपरि है। आज भी नारी इन्हीं मूल्यों की वाहक है।

वर्तमान युग में बदलते परिवेश व सामाजिक यथार्थ ने प्रेम के स्वरूप को ही परिवर्तित कर दिया है। डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय लिखते है– "आज प्रेम में एकनिष्ठता, भावुकता, रूमानियत व आदर्श के स्थान पर स्वार्थ, वासना, उद्देश्य तथा अपने–अपने व्यक्तियों के परस्पर उन्मीलन की सफलता या असफलता लक्षित होती है।"[36] अतः स्पष्ट है कि वर्तमान में प्रेम के प्रति मूल्यहीनता स्थापित होती जा रही है और प्रेम मात्र वैयक्तिक अनुभव व भावात्मक अनुभूति की वस्तु बनकर रह गया है। क्योंकि आज प्रेम में भावना का स्थान बुद्धि ने ले लिया है। समयानुसार बुद्धि के समावेशन के साथ प्रेम का स्वरूप भी परिवर्तित होता जाएगा। इसी हेतु 'कबीर' जी ने कहाँ है–

"कबीरा इह घर प्रेम का खाला का घर नाही।
सीस उतारे भुई धरे तब घर पैठे माँही।"[37]

अर्थात प्रेम व बुद्धि के एकाकार होने से प्रेम के स्वरूप में परिवर्तन के कारण तेजी से संबंध बन व टूट रहे है।

डॉ. प्रभाजी ने अपने उपन्यासों में नारी प्रेम के विभिन्न रूपों का चित्रण करते हुए प्रेम से उत्पन्न अनेक समस्याओं को उजागर किया है।

6.2.2.1 निश्छल प्रेम –

डॉ. प्रभा प्रेम को मधुर, भावात्मक व सहज भाव मानती है। उन्होंने प्रेम को स्त्री व पुरुष का आपस में आकर्षित होना माना है। उनके अनुसार प्रेम की कोई एक परिभाषा नहीं है ना हीं इसमें उम्र की कोई सीमा होती है। प्रेम तो आकर्षण के फलस्वरूप किसी से भी कही भी हो जाता है और इसी प्रेम के वशीभूत स्त्री सदैव समर्पित होना चाहती है। स्त्री सदैव अपने जीवन के सुख–दुख में एकाकार होने के लिए पुरुष का आश्रय चाहती है। प्रेम के समर्पण की यही भावना प्रभा जी के उपन्यास 'अपने–अपने चेहरे', 'छिन्नमस्ता' में दिखाई देता है। 'अपने–अपने चेहरे' की रमा मिस्टर गोयनका से बेहद प्यार करती है। इसी समर्पित प्यार के कारण वह मिस्टर गोयनका का सारा व्यापार संभालती हुई उसके परिवार का पोषण करती है और बदले में मिस्टर गोयनका से कुछ नहीं चाहती है। वही चित्रा अपने पति से बेहद प्यार करती है लेकिन अपने पति का किसी दूसरी स्त्री के साथ प्रेम संबंध होने के कारण अपनी बच्ची को साथ लेकर पति का घर छोड़ देती है। वह मानती है कि जब दोनों के बीच प्यार ही नहीं है तो जबरदस्ती क्यों करना और यह सोच कर वह सोमा व सुजीत के बीच में से हट जाती है।

'छिन्नमस्ता' की तिलोत्तमा भी मिस्टर अग्रवाल से अथाह प्रेम के कारण विवाहित पुरुष होनें के बाद भी विवाह कर लेती है। इसी प्रेम स्वरूप एक संतान को जन्म देती है और अनेक सामाजिक विरोधों के बावजूद अपने रिश्ते व संबंध की गरिमा को बनाये रखती है। इस तरह प्रभाजी ने अपने उपन्यासों में निरछल व आदर्श प्रेम का परिचय कराया है।

6.2.2.2 अवैध व असफल प्रेम –

प्रेम मनुष्य के हृदय में उत्पन्न एक सुंदर एहसास है। प्रेम एक कोमल भाव है जो युवा अवस्था से प्रस्फुटित होता है और सदैव विध्यमान रहता है परंतु वर्तमान में पाश्चात्य संस्कृति के अनुकरण ने प्रेम से संबंधित दृष्टिकोण को ही बदल दिया है। इसी संदर्भ में रतनकुमारी वर्मा लिखती है– "आलोच्य युगीन भारतीय समाज में पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति का जनमानस पर व्यापक प्रभाव पड़ा जिसके फलस्वरूप परम्परागत मूल्यों का विघटन तथा नवीन मानदंडो की स्थापना हुई।"[38] प्रेम के इसी बदलते स्वरूप के कारण प्रेम से उत्पन्न अनेक समस्याओं जैसे असफल प्रेम, अवैध प्रेम को उजागर किया है।

'अपने–अपने चेहरे' के मिस्टर गोयनका विवाहित होने के बाद भी रमा नाम की लड़की से प्रेम करते है और आजीवन उनका संबंध बना रहता है। वही रीतु का पति

कुणाल विवाहित स्त्री से प्रेम संबंध स्थापित करता है। 'पीली आँधी', उपन्यास की सोमा विवाहित होने पर भी पर पुरुष सुजीत सेन से प्रेम करती है। 'पीली आँधी' का सांवर शादी पश्चात भी 'रोजी' नाम की लकड़ी से प्रेम करता है। 'छिन्नमस्ता' का नरेन्द्र एक निकृष्ठ व वहशी मनुष्य है जो नित नई औरत के साथ संबंध रखता है। वहीं प्रिया कॉलेज के प्रो. मुखर्जी से प्रेम करती हैं तथा अपना सर्वस्व समर्पित कर उनके साथ संबंध स्थापित हैं परंतु छः महीनों के संबंध के पश्चात भी प्रो० मुखर्जी दूसरी लड़की से विवाह कर लेते है। प्रिया प्यार में अपना सर्वस्व खोने के बाद कहती है कि– "मैंने प्यार किया था पूरी ईमानदारी के साथ अपने को समर्पित किया था बिना किसी शर्त के बिना किसी से कुछ पूछे। बाद में समझ में आया कि यह बिना पूछे शर्तहीन संबंध आपकी मानवीयता का द्योतक भले ही हो पर आपके व्यावहारिक दिवालीएपन का परिचायक भी होता है।"[39] 'स्त्री पक्ष' की वृंदा से अनिश प्रेम करता है। वह शादी से पहले वृंदा के साथ शारीरिक संबंध रखना चाहता है। परंतु वृंदा ऐसा नहीं चाहती है। वही वृंदा की दोस्त अनिश से प्रेम में किसी भी हद को पार करने को तत्पर है। वह कहती है– "यदि मन मिल जाए तो शरीर को क्यों सँजोना? कुँवारपन कोई सम्पत्ति तो नहीं है कि उसे संभालकर तोलकर सात तालों में बंद रखा जाए।"[40]

प्रभा जी के उपन्यासों में प्रेम समर्पण के भाव से शुरू होकर निराशा व वासना के रूप में उजागर होता है। इसी हेतु प्रभा जी ने संबंधों के आधार के रूप में प्रेम के स्थान पर करुणा को आवश्यक माना है। प्रभा जी के अनुसार– "प्रेम एक महत्वपूर्ण भावना है पर उससे भी ऊँची भावना करुणा है। आपसी प्रेम के दौरान कारुण्य की भावना को प्रोत्साहित करना होगा क्योंकि प्रेम केवल देह के स्तर पर नहीं होता प्रेम के दौरान व्यक्ति अपनी सीमाओं को लाँघ जाता है और इस प्रक्रिया के दौरान स्त्री जो कुछ भी छोड़ती है, उसे त्याग कहा जाता है। मगर विडंबना तो यह है कि किसी भी व्यक्ति के मन में यदि अपने अधिकारों के प्रति अत्याधिक सजगता होगी तो व्यवहार में संतुलन और रूखापन आना स्वाभाविक है। अतः स्त्री पुरुष के संबंध का आधार केवल प्रेम नहीं बल्कि करुणा भी है।"[41]

6.2.2.3 प्रेम के विविध रूप –

प्रेम एक भावात्मक जुड़ाव है जो किसी भी रिश्ते के साथ बंध सकता है। प्रेम की व्याख्या स्त्री व पुरुष के बीच संबंधो में ही निहित नहीं है। प्रेम के कई रूप व रिश्ते होते है। ऐसे ही कुछ प्रेम की डोर से बंधे रिश्तों का वर्णन प्रभाजी ने अपने उपन्यासों में किया है। प्रभाजी ने भाई–बहन, माँ–बेटी व माँ–बेटा, पिता–पुत्री, सास–बहू, ननद–भाभी,

देवरानी–जेठानी, आदि रिश्तों के द्वारा प्रेम के कई रूपों का चित्रण अपने उपन्यासों के द्वारा किया है।

'छिन्नमस्ता' की प्रिया अपनी सौतेली सास तिलोत्तमा के साथ आत्मीय संबंध रखती थी। उसमें प्रिया को अपनी माँ की छवि परिलक्षित होती थी। इसी कारण नरेन्द्र व अपना घर छोड़ने के पश्चात वह तिलोत्तमा के पास जाकर रहती है। इस तरह प्रभाजी ने सास बहू के बीच प्रेम को दर्शाया है।

'तालाबंदी' में पुष्पा व सुमित्रा के माध्यम से ननद व भाभी के बीच प्रेम संबंध को बड़ी बखूबी दर्शाया है। पुष्पा अपनी भाभी से बहुत ज्यादा स्नेह रखती थी और सुमित्रा भी अपनी ननद के मायके आने पर बहुत आवभगत करती थी और लाड़ लड़ाती है।

'पीली आँधी' की पद्‌मावती संतान सुख से वंचित थी परंतु अपनी देवरानी के यहाँ संतान के जन्म लेने पर वह उससे ईर्ष्या नहीं रखती है बल्कि बहुत ही प्यार से वह नन्हें से बच्चे के लिए कपड़े सिलती है व पालना तैयार करती है। इस तरह इस उपन्यास के द्वारा देवरानी व जेठानी के आदर्श व प्रेम पूरित रिश्ते को उजागर किया है।

इस तरह स्पष्ट रूप से कह सकते है कि प्रभा जी नें अपने उपन्यासों के द्वारा प्रेम के कई स्वरूपों का चित्रण बहुत ही बखुबी से किया है।

6.3 सामाजिक आयाम की तलाश –

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसका संबंध समाज से होता है और समाज मनुष्य के क्रियाकलापों व विचारों के माध्यम से अनवरत गतिमान रहता है। समाज व्यक्ति, परिवार व संबंधों के तानेबाने से संचालित होता है। समाज के भीतर व्यक्ति के व्यवहारों से परिवार नाम की संस्था के बदलते स्वरूपों व संबंधों की घनिष्ठता का आकलन किया जाता है। चूंकि साहित्यकार भी इसी समाज का हिस्सा होता है इसलिए उसका इन संस्थाओं व संबंधों से अछूता रहना नामुमकिन है। साहित्यकार की रचनाओं पर भी परिवेशगत घटनाओं का प्रभाव होना अवश्यंभावी है। इसी संदर्भ हेतु प्रेमचंद जी ने कहा है कि 'साहित्य समाज का दर्पण है।' अतः स्पष्ट रूप से सामाजिक घटनाओं व विविध आयामों की वास्तविकता की झलक साहित्य में प्रतिबिम्बित होती है। प्रभा जी के उपन्यास में भी परिवार नामक संस्था व उसका विघटित रूप संबंधों की परिकल्पना, ग्रामीण व नगरीय परिवेश की झलक जैसे अनेक आयाम उनके उपन्यास में चित्रित हुए है। जो निम्नानुसार है –

6.3.1 परिवार संस्था –

परिवार समाज की एक बुनियादी इकाई है। परिवारों के अनेक समूहों के द्वारा समाज बनता है। समाज की श्रेष्ठता व निकृष्टता परिवार के माध्यम से व्यक्त होती है।

मनुष्य तथा उसके चरित्र का निर्माण व विकास परिवार के द्वारा ही होता है। जन्म से मृत्यु तक व्यक्ति किसी परिवार का अभिन्न अंग होता है। इस कारण व्यक्ति और समाज दोनों की दृष्टि से परिवार एक महत्वपूर्ण संस्था होती है।

परिवार वह संस्था है जिसमे विवाह व रक्त के बन्धन से जुड़े माता–पिता व उनकी संतानों के मध्य संबंधों की एक व्यवस्था होती है। परिवार के अंतर्गत अनेक संबंधों की एक कड़ी बनी होती है। परिवार के द्वारा संस्कृति, संस्कार, सांस्कृतिक शिक्षा, प्रेम व स्नेह से संबंधों में जुड़ाव आदि की शिक्षा प्राप्त होती है।

परिवार अनेक संबंधों से निर्मित होता है। जिसमें प्रत्येक रिश्ता अपनी गरिमा व अस्तित्व को बनाये रखने का प्रयास करता है। परिवार संस्था का कोई एक रूप नहीं होता है। वह भी श्रेणियों में विभक्त होता है। सामान्यतः परिवार दो रूपों में विभक्त होता है– संयुक्त परिवार और एकाकी परिवार।

प्रभा जी के उपन्यासों में अधिकांशतः संयुक्त परिवार के ही दर्शन होते है। जिसमें माता–पिता, भाई–बहिन, पति–पत्नी, ननद–भाभी, सास–बहू, देवरानी–जेठानी आदि संबंधों का चित्रण किया गया है। संयुक्त परिवार रूपी संस्था एक मुखिया द्वारा नियंत्रित व उस पर निर्भर होती है। परिवार के सभी सदस्यों को उसके विचारों का सम्मान करना होता है।

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में संयुक्त परिवार के टूटने व उसके खोखलेपन को दर्शाया है। 'अपने–अपने चेहरे' में गोयनका परिवार कहने के लिए संयुक्त परिवार है किसी को किसी से प्रेम या लगाव नहीं है। सभी अपने स्वार्थ हेतु साथ में रहते है परंतु सभी अपनी–अपनी दुनिया में मस्त है।

'छिन्नमस्ता' में नरेंद्र एक मानवीय संवेदना से शून्य व्यक्ति है और वह प्रिया के विचारों से असंतुष्ट होनें पर उसे चांटा मारता है। यह देखकर भी उसकी सास मुरत बन खड़ी रहती है। वहीं दुसरी ओर प्रिया का बड़ा भाई परिवार का मुखिया होनें के नाते अपनी मनमानी करता है तथा अजय को अपने अधिकारों से वंचित रखता है। वही दुसरी ओर प्रिया की माँ अपने परिवार को बिखरने से बचाने के लिए उसके पिता के हत्यारों को कोर्ट कचहरी तक नहीं ले जाती है। प्रिया की माँ समझती थी कि कोर्ट कचहरी तक मामला पहुँचने पर बहुत सारे पैसे खर्च होंगे और उसकी पहली जिम्मेदारी उसके परिवार की तरफ एक मजबूत आधार प्रदान करने की है। प्रिया के शब्दों में– "अम्मा मजबूत नहीं रहती तो चाचा लोग हमें रास्ते पर बैठा देते। कुल मिलाकर एक ओर भोली संवेदना थी, कोई लग लपेट नहीं, कोई स्वार्थ नहीं तो दूसरी ओर परिवार की इज्जत और आन–बान रखने में जी–जान से संघर्ष करती हुई अम्मा। अम्मा को ही क्या मिला? उन्होंने कब दुनिया देखी?

एकदृएक पैसा जोड़कर घर चलाती हुई चारदृचार बेटियों की माँ। उन्हें क्या बड़े भैया के हाल–चाल, उनकी रईसी का पता नहीं था? अम्मा को सब समझ में आ रहा था पर वे क्या कर सकती थी?"[42]

'आओ पेपे घर चले' में हेल्गा अपने पति व बच्चों को अर्थ व स्वतंत्र अस्तित्व के लिए त्यागने को तत्पर होती है। मरील का पति किसी दुसरी औरत के लिए अपनी पत्नी व बच्चों को छोड़कर चला जाता है और एक परिवार के अस्तित्व को मिटा देता है।

'अग्निसंभवा' में आइवी का पति अपनी नशे की लत को पूरा करने के लिए अपनी पत्नी को शारीरिक रूप से प्रताड़ित करता है। वहीं चीन में परिवार में लड़की को जन्म लेते ही मार दिया जाता है। 'एड्स' उपन्यास में सोफिया अपने पति का प्रेम न पाने के कारण उससे बदला लेने के लिए अपने पति के दोस्त के साथ शारीरिक संबंध बनाकर अपने परिवार को खोखला कर देती है।

अतः प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में ऐसे संयुक्त परिवार की झांकी दिखाई है जो केवल कहने के लिए परिवार है और परिवार के लोग है परंतु इनके बीच ममता, प्यार, स्नेह, सम्मान की कोई भावना निहित नहीं है।

6.3.2 पारिवारिक संबंध –

परिवार रूपी संस्था पारिवारिक रिश्तों से फलती–फूलती है। बिना संबंधों के परिवार की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। संबंधों की नींव पर ही परिवार का स्वरूप निर्धारित होता है। अतः प्रभा जी के उपन्यासों में प्रतिबिम्बित संयुक्त परिवार को परिभाषित करने हेतु परिवार के संबंधों की यथार्थता को टटोलना आवश्यक है। प्रभा जी के उपन्यासों में अधिकांशतः परिवार की सत्ता नारी के हाथों में परिलक्षित होती है। अतः नारी से संबंधित सभी रिश्तों के तानेबाने का गुंफन अतिआवश्यक है। प्रभा जी के उपन्यासों में परिलक्षित रिश्तों के बंधन की झलक निम्नानुसार हैः–

6.3.2.1 माँ–बेटी –

भारतीय संस्कृति में माँ का स्थान सबसे महत्वपूर्ण है। इसीलिए हमारी संस्कृति में कहा गया है– "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरियासी"। नारी के जीवन की संपूर्णता ही माँ बनने को मानी गई है। अतः नारी का मातृ रूप हमारी संस्कृति में अत्यंत महान माना गया है। एक माँ ही है जो बिना किसी स्वार्थ के अपनी सारी खुशियाँ संतान के ऊपर न्यौछावर कर देती है और उसका पालन–पोषण कर उसे अच्छे संस्कारों की सीख देकर आत्मनिर्भर बना अपने दायित्व का निर्वाह करती है। प्रभा जी के उपन्यासों में माँ–बेटी के मध्य संबंधों की कड़ियों को चित्रित किया है।

'स्त्री पक्ष' की वृंदा अपनी बेटी रिया से बहुत प्यार करती है और अपनी बेटी की चिंता तथा खुशी दोनों के लिए उसे अपने पापा के पास जाने की बात कहती है। वहीं रिया भी अपनी माँ से बहुत प्यार करती है और उसके अकेलेपन को मिटाने के लिए उसे उसके प्रेमी अर्जव से मिलाने में सहायता करती है और कहती है– "माँ तुम कही आती जाती नहीं। कितनी अकेली हो गई हो, अच्छा है ना कि अर्जव अंकल से तुम्हें कंपनी मिलेगी।"[43]

'पीली आंधी' की ताई जी प्रिया व साँवर के बच्चे को माँ से बढ़कर प्यार देती है और उनके बच्चों को भी ताईजी से ज्यादा लगाव है। छिन्नमस्ता की दाई माँ भी प्रिया के घर की नौकरानी है परंतु प्रिया से बहुत प्रेम करती है। "प्रिया की जिंदगी में प्यार का एक खूँटा था जो सदा ही जमीन में वहीं का वहीं गड़ा रहता। आँधी–पानी के बिना किसी शिकवे और शिकायत के वह था दाई माँ का खूँटा।"[44]

ताई जी और दाई माँ दोनों सगी ना होने पर भी सगी माँ से ज्यादा प्यार देती है दोनों की ममता सराहनीय व अक्षुण्ण मातृत्व रूपा समान है। "मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ा त्याग और सबसे बड़ी विजय है।"[45] परंतु कुछ माँ का रूप इनके विशेषणों के विपरित भी होता है। ऐसे ही कुछ रूप यहाँ भी परिलक्षित होते है। 'छिन्नमस्ता' की कस्तुरी अपनी बेटी प्रिया के साँवली व मोटी होने के कारण उसकी उपेक्षा करती है और उसके जन्म के बाद बीमार रहने की वजह अपनी बेटी को मानती है। इस कारण कभी उसे अपना आँचल प्रदान नहीं करती है प्रिया के बारे में मालती आदवाणी कहती है– "माँ तथा परिवार के सदस्यों से उपेक्षित बच्ची का बचपन असुरक्षा, भय और घुटन से संत्रस्त हो उठता है।"[46]

'अपने–अपने चेहरे' की मिसेज गोयनका अपनी बेटी के ससुराल से पीहर आने पर उसकी पीड़ा जानने की बजाय उसे फटकार लगाती है और कहती है– "मेरे घर में जगह नहीं, रहना है तो सुसराल में रह नहीं तो कुएँ में पड़।"[47] 'आओ पेपे घर चले' में मरील की दो बेटियाँ है– लारा व नैन्सी। मरील व लारा के आपस में मतभेद होनें पर दोनों आपस में झगड़ती रहती है। इन दोनों से तंग होकर तथा अपनी माँ से नफरत के कारण नैन्सी कहती है– "मैं औरत पर शोध करना चाहती हूँ क्यों हर माँ अपनी बेटी से होड़ करती है? क्यों वह नफरत करती है।"[48] वहीं दुसरी ओर एडिना भी अपनी माँ से नफरत करती हुई कहती है– "जो माँ–बाप मेरी भावनाओं की कद्र नहीं कर सकते जिनकी निगाहों में मेरे लिए सम्मान नहीं उनसे न मुझे संबंध रखना है और न ही उनके पास जाना है"।[49]

6.3.2.2 माँ–बेटा –

भारतीय संस्कृति में नारी के लिए संतानोत्पत्ति को आवश्यक माना गया है तथा भारतीय समाज में वंश को आगे बढ़ाने व संपति की देखभाल हेतु पुत्र का होना आवश्यक माना गया है। प्रभा जी ने भी पुत्र के प्रति इसी भाव को अपने उपन्यासों में उजागर किया है।

'छिन्नमस्ता' की कस्तुरी अपने दोनों बेटों अजय व विजय को बेहद प्यार करती है। अजय के घर छोड़कर चले जाने पर कहती है– "हनुमान जी को प्रसाद चढ़ाने व रानी सतीजी के लिए चूड़ा चुनरी का चढ़ावा बोल दिया है।"[50] वहीं दुसरी ओर नरेंद्र की माँ उसके भूख की बहुत चिंता करती है। बेटे को खाना खाने की जिद करते हुए कहती है– "खा ले बेटा, मेरा मन रख ले। एक फूल्का भी खाएगा तो मैं रात को चैन से सो सकूँगी।"[51]

'पीली आँधी' की सुराणा की माँ अपने बेटे की आत्महत्या की खबर सुनकर कुएँ में कुदकर जान देने की कोशिश करती है। 'स्त्री पक्ष' का रचित अपनी माँ से बेहद प्यार करता है और अपनी माँ की खुशी के लिए वह उसके माँ के प्रेमी को अपने घर में आने देता है।

'अपने–अपने चेहरे, की मिसेज गोयनका को दुसरी औरत के साथ संबंध होनें पर भी वह सब कुछ सहन करती है और अपने बेटों से कहती है– "मुझे क्या अच्छा लगता है ये? मैं तो तुम लोगों का मुँह देखकर जीती हूँ।"[52]

6.3.2.3 भाई–बहन –

किसी भी परिवार में भाई–बहिन के रिश्ते को बहुत पवित्र माना गया है। भाई हमेशा बहन की रक्षा करता है और बहन सदैव भाई की सलामती के लिए ईश्वर से प्रार्थना करती है। प्रभा जी उपन्यासों में भी भाई–बहन के संबंधों की झलक दिखाई देती है।

'स्त्री पक्ष' में वृंदा के दोनों बच्चों के मध्य गहरा प्रेम है। पिता द्वारा माँ को छोड़े जाने पर दोनों भाई–बहन अपनी माँ का ज्यादा ख्याल रखते है और अपनी माँ के प्रेमी को भी स्वीकार कर लेते है। 'तालाबंदी' की पुष्पा अपने भाई से धोखेबाजी करने पर भी श्यामबाबू उसकी करतूतों को नजर अंदाज करते हुए उससे अपने संबंध की मिठास को बनाए रखते है। 'पीली आँधी' में सांवर के बेटे अपनी विधवा बहन से बहुत प्यार करते है और पूरे मान–सम्मान के साथ उसे रखते है।

प्रभा जी के कुछ उपन्यासों में भाई–बहन के रिश्ते के खोखलेपन को भी उभारा गया है। 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में भाई–बहन के इस पवित्र रिश्ते को शर्मसार होते हुए

बताया है। प्रिया के भाई–बहन उससे उपेक्षित व्यवहार करते थे और उसका मजाक उड़ाकर उसका अपमान करते है तथा उसका बड़ा भाई प्रिया का बलात्कार करता है। उसकी शारीरिक भूख को मिटाने से तंग आकर वह आत्महत्या करने की धमकी देती है। 'अपने–अपने चेहरे' की रीतु के भाई भी रीतु से प्यार नहीं करते है। उसके ससुराल छोड़कर मायके आने पर उसके दर्द को कम करने व उसके दुख को मिटाने की बजाय वह दोनों उसे जायदाद से दूर रखने का प्रयास करते है।

6.3.2.4 ननद–भाभी –

ननद व भाभी का रिश्ता बहुत नाजुक होता है। कभी दोनों के मध्य बहनों, सहेलियों जैसा रिश्ता बनता है तो कभी नफरत व ईर्ष्या का रिश्ता बनता है। प्रभाजी के उपन्यासों में दोनों के रिश्तों में गहरी संवेदना को उजागर किया है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास में प्रिया व उसकी ननद मीना के साथ बहुत आत्मीयता व अपनेपन का संबंध है। प्रिया अपनी ननद से मिलने व उसको पढ़ाने के लिए छुप–छुपकर घर के बाहर जाती है और जब प्रिया अपने पति का घर छोड़कर दुसरी जगह रहने लगती है तो नीना उसे मनाकर अपने घर ले जाती है और काम में उसकी मदद करने के लिए कहती है– "भाभी। क्या आज से में आपके काम में मदद कर सकती हूँ? भाभी आप मुझे अपनी बहन, दोस्त कुछ भी मान लीजिए मैं अपनी जान दे दूँगी पर आप पर आँच नहीं आने दूँगी।"[53] प्रिया भी अपनी ननद के प्रति संरक्षक, माँ व सखी के रिश्ते को मिलाकर उसकी शादी अच्छे इंसान से करवाती है और उसका सुखी संसार बसाती है।

6.3.2.5 पति–पत्नी –

परिवार रूपी संस्था में पति–पत्नी का स्थान सर्वोपरि है। उनके संबंध को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है। पत्नी–पति एक ही गाड़ी के दो पहिए के समान है। दोनों एक–दूसरे के पूरक है तथा दोनों एक–दूसरे के लिए महत्वपूर्ण है। पति–पत्नी दोनों का जीवन एक–दूसरे के बिना अधूरा है। भारत की संस्कृति में स्त्री को एक आदर्श पत्नी के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। "गृहस्थी का सच्चा आधार स्त्री है। उसके समर्पण व बलिदान पर ही परिवार खड़ा रहता है।"[54] अर्थात गृहस्थी के निर्माण हेतु नारी का होना आवश्यक है और उसके समर्पण, सेवाभाव व अपनत्व के द्वारा परिवार रूपी संस्था सुचारु रूप से चल सकती है। "पत्नी गृहस्थी का मेरुदंड है। वह परिवार के सुख–शांति का केंद्र बिन्दु है।"[55] प्रभा जी के उपन्यासों में पति–पत्नी के मध्य सुखद व दुखद दोनों प्रकार के संबंधों को उजागर किया गया है। 'पीली आँधी' उपन्यास के माधो व पद्मावती अनमेल विवाह में बंधने पर भी अपने रिश्ते को समझ संबंधों की गरिमा बनाये रखते है। माधो

पद्मावती से कहता है—"पद्मावती तुम सुंदर हो। बहुत सुंदर। तुम्हारा शरीर भी मन भी सुंदर है।"[56]

'तालाबंदी' उपन्यास की सुमित्रा अपने पति से सभी अपेक्षाओं की पूर्ति न होने पर भी उनसे बहुत प्यार करती है और दोनों एक—दुसरे का ख्याल रखते है। 'एडस' उपन्यास के जार्ज व सोफिया दोनों भी एक दुसरे से प्यार करते है। प्यार के कारण ही जार्ज सोफिया को नाजायज रिश्ता कायम करने पर भी माफ कर देता है।

प्रभा जी के उपन्यासों में अधिकांश पति—पत्नी का जीवन कलहों से भरा हुआ है। अपने—अपने जीवन में संघर्ष करते हुए उनका जीवन संघर्ष की दास्तां बन गया है। ज्यादातर दाम्पत्य संबंध दुःखद है। 'स्त्री पक्ष' की वृंदा और सुमित के बीच सुनीता के आ जाने पर उनका सुखी जीवन बिखर जाता है। 'अपने—अपने चेहरे' के मिस्टर गोयनका अपनी पत्नी से प्रेम नहीं करते और उसके जीवन में रमा नाम की सौतन लेकर आ जाते है। वहीं दुसरी ओर रीतु का पति कुणाल भी उसे छोड़कर एक विवाहित स्त्री से प्रेम करता है। 'पीली आँधी' का सांवर भी एक विदेशी महिला रोजी से प्रेम करता है और पत्नी को धोखा देता है। इसी उपन्यास के प्रो. सुजीत व चित्रा के मध्य सोमा आ जाती है और सुखी जीवन दुख के गर्त में चला जाता है। "छिन्नमस्ता' का नरेंद्र भी नई—नई औरतों के साथ संबंध रखता है और प्रिया को प्रताड़ित करता है। प्रभाजी के उपन्यासों में पति—पत्नी के रिश्ते के मध्य कड़वाहट का कारण सेक्स की पूर्ति न होनें को माना है।

6.3.2.6 सास—बहू —

विवाह संस्था के सुचारु रूप से चलने के लिए 'सास' की महत्तवपूर्ण भूमिका होती है। परिवार के संयुक्त रहने व सुख शांति से जीवन यापन सास व बहू के रिश्ते पर निर्भर करता है। परिवार की खुशहाली हेतु दोनों के मध्य अपनत्व का संबंध होना आवश्यक है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में सास—बहू के मधुर व विघटित दोनों संबंधों को उजागर किया है।

'पीली आँधी' की ठकुराईन अपनी बहुओं से बहुत प्यार करती है। वह अपनी बहुओं को सजी सँवरी देखना पसंद करती है और उनको बेटियों के समान रखती है। अपनी बीमार बहू के लिए वैद्यजी से कहती है— "महाराज कोई दवा तो दीजिए आप क्या नहीं कर सकते अमावस की रात को चमाचम पूर्णमासी में बदल सकते है।"[57] इसी उपन्यास की राधाबाई प्रारंभ में पद्मावती के साथ कठोर व्यवहार करती है। परंतु धीरे—धीरे पद्मावती से प्रेम करने लगती है और पद्मावती के बच्चा न होने पर उमा को पद्मावती की गोद में रख देती है।

'छिन्नमस्ता' में प्रिया की सास एक आदर्श सास है। वह हमेशा अपने बेटे की बजाय बहू का साथ देती है और उसके व्यवसाय करने के लिए भी उसे प्रात्साहित करती है तथा चाहती है कि उसकी बहू हमेशा सुंदर दिखे इसलिए वह प्रिया से कहती है– "प्रिया बेटे कपड़े और अच्छे पहना करो।"[58] "स्त्री पक्ष' की वृंदा की सास वृंदा के गर्भवती होने पर खुश नहीं होती है। वह वृंदा की गर्भावस्था को अपने बेटे की पढ़ाई में नुकसान होने की संभावना होने के कारण उसे गर्भपात कराने के लिए कहती है।

6.3.3 ग्रामीण संस्कृति –

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में ग्रामीण संस्कृति का चित्रण भी किया है। ग्रामीण संस्कृति व परिवेश पर आधारित एक मात्र उपन्यास 'पीली आँधी' है। यह तीन पीढ़ियों के उजड़ने व बसने की कथा–वस्तु पर आधारित है। रेगिस्तान होने के कारण पानी की गंभीर समस्या है। लोगों को दो घुंट छाछ पीकर व गन्ने का ऊपरी हिस्सा चूसकर भी अपनी प्यास बुझाने पर मजबूर है। अकाल के कारण लोगों का जीवन कठिनाइयों से भरा है। इस कारण बनिया लोग पैसा कमाने के लिए राजस्थान छोड़कर बाहर चले जाते है और सालों घर नहीं आते है। लोगों के आचार–विचार, रहन–सहन व रीति–रिवाजों में भी ग्रामीण संस्कृति की झलक दिखाई देती है। किसी वृद्ध के मरने पर श्राद्ध धूमधाम से किया जाता है। सात गाँवो के लोग जीमने आते है। विवाह अवसर पर रंग–बिरंगे कपड़े व लोक गीतों की धुन ग्रामीण संस्कृति की झलक को और अधिक पुष्ट कर देती है।

6.3.4 शहरी संस्कृति –

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में शहरी संस्कृति को भी दर्शाया है। इन्होंने अपने अधिकांश उपन्यासों में मारवाड़ी परिवारों का अर्थोपाजन हेतु शहर की ओर रुख को दर्शाया है। 'छिन्नमस्ता' उपन्यास में महानगर कलकत्ता के बारे में बताया है। यह महानगरीय जीवन और व्यापार में धोखाधड़ी के लिए प्रसिद्ध है। पारस्परिक स्पर्धा व तनाव के कारण व्यवसायी कुटिलता व अपराध करने को आतुर हो जाते है।

'छिन्नमस्ता', 'स्त्री पक्ष' और 'अपने–अपने चेहरे' में संयुक्त परिवार में स्त्रियों के संबंधों की टकराहट को उजागर किया है। 'छिन्नमस्ता व अपने–अपने चेहरे' उपन्यास में दूसरी औरत को परिभाषित किया है। 'तालाबंदी' में बेटे के अस्तित्व हेतु ईश्वर की अनुशंसा को प्रकट किया है। श्यामबाबू कहते है– "मेरे तो सरवण कुमार है......है मेरी सती दादी। मेरा लगड़िया बाबा हनुमानजी। थे साग चलियों, मेरे लाल की थेई रक्षा करोगा।"[59] एकाकीपन, तनाव, रिश्तों का खोखलापन, बनावटी चेहरा, नारी की दयनीय स्थिति आदि शहरी संस्कृति की देन है।

निष्कर्षतः प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में परिवार में पलते पारिवारिक संबंधों के यथार्थ को प्रकट करते हुए परिवार संस्था व अपने परिवेश की संस्कृति को भी उजागर किया है। सामाजिक आयामों की तलाश में प्रभा जी के उपन्यास पूर्ण रूप से खरा उतरते है।

6.4 वैवाहिक व विवाहेत्तर संबंध –

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज की नींव मानव के द्वारा पारिवारिक संस्था के माध्यम से रखी जाती है। परिवार के द्वारा ही व्यक्ति का जीवन संयमित व संचालित होता है। अतः परिवार नाम की संस्था मनुष्य के वैवाहिक जीवन स्तर द्वारा पल्लवित व संचालित होती है। वर्तमान में आधुनिकतावाद की होड़ में विवाह की परिभाषा ही बदल गई। आधुनिकतावाद व नारी के प्रति समान स्तर के अभाव के कारण असफल विवाह, विवाहेत्तर प्रेम संबंध, बेमेल विवाह जैसी समस्याएँ उजागर होती है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में विवाह से संबंधित ऐसी ही समस्याओं का चित्रण किया है।

6.4.1 विवाह –

विवाह एक धार्मिक व पारिवारिक संस्था है जिसमें स्त्री व पुरुष परिवार की मौजूदगी में अग्नि के समक्ष सात फेरे लेकर बंधन में बंधते है। पति–पत्नी के मध्य आपसी समझ, प्यार व विश्वास को सर्वाधिक आवश्यक माना गया है। दो व्यक्तियों के आपसी प्रेम द्वारा परिवार को आगे बढ़ाने व उनके संरक्षक को दांपत्य जीवन का आदर्श माना गया है। इसी संदर्भ में डॉ. राजेन्द्र यादव का कहना है कि "विवाह एक मर्यादा है, जीवन की एक विशिष्ट और स्वीकृत पद्धति है।"[60]

विवाह संस्था का समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान है। विवाह संस्था में स्त्री–पुरुष के मध्य आपसी प्रेम व विश्वास के द्वारा वैवाहिक जीवन सुखमय बन सकता है और इनके अभाव में विवाह एक अनचाहे किनारे पर रुक जाता है। अतः वैवाहिक जीवन हेतु सम्मान व समानता की भावना परम आवश्यक है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में विवाह के कई रूपों का वर्णन किया है।

6.4.1.1 परम्परागत विवाह –

प्रभा जी आधुनिकता की वाहिका है परन्तु परम्परा व संस्कृति से भी उनका उतना ही घनिष्ठ लगाव व तारतम्य है। इसी कारण प्रभा जी के उपन्यास में आधुनिकता के साथ परम्परागत संस्कृति की झलक भी परिलक्षित होती है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में विवाह के एक स्वरूप परम्परागत विवाह का वर्णन भी किया है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास के अजय की शादी के बातचीत के समय उसकी माँ कहती है– "क्या देखना है? फोटो तो भेज दी अगलों ने और विजय देखकर आया है न।"[61] अतः स्पष्ट है कि अजय अपने परिवार की मर्जी से शादी कर ले। वही प्रिया व नरेन्द्र तथा परिवार के अन्य सदस्यों की शादियाँ भी परिवार की रजामंदी व अपनी संस्कृति के अनुसार ही होती है। 'पीली आँधी' उपन्यास की सोमा एक पढ़ी लिखी व शिक्षित नारी है परन्तु शादी उनकी माता–पिता की मर्जी के अनुसार करनी पड़ती है। यहाँ तक की शादी के समय उसकी इच्छा भी नहीं पूछी जाती है। वही इसी उपन्यास के सूजित–चित्रा, माधव–पद्मावती की शादियाँ भी परम्परागत पद्धति से ही होती है।

'अपने–अपने चेहरे' के मिस्टर गोयनका व मिसेज गोयनका का विवाह भी उनकी इच्छा के विरुद्ध परिवारवालों की सहमति के अनुसार होता है। इसीलिए सारा जीवन वह एक–दूसरे से दूर एकाकीपन व अलगाव युक्त जीवन जीते है और परिवारवालों की खुशियों के लिए दिखावे युक्त जीवन जीने को मजबूर होते है। 'तालाबंदी' उपन्यास के श्यामबाबू–सुमित्रा, 'स्त्री पक्ष' के सुमित–वृंदा आदि सभी का विवाह पारम्परिक रीति–रिवाजों के साथ ही हुए है। प्रभा जी के उपन्यासों में परम्परागत तरीके से सम्पन्न विवाहों की असफलता को ही उजागर किया है। इनके उपन्यासों में परिवार की सहमति से जुड़े सभी रिश्तों को असफल ही बताया है तथा उनके दुखी व घुटन से भरे जीवन जीने का ही वर्णन हुआ है।

6.4.1.2 अनमेल विवाह –

प्रभाजी के उपन्यासों में अनमेल विवाह की समस्या को भी उजागर किया गया है। अनमेल विवाह का वर्तमान समय में भी प्रचलन दिखाई देता है। अनमेल विवाह में दम्पति अधिकांशतः घुटन व दुख से भरा जीवन जीने को मजबूर होते है।

'पीली आँधी' की पद्मावती का जीवन अनमेल विवाह के कारण समाप्त हो जाता है। पद्मावती एक कुंवारी गरीब लड़की है और उसका विवाह पहले से शादीशुदा एक अमीर व्यक्ति माधव से होता है। अपनी पहली पत्नी की मृत्यु हो जाने के कारण वह अपने से दस साल छोटी उम्र की लड़की से विवाह करता है। शादी के पश्चात माधव पद्मावती से किसी प्रकार से कोई संबंध नहीं रखता है। वही दूसरी ओर सोमा का विवाह एक धनी परिवार के लड़के गौतम के साथ हो जाता है। वह सोमा से आयु में बहुत बड़ा तथा कद में बच्चे के समान है। लेकिन सोमा के पिता गौतम की सभी कमियों व सोमा की खुशियों को नजर अंदाज कर उसका विवाह करवा देते है। इस कारण दोनों अपने जीवन में खुश नहीं रहते है।

इस प्रकार प्रभा जी ने स्पष्ट रूप से उजागर किया है कि अनमेल विवाह नारी व्यथा का सम्पूजन है। अनमेल विवाह कभी सफल नहीं होते है। स्त्री व पुरुष का दाम्पत्य जीवन नाम मात्र का होता है।

6.4.1.3 प्रेम विवाह –

आज के समय में नारी परम्परागत व प्राचीन मूल्यों को नकारते हुए शिक्षा प्राप्त कर अपने पैरों पर स्वयं खड़ी हो आत्म–निर्भर बन रही है। नारी समानता के अधिकार की अभिलाषी है। वह विवाह को अपने जीवन की एक अहम व नई राह स्वीकार करती है। इसीलिए वह इस संबंध में भी समानता व सम्मान चाहती है। इसी संदर्भ में डॉ. प्रभा खेतान लिखती है– "स्त्री–पुरुष एक बीच का संबंध विशुद्ध रूप से निजी मामला हो (यानि संबंधित व्यक्तियों के अतिरिक्त इनमें धर्म एवं सामाजिकता का कोई हस्तक्षेप न हो) यह चयन की पूरी आजादी दोनों को हो और यह संबंध पूरी तरह समानता पर आधारित हो।"[62]

प्रेम विवाह में स्त्री–पुरुष के संपर्क में आकर मित्रता का भाव प्रेम रूप में परिणित होता हैं। चूंकि प्रेम विवाह स्त्री–पुरुष की सहमति व विचारों के मेल के कारण होता है इसलिए उनमें नारी को भी समानता का अधिकार प्राप्त होता है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में अधिकांशतः प्रेम विवाह का वर्णन किया है।

'अग्निसंभवा' का वुंग–लियेना से प्रेम करता है। दोनों की चाहत परवान चढ़ती है तत्पश्चात दोनों अंगूठियाँ बदल कर शादी के पवित्र बंधन में बंध जाते है। 'पीली आँधी' की सोमा व सूजित भी एक दूसरे के सम्पर्क में आते है और दोनों में प्रेम होता है। उनका यह दैहिक आकर्षण विवाह रूप में परिणित हो जाता है।

'स्त्री–पक्ष' की वृंदा और सुमित अपने परिवारवालों के साथ पिकनिक मनाते समय एक–दूसरे से मिलते है और एक–दूसरे को देखते ही प्रेम हो जाता है। तत्पश्चात परिवारवालों की सहमति के साथ दोनों विवाह कर लेते है। कुछ सालों बाद सुमित सुनीता से मिलता है और उससे प्रेम करने लग जाता है इस कारण सुमित वृंदा को तलाक देकर सुनीता से शादी कर लेता है।

निष्कर्षत कह सकते है कि प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में विवाह के सभी प्रकारों का वर्णन किया है और किसी न किसी कारण उनके रिश्तों की टूटन व विखराव को दर्शाया है। इस तरह उन्होंने वैवाहिक जीवन में असफलता को ज्यादा उजागर किया है।

6.4.2 विवाहेत्तर संबंध –

भारतीय समाज में विवाह संस्था का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। परन्तु आज विवाह से संबंधित दृष्टिकोण में बहुत बड़ा परिवर्तन आया है वर्तमान में परिस्थिति के अनुसार

विवाह रूपी संबंध बनते व बिगड़ते जा रहे है। विवाह के संदर्भ में व्यक्ति के विचारों में आए बदलाव ने भी विवाह की नींव को हिला दिया है। प्रभाजी लिखती है कि– "विवाह एक संस्था है, रजिस्टर के कागजों पर सही किया हुआ नाम है। तलाक की व्यवस्था कानून ने बनाई है।...... तब इस बंधन को तोड़ा भी जा सकता है। बल्कि तोड़ ही देना चाहिए।"[63] स्पष्ट है कि व्यक्तियों के सोच में आये बदलाव ने पूरी तरह से विवाह की नीवं को खोखला बना दिया है। इसके अतिरिक्त स्त्री की आर्थिक रुप से आत्मनिर्भरता ने भी विवाह के प्रति नारी की सोच व उससे जुड़ी आकांक्षाओं में परिवर्तन ला दिया है। नारी आर्थिक रूप से सुरक्षित होने के कारण पुरुषों की अधीनता स्वीकारना नहीं चाहती है। इस कारण भी विवाह के पश्चात विवाह विच्छेद की समस्याएँ बढ़ रही है। सीमोन द बोउवार लिखती है कि– "आर्थिक विकास के कारण औरत की समकालीन स्थिति में आये भारी परिवर्तन ने विवाह संस्था को भी हिला दिया है। विवाह अब दो स्वतंत्र व्यक्तियों के बीच एक पारस्परिक समझौते से उत्पन्न बंधन है, जो व्यक्तिगत तथा पारस्परिक होता है। किसी प्रकार का व्यभिचार विवाह के अनुबंधों और इकरारनामों का उल्लंघन ही माना जाएगा। इसी आधार पर दोनों पक्षों को विवाह तोड़ने का भी अधिकार मिलता है।...... आज स्त्री के लिए पुरुष द्वारा संरक्षित होनें की अनिवार्यता समाप्त होती जा रही है।"[64] अर्थात आज नारी भी विवाह संबंधी नैतिक प्रतिमानों का स्वतंत्रता के अधिकार के नाम पर उल्लंघन करने लगी है तथा विवाह संबंध को अपने अनुसार जीना चाहती है।

आज के वर्तमान दौर में कोई भी रिश्ता अपना प्रभाव लिए हुए नहीं हैं क्योंकि हर इंसान अपनी सुविधा के अनुसार रिश्ते बनाता व तोड़ता है। दाम्पत्य संबंधी रिश्तों में टूटन का कारण नारी का आर्थिक रूप से स्वतंत्र होना या विवाह से संबंधित व्यक्ति की सोच में बदलाव नहीं है बल्कि इसका सबसे प्रमुख कारण इंसान की शारीरिक भूख है। काम संबंधों में सुस्तता व सेक्स की पूर्ति न होने के कारण विवाहेत्तर संबंधों की समस्या उत्पन्न होती है। प्रभाजी ने भी अपने उपन्यासों में विवाह संस्था के विसर्जन हेतु इस समस्या को सबसे अधिक प्रभावी माना है। अपने उपन्यासों के द्वारा सर्वाधिक इसी समस्या को चित्रित किया है।

'आओ पे पे घर चले' की एलिजा को अपने पति के क्लारा ब्राउन के साथ प्रेम संबंधों के कारण कई पारिवारिक समस्याओं से जुझना पड़ता है तथा दोनों का जीवन दुख व निराशा से भर जाता है।

'छिन्नमस्ता' में प्रिया का पति नरेन्द्र का नई–नई सेक्रेटरियों से संबंध होने के कारण वह नरेन्द्र से तलाक लेकर इस विवाह संबंध को तोड़ देती है। वही नरेन्द्र के पिता

मिस्टर अग्रवाल का तिलोत्तमा के साथ नाजायज संबंध होने के कारण उनकी पत्नी हमेंशा घुटन भरी जिन्दगी जीने को विवश होती है।

'स्त्री पक्ष' की वृंदा का पति डॉ. सुमित दो बच्चे होनें के बाद भी सुनीता से प्रेम संबंध रखता है और वृंदा को तलाक देकर सुनीता से शादी कर लेता है। 'पीली आँधी' की सोमा अपने पति के नपुंसक होने पर सूजित सेन से प्रेम करती है और उससे विवाह भी करती है।

'एड्स' उपन्यास में कूकु अपने पति के मित्र के साथ प्रेम संबंध रखती है। कूकु व अपने मित्र दोनों की बेवफाई और पत्नी से प्राप्त एड्स जैसी बीमारी से ग्रस्त व हालातों से लाचार पति की पीड़ा को बहुत गहराई व संजीदगी से प्रस्तुत किया है।

'अपने–अपने चेहरे' के मिस्टर गोयनका अपनी पत्नी के छोटे कद व साँवलेपन से नफरत के कारण रमा नाम की लड़की से प्रेम संबंध रखते है। इस कारण मिस्टर गोयनका की पत्नी का जीवन दुखों से भर जाता है।

निष्कर्षत प्रभा जी ने विवाहेत्तर संबंधों के कारण दाम्पत्य जीवन के टूटन व अलगाव पर रोशनी डाली है। उन्होंने अपने उपन्यासों के द्वारा स्पष्ट किया हैं कि विवाह एक ओवरडेटेड संस्था है तथा इस संस्था में बँधकर नारी का जीवन नरक के समान हो जाता है। उन्होंने प्रत्येक नारी पात्र के प्रति सहानुभूति को प्रकट किया है।

संदर्भ सूची –

1. हंस पत्रिकाः नवम्बर 2008
2. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूप, डॉ विमला शर्मा, पृष्ठ – 344
3. औरत होने की सजा, अरविंद जैन, पृष्ठ – 18
4. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ उषा कीर्ति राणावत, पृष्ठ – 10
5. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 32
6. प्रभा खेतान के उपन्यासः नारी अस्मिता के विशेष संदर्भ में, मंजु एम नायर, पृष्ठ – 186
7. वहीं पृष्ठ – 186
8. अपने–अपने चेहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 91
9. डॉ. प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का विषयगत अनुशीलन, घरपंकर, सुंगधा हिन्दू राव, पृष्ठ – 51
10. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 136
11. हिन्दी उपन्यास का इतिहास समकालीन परिदृश्य, प्रो. गोपालराय, पृष्ठ – 385

12. दसवें दशक के प्रतिनिधि उपन्यास, मालती आंदवानी, पृष्ठ – 37
13. स्त्रीवाद और महिला उपन्यासकार, डॉ वैशाली देशपांडे, पृष्ठ – 186
14. नौवें दशक की हिन्दी कविताओं में नारी संदर्भ, डॉ. यतिन्द्र तिवारी, पृष्ठ – 57
15. यशपाल के उपन्यासों में नारी चेतना, डॉ. सुमन शर्मा, पृष्ठ – 27
16. स्त्री पक्ष, जनसत्ता सबरंग, जून 1999, पृष्ठ – 27
17. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 51
18. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 134
19. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान
20. आओं पेपे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 10
21. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 189
22. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान
23. स्त्री पक्ष, डॉ प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग –21
24. आओं पेपे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ –24
25. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 103
26. वही, पृष्ठ दृ 124
27. स्त्री पक्ष, जनसत्ता सबरंग, जनवरी 1999, पृष्ठ – 44
28. प्रभा खेतान के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक अध्ययन, माधोसुल जय श्री अर्जुन, पृष्ठ–319
29. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 77
30. प्रेम का वास्तविक अर्थ और सिद्धांत, एरिक फार्म, द आर्ट ऑफ लिविंग अनुवाद युगांक धीर, पृष्ठ – 29
31. कवियों के कवि अज्ञेय, डॉ वसंत मुगदल, पृष्ठ – 122
32. कवि अज्ञेय, डॉ ओमप्रकाश अवस्थी, पृष्ठ – 117
33. प्रभा खेतान और उनका साहित्य, परवीन मलिक, पृष्ठ – 282
34. प्रेम का वास्तविक अर्थ और सिद्धांत, एरिक फार्म, द आर्ट ऑफ लिविंग अनुवाद युगांक धीर, पृष्ठ – 29
35. वही पृष्ठ – 298–299
36. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृष्ठ – 65
37. कबीर, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ – 129
38. महिला साहित्यकारों का नारी चित्रण, डॉ रतनकुमारी वर्मा, पृष्ठ – 259

39. छिन्नमस्ता, पृष्ठ – 123
40. स्त्री पक्ष, जनसत्ता सबरंग, जून 1999, पृष्ठ – 20
41. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ उषा कीर्ति राणावत, पृष्ठ – 122
42. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 65
43. स्त्री पक्ष, जनसत्ता सबरंग, जुलाई 1999
44. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, डॉ उषाकीर्ति राणावत, पृष्ठ – 116
45. कृष्णा सोबती के उपन्यासों में प्रतिबिम्बित नारी, डॉ सुलोचना अंतरेड्डी, पृष्ठ – 67
46. दसवें दशक के प्रतिनिधि उपन्यास, मालती आदवानी, पृष्ठ – 33–34
47. अपने–अपने चेहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 97
48. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 69–70
49. वहीं, पृष्ठ – 117
50. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 63
51. वहीं, पृष्ठ – 136
52. अपने–अपने चेहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 22
53. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 179
54. हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी, डॉ रेखा कुलकर्णी, पृष्ठ – 69
55. कृष्णा सोबती के उपन्यासों में प्रतिबिम्बित नारी, डॉ सुलोचना अंतरेड्डी, पृष्ठ – 76
56. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 111
57. वहीं, पृष्ठ – 8
58. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 135
59. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 23–24
60. पत्नी घर में प्रेयसी मन में, राजेंद्र यादव, परिचर्चा, धर्मयुग सितम्बर 1994, पृष्ठ – 6
61. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 72
62. सिमोन द बोउवार, स्त्री उपेक्षिता, अनुवाद – डॉ प्रभा खेतान पृष्ठ – 177
63. पीली आंधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 241
64. सिमोन द बोउवार, स्त्री उपेक्षिता, अनुवाद – डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 177

सप्तम अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन

सप्तम अध्याय

प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन

प्रस्तावना

7.1 भाषा वैविध्य

7.1.1 चित्रात्मकता

7.1.2 स्वाभाविकता व सहजता से युक्त

7.1.3 शब्द रूप

7.1.3.1 अंग्रेजी शब्द

7.1.3.2 गालीसूचक शब्द

7.1.3.3 अरबी–फारसी शब्द

7.1.3.4 राजस्थानी, बंगाली व भोजपुरी

7.1.3.5 ग्रामीण शब्द

7.1.4 मुहावरे व लोकोक्तियाँ

7.1.5 सांकेतिक भाषा

7.2 शिल्प–विधि

7.2.1 वर्णनात्मक शैली

7.2.2 आत्मकथात्मक शैली

7.2.3 पूर्व दीप्ति या फ्लेश बैक शैली

7.2.4 पत्रात्मक शैली

7.2.5 डायरी शैली

7.2.6 काव्यात्मक शैली

7.3 प्रतीकात्मकता और बिम्बधर्मिता

7.3.1 प्रतीकात्मकता

7.3.2 बिम्बधर्मिता

7.3.2.1 घ्राण्य बिम्ब

7.3.2.2 स्पर्श बिम्ब

7.3.2.3 दृश्य बिम्ब

7.4 कथ्यपरक संश्लिष्टता

7.4.1 आओ पे पे घर चले

7.4.2 तालाबंदी

7.4.3 छिन्नमस्ता

7.4.4 अपने–अपने चेहरे

7.4.5 पीली आँधी

7.4.6 अग्निसंभवा

7.4.7 एड्स

7.4.8 स्त्री–पक्ष

7.5 पात्र और उनका चरित्र

प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन

प्रस्तावना –

आधुनिक काल में मानव जीवन के सर्वांगीण विश्लेषण हेतु गद्य की सभी विधाओं में उपन्यास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास कल्पना व मनोरंजन के साथ युगीन समस्याओं को सहजता व स्पष्टता के साथ अभिव्यक्त करने की विधा है। प्रत्येक विधा को सुसज्जित व सुसंगठित रूप से संवारने का साधन है– संरचनात्मक पक्ष।

प्रत्येक साहित्यकार का अपनी विचारधारा व अनुभव को व्यक्त करने का एक विशिष्ट माध्यम होता है। जहाँ कथ्य किसी भी साहित्यकार के साहित्य की पहचान बनता है वहीं शिल्प के द्वारा किसी भी रचना में तत्वों का सम्गुफन होकर सुन्दर कृति का रूप धारण करते है। अर्थात शिल्प एक माध्यम है जो कलाकार की अनुभूति को सार्थक अभिव्यक्ति प्रदान करता है। हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में कथ्य के साथ–साथ शिल्प के विधान में भी आमूलचुल परिवर्तन हुआ है। नेमीचन्द्र जैन के शब्दों में – "शिल्प के स्तर पर निस्सन्देह बहुत से लेखकों ने अपने–अपने ढंग से नये–नये प्रयोग किये है और अपनी भाववस्तु को अधिक से अधिक प्रभावी और चमत्कारपूर्ण ढंग से संप्रेषित करने के लिए कथा की बहुत–सी शैलीगत युक्तियाँ अपनायी है। इस दृष्टि से उपन्यासों के क्षेत्र में पर्याप्त विविधता है।"[1] अर्थात साहित्य की हर एक विधा का अपना अलग विशेष रचना शिल्प होता है। अतः सर्वप्रथम शिल्प की संकल्पना व अवधारणा को समझना आवश्यक है।

शिल्प का शाब्दिक अर्थ किसी वस्तु की रचना व अभिव्यक्ति की पद्धति से है। डॉ. सुरेन्द्र के शब्दों में– "शिल्प से तात्पर्य किसी वस्तु को गढ़ना या रूपायित करना है, किन्तु यह नितात बाह्य ढाँचे के तकनीक के नियम है, जैसा कि जैनेन्द्र मानते है। शिल्प वस्तुतः समुची कृति के अंतः भाव का बाह्य रूपाकार है, वह वस्तु की नाटकीय ढंग से सम्पूर्ण उपस्थिति है।"[2] 'शिल्प' शब्द अंग्रेजी के 'टेकनीक' का पर्याय है। हिन्दी में शिल्प हेतु शिल्पविधि, शिल्प विधान आदि समानार्थी शब्दों का प्रयोग होता है। 'नालन्दा विशाल शब्द सागर' के अनुसार शिल्प का अर्थ– "कोई वस्तु हाथ से बनाकर तैयार करने का नाम, काम, कारीगरी, दस्तकारी या कलासंबंधी व्यवसाय है।"[3] साहित्य के क्षेत्र में शिल्प का अपना एक स्थान है। शिल्प का संबंध साहित्यकार के अनुभव की गहराई व अभिव्यंजना से होता हैं। साहित्यकार अपनी कल्पना व सृजनशीलता के द्वारा शिल्पविधान की रचना कर अपने सृजन के लक्ष्य को साकार करता है। डॉ. कैलाश वाजपेयी के अनुसार– "शिल्पविधि रचना की

उन प्रमुखताओं का लेखा–जोखा है जिनके आधार पर रचना मूर्त हो सकी है। अथवा विशिष्ट भंगिमा के साथ लेखनी अवतरित हुई है।"

साहित्य के निर्माण में दो सोपान प्रमुख होते है– साहित्यकार की गहन अनुभूति व अभिव्यक्ति या अभिव्यंजना। साहित्यकार की अनुभूति का संबंध भाव पक्ष से होता है और अभिव्यक्ति का संबंध कला पक्ष। साहित्य सृजन हेतु साहित्यकार अपनी अनुभूति के द्वारा भाव पक्ष का हर कोना टटोलटकर सामग्री इकटठा करता है और भाषा, प्रतीकों, बिंबो, मुहावरों व शैली द्वारा अपनी रचना को साकार रूप देता है। डॉ. प्रभा खेतान ने भी अपने उपन्यासों के सफल प्रस्तुतीकरण हेतु शिल्प विधान में नये–नये प्रयोग किए है। इस अध्याय में डॉ. प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन हेतु निम्न शीर्षकों के माध्यम से अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

7.1 भाषा वैविध्य –

भाषा शब्द संस्कृत की 'भाषा' धातु से बना है, जिसका अर्थ है– बोलना या कहना। भाषा मनुष्य की अनुभूति, इच्छा व भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। हिन्दी साहित्य कोष के अनुसार– "यदि वैज्ञानिक और सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो भाषा मनुष्य के केवल विचार–विनिमय का ही साधन नहीं है, विचार का भी साधन है।"[4] विचारों में परिवर्तन होनें पर भाषा शैली में भी परिवर्तन होता है। प्रभा खेतान की भाषा में भावों को अभिव्यक्त करने की गहन क्षमता विद्यमान है। उन्होंने भाषा के क्षेत्र में कई नवीन प्रयोग किये है। प्रभा खेतान की भाषा नवीन शब्दों के भण्डार से युक्त, प्रतीकात्मकता और चित्रात्मकता से परिपूर्ण व अलंकारो से पुष्ठ है। भाषा की दृष्टि से इनके उपन्यासों में विविध रूप प्रस्तुत किये है।

7.1.1 चित्रात्मकता –

प्रभा जी के उपन्यासों में भाषा के चित्रात्मक रूप की प्रस्तुति परिलक्षित होती है। जैसे 'अग्निसंभवा' में आइवी के शारीरिक रूप का चित्रांकन किया है। "डरिये मत, मेरे सामने वही सुबह वाली ड्राइवर महिला थी......... नीली छींट का चीनी पायजामा और कुर्ता पहने हुए उसके हाथ में मेरा पासपोर्ट फोलियो था। वह आधी अंग्रेजी आधी चीनी में शिव को डांटे जा रही थी.......... और कभी – कभी अपनी आंखो से चूमती हुई अग्नि शलाकाएँ मुझ पर भी फेंक रही थी।"[5]

'आओ पे पे घर चले' में हार्लेम के परिवेश का चित्रांकन किया है। "चमचमाता हुआ शहर धीरे–धीरे गरीब होता जा रहा था। हम लोगों ने दाहिनें एक गली में गाड़ी खड़ी की। उजड़े हुए मकान, जिनके खिड़की दरवाजे गायब थे जगह–जगह ग्रेफिटो लिखे हुए। श्वेत अमेरिकन के खिलाफ नस्लवाद का आरोप। कहीं अब्राहम लिंकन की तस्वीर, साथ में

मार्टिन लूथर किंग। एक मकान के सामने लिखा था – सावधान! यदि तुम गोरे अमेरिकन हो, तो भीतर जान का खतरा है।"[6]

7.1.2 स्वाभाविकता व सहजता से युक्त –

प्रभा जी के भाषा में स्वाभाविकता का समावेश हैं। बड़ी से बड़ी बात को बहुत ही संजीदगी व सहजता के साथ प्रस्तुत करने में उनको महारथ हासिल है। 'स्त्री पक्ष' में वृंदा द्वारा मासिक धर्म के समय उठने वाले विचारों का सहज प्रस्तुतीकरण है। "जीवन को पवित्र बनाना चाहिए, संकल्प की शुद्धि......... किन्तु उन दिनों उसके शरीर से महीने के महीने होनें वाला रक्तस्त्राव शुरू नहीं हुआ था। तब वह पवित्र थी उसका तन मन उसके वश में था। वह घंटो किताब लेकर बैठी रह सकती थी। मगर इन दिनों सबकुछ बदल गया था और उसके शरीर की यह महक? वह पूछना चाहती की क्या औरों को भी उसके शरीर से महक आती है? खासकर उन दिनों में बाथरूम में चाहे कितना भी पानी डालों तब भी अजीब–सी गंध बाथरूम में उसके पीछे ठहर जाया करती।"[7]

7.1.3 शब्द रूप –

प्रभाजी ने पात्र, परिवेश व प्रसंग के अनुकूल शब्दों का प्रयोग किया है। प्रभा जी ने तदभव, संस्कृत, ग्रामीण, बंगाली, अंग्रेजी आदि अनेक शब्दों का प्रयोग अपने उपन्यासों के माध्यम से किया है।

7.1.3.1 अंग्रेजी शब्द –

'आओ पे पे घर चले', 'एड्स', 'अग्निसंभवा', आदि इनके उपन्यास विदेशी पृष्ठभूमि पर आधारित होनें के कारण इनमें हिन्दी के साथ–साथ अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी प्रचुर हुआ है। इनके उपन्यासों में आए अंग्रेजी शब्द निम्न है– सैंडविच, चाइनीच, किचन, विहस्की, सूप, बेड, पास्ता, ज्यूस (भोजन संबंधी), टाई, बेल्ट, जेकेट, अंडरवियर, (वेषभूषा संबंधी), पेंटर फोटोग्राफ, मार्केट, सेंटर, सप्लायर, बिजनेस, लेबर, डिलीवरी, वेटर, रिसोर्ट, साइकोलोजिस्ट (व्यापार संबंधी), चेयरमेन, ऑफिस, फाइल, मैनेजर, मैनेजिंग डायरेक्टर, सेल्स, इनकमटेक्स, रायल्टी, प्रोडक्सन, स्टेटमेंट, सेक्रेटरी, मीटिंग, हेड (ऑफिस संबंधी) गुडमार्निग, ओ के, प्लीज, गुड नाईट, रियली, स्वीट हार्ट, ओह माई गॉड, हेपी बर्थ डे, यू आर नर्वस (संवाद संबंधी) क्लिनिक, न्यूरोटीक, पेशंट, एम्बुलेंस, हायड्रोथैरिपी (चिकित्सा संबंधी) रेड लाईट एरिया, सेक्स्युअल फस्ट्रेशन, बलू क्विन, (सेक्स संबंधी) आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है।

7.1.3.2 गालीसूचक शब्द –

प्रभाजी के उपन्यासों में गाली सूचक शब्दों का प्रयोग भी देखा जा सकता है। स्टूपिड, साला, बार्स्टड, हरामी, रांड, रखैल, कुत्ते की औलाद, सिली गर्ल, कुतिया, कटकनी, हरामजादा, डाइन आदि।

7.1.3.3 अरबी–फारसी शब्दः–

अरबी–फारसी शब्द भी इनके उपन्यासों में मिलते है। दीवार, तकिया, सौगात, बरामदे, राहगीर, शरीफ, मरम्मत, तिजारत, दरख्त, कमान, महसूस, अंबार आदि।

7.1.3.4 राजस्थानी, बंगाली व भोजपुरी –

प्रभा जी का 'छिन्नमस्ता' मारवाड़ी परिवेश पर आधारित होनें के कारण उसमें राजस्थानी शब्दों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में हुआ है– "ए बाई, आको तो पूरा इलाज कारानों पड़सी कल सगाई – ब्याह होनों मुश्किल हो जासी! छोरी की जात।"[8]

'तालाबंदी' उपन्यास में बंगाली शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है। बंगाली मास्टर हरिनारायण चट्टोपाध्याय के शब्द है– "ऐशो बाबा, ऐशो! छात्रो होये, ऐशे छो, एइजोने तुमी कोरे डाकछी।"[9]

'छिन्नमस्ता' में भोजपुरी शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। "अरे मोर बचवा, बड़ा अनर्थ हो गईल, बड़ा बाबू का ऑफिस में हार्ट फेल हो गईल। हमारा देवता जैसन मालिक नाही रहिले......... अरे भगवान! ई का जुलुम करिल रे..... ?"[10]

7.1.3.5 ग्रामीण शब्द –

प्रभा जी के उपन्यासों में ग्रामीण शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। बाणिया, मायका छोरा, चूरमा, दाल, लुगाई, कादा, दिसावरी, अईया, पोमचा, बन्ना, मत्तेई, तगड़ी, पीसा, देवगा, राखण, मतीरा आदि।

7.1.4 मुहावरे व लोकोक्तियाँ –

प्रभा जी ने अपनी भाषा की प्रवाहकता बढ़ाने व भावों को सुन्दर रुप में प्रस्तुत करने हेतु मुहावरे व लोकोक्तियों का प्रयोग भी अपने उपन्यासों में किया है। जैसे कलेजा मुँह को आना, पसीना–पसीना होना, खरी खोटी सुनाना, रामजी की माया, ढाई सैर से तो कम खाती नहीं, सीर पर भूत सवार होना, सौ कुपातर से एक सुपातर ही घना, छाती पर पत्थर रखना, पंचायती करना, एक म्यान में दो तलवार, रांड का जाया तू मेरा धन छुकर तो देख आदि।

7.1.5 सांकेतिक भाषा –

लेखन कार्य में कभी–कभी भावों का प्रवाह संकेतों के माध्यम से भी होता है। प्रभा जी के उपन्यासों मे सांकेतिक भाषा का प्रयोग हुआ। 'स्त्री पक्ष' उपन्यास में वृंदा के मासिक धर्म के आगमन को संकेतों द्वारा वर्णित किया है– "उन दिनों सबकुछ बदल गया था और उसके शरीर की यह महक? वह पूछना चाहती की क्या औरों को भी उसके शरीर से महक आती है? खासकर उन दिनों में। बाथरूम में चाहे कितना भी पानी डालों .... तब भी अजीब सी गंध बाथरूम में उसके पीछे ठहर जाया करती।"[11]

'आओ पे पे घर चले' की आइलिन के अकेलेपन को भी संकेतों के द्वारा उजागर किया है– "आइलीन हर रात कुर्सी पर पड़ी शराब की खुमारी में मत्त बेहोश क्यों रहती है? केवल टी.वी. की आवाजों के माध्यम से उसे घर में संवाद जारी रखता है।"[12]

'छिन्नमस्ता' उपन्यास में नरेन्द्र के वहशीपन को संकेत के माध्यम से प्रस्तुत किया है– "मैं सचमुच घबरा गई। केवल रात के प्रथम प्रहर में ही नहीं बल्कि रात में दिन में शाम को वक्त बेवक्त कभी भी। पार्टी के लिए तैयार होकर हम निकलने वाले होते की वह वापस कमरे में घसीट लेता।"[13]

7.2 शिल्प विधि –

शैली एक सिंद्धांत है जिसके माध्यम से लेखक अपनी सोच को गहराई में उतारकर अपने मन के अंतःकरण के भावों का उद्‌घाटन करता है। अर्थात शैली अनुभव पर आधारित है। उपन्यास के क्षेत्र में शैली का महत्वपूर्ण स्थान है। शैली के माध्यम से ही साहित्यकार अपने विचारों व भावों को अभिव्यक्ति कर सकता है। हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में शैली के अनेक रूप है। विश्लेषणात्मक, वर्णनात्मक, प्रतीकात्मक, आत्मकथात्मक आदि शैलियों के रूप हैं। डॉ. प्रभा खेतान के उपन्यासों में वर्णनात्मक, आत्मकथात्मक, पूर्वदीप्ति, काव्यात्मक, पत्रात्मक आदि शैलियों का प्रयोग हुआ है।

7.2.1 वर्णनात्मक शैली –

प्रभाजी के उपन्यासों में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग सर्वाधिक रूप से हुआ है। उन्होंने उपन्यासों में पात्र व परिवेश का चित्रण करने व अनुभवों को व्यक्त करने में वर्णन शैली का प्रयोग सहजता के साथ विशेष रूप से किया है।

'आओ पे पे घर चले' में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग करते हुए आइलिन के स्वरूप को उजागर किया है– "कद पाँच फीट के करीब। इकहरा बदन। लाल बालों का बया का घोंसला सर पर। कानों में सोने के बड़े–बड़े कुण्डल। गले में सोने की आठ–दस रकम की छोटी बड़ी लड़ियाँ। बायी हथेली की चारो उँगलियो में अंगूठिया। दाहिनें हाथ में केवल

मध्यमा में तीन नग। गले में सुर्ख लाल स्कार्फ। झुरियों से भरे चेहरे के ऊपर दो दीपदिपाती नीली आंखे, मस्करा और काजल से भरी हुई।"[14]

'पीली आँधी' में राजस्थानी लोगों का जीवन व उनका ग्रामीण परिवेश, मारवाड़ी लोगों के अपना स्थान छोड़ अन्य जगह पर बसने की व्यथा, पानी पाने की तृष्णा, अकाल व रजवाड़े परिवार के विलासी जीवन आदि का वर्णनात्मक शैली में चित्रण किया है।

'छिन्नमस्ता' में प्रिया के बचपन, अम्मा का रोब, संपन्नता से लब्ध दिखावे का जीवन, प्रिया के प्रति उपेक्षित भाव, किलों के भीतर सजी दुकानें व रेस्टोरेन्ट आदि का सूक्ष्मता से वर्णन किया है। प्रिया अपने बचपन के बारे में लिखती है– "कैसा अनाथ बचपन था। अम्मा ने कभी मुझे गोद में लेकर चूमा नहीं। मैं चुपचाप घंटो उनके कमरे के दरवाजे पर खड़ी रहती शायद अम्मा मुझे भीतर बुला ले। शायद....... हा शायद अपनी रजाई में सुला ले। मगर नहीं एक शाश्वत दूरी बनी रही हमेशा हम दोनों के बीच। अम्मा मेरी बातों को समझ नहीं पाती थी।"[15]

'अग्निसंभवा', 'आओ पे पे घर चले', 'एड्स', 'छिन्नमस्ता', इन उपन्यासों में नारी के अकेलेपन, उनकी व्यथा, व्यवसाय से उत्पन्न समस्या से ग्रस्त, आधुनिक नारी, विदेशी नारी का जीवन आदि का वर्णन बड़ी संजीदगी के साथ किया है।

7.2.2 आत्मकथात्मक शैली –

प्रभा जी के 'तालाबंदी', 'आओ पे पे घर चले', 'अपने–अपने चेहरे', 'छिन्नमस्ता', 'अग्निसंभवा' आदि उपन्यासों में आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। 'तालाबंदी' उपन्यास के पात्र श्यामबाबू स्वयं प्रभा के जीवन से चरित पात्र है। इन्होंने अपने व्यवसाय से जुड़े अनुभवों को आत्मकथात्मक शैली के द्वारा प्रकट किया है। 'आओ पे पे घर चले' की पात्र प्रभा स्वयं प्रभा खेतान है। प्रभा ब्यूटी थैरेपी का कोर्स करने अमेरिका जाती है। वहाँ विदेशी संस्कृति से संघर्ष व सहयोग को तथा विदेशी औरत के जीवन की पीड़ा व घुटन को आत्मकथात्मक शैली में वर्णित किया है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास में विवाह से पूर्व की कहानी प्रभा जी के जीवन की सच्ची दासता है। प्रिया उपन्यास की पात्र स्वयं प्रभा के जीवन का पात्र है। प्रिया द्वारा भोगा उपेक्षित बचपन प्रभा जी के द्वारा भोगे हुए जीवन की सच्ची घटना है।

'अग्निसंभवा में आइवी के माध्यम से अपने व्यवसाय जगत से संबंधित समस्याओं व विश्व स्तर पर नारी के संघर्ष को चित्रित किया है। "आइवी पहले पहल उससे कब मिलना हुआ था? आज से कोई दस साल पहले व्यापार के वे शुरू के दिन थे, बिल्कुल ताजा, हर अनुभव के लिए उत्सुक मन।"[16]

'अपने–अपने चेहरे' की रमा के माध्यम से प्रभाजी ने दूसरी औरत के बारे में उत्पन्न अन्तर्द्वन्द्वों को आत्मकथात्मक शैली में उभारने की कोशिश की गई है, "मेरे बारे में लोग इतनी बकवास करते है। इतनी अधिक की कभी–कभी आईने में अपना चेहरा देख में चौंक जाती हूँ। यह क्या मेरा चेहरा है? यह क्या मैं हूँ। अपने बचाव में मेरे पास अब और कोई शब्द नहीं बचे है। भीड़ में लोगों के बीच मेरे गाल सुलगने लगते है, आवाज लड्खड़ाने लगती है, घबराई हुई आँखे किसी कोनें की तलाश करने लगती है। मुझे पता नहीं, कौन मुझसे बात करेगा और कौन नहीं? मेरे अपने परिचित आँखे बचाकर निकल जाते है, मैं एक दूसरी औरत हूँ। मेरी किस्म घटिया है।"[17]

7.2.3 पूर्वदीप्ति या फ्लेश बैक शैली –

फ्लेश बैक शैली से तात्पर्य बीते जीवन को स्मृति के माध्यम से प्रकाशित करना। किसी भी रचना में पात्रों की स्मृतियों, घटनाओं की पुनरावृति हेतु फ्लेश बैक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। प्रभा जी के उपन्यास 'छिन्नमस्ता', 'पीली आँधी' व 'आओ पे पे घर चले' में पूर्वदीप्ति शैली का वर्णन हुआ है। इस उपन्यास में प्रिया अपने बचपन, यौवनावस्था, विवाह से संबंधित घटनाएँ व नरेन्द्र से बिछोड़ का समय आदि सभी घटनाओं को स्मृत करती है– "मैं स्मृतियों की पगडंडी पर सम्हाल–सम्हालकर कदम रख रही हूँ। कभी आँचल झाड़ियों से उलझता है, कभी पैरों में नुकीले पत्थर चुभते है कभी सामने कोहरे के बादल...... . सामने कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता....... और कभी पैरों के नीचे ओस की बुँदे, मुझे मेरे आँसूओं की याद दिलाती है।"[18]

'पीली आँधी' में तीन पीढ़ियों की व्यथा का चित्रण पूर्वदीप्ति शैली में किया गया है। इस शैली के प्रयोग के कारण किसी भी रचना में नाटकीयता के स्वरूप को देखा जा सकता है। दो पीढ़ियों से संबंधित कहानी लेखिका ने अपनी माँ के द्वारा सुनी थी– "कहानी को यही विराम देना पड रहा है इसलिए की इतनी भर कहानी मैंने अपनी अम्मा से सुना था। माँ की धर्म बहन थी– राधाबाई। उस लिहाज से राधा बाई के दोनों बेटे, माधोदास जी रुंगटा तथा सावर मल्लजी रुंगटा उनके भानजे हुए। होली दिवाली वर त्यौहार आना जाना लगा रहता। बचपन में प्रायः मैं झरिया वाले रुंगटा परिवार की चर्चा सुनती"।[19]

'तालाबंदी' उपन्यास में भी श्यामबाबू के द्वारा व्यवसाय जगत से संबंधित स्मृतियों को उजागर करने में पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया गया है। 'आओ पे पे घर चले' में प्रभा जी के द्वारा आइलिन की यादों को उजागर किया है। "आइलिन! तुम आज इतनी क्यों याद आ रही हो इतने बर्षों बाद? आज 31 दिसम्बर की रात है। ऐसी ही वह रात थी। हम दोनों

नये वर्ष के आगमन की खुशियाँ मना रही थी। तुम्हारे किचन में तुम्हारे साथ डांस करते हुए उस रात में बहुत–बहुत नाराज हो रही थी।"[20]

7.2.4 पत्रात्मक शैली –

प्रभा जी ने अपने उपन्यासों 'अपने–अपने चेहरे', 'अग्निसंभवा', 'पीली आँधी' में पत्रात्मक शैली का प्रयोग किया है। 'अपने–अपने चेहरे' उपन्यास में रीतु अपने माता–पिता को पत्र लिखकर अपने दर्द से अवगत कराती है– "मम्मी बहुत दिनों से लिखना चाह रही थी पर लिखने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। ...... मम्मी मुझे वापस बुला लीजिए।

आपकी रीतु।"[21]

'पीली आँधी' उपन्यास में एक पत्र चित्रा द्वारा सुजीत को लिखा गया है जिसमें वह सूजित को इस बात से अवगत कराती है कि उसने सूजित व सोमा के बेटे को कानूनी तौर पर गोद ले लिया है। उदा० – "सुजीत और सोमा, मुझे खोजने की व्यर्थ चेष्टा मत करना। तुम लोगों को छोड़कर जाते हुए मुझे दुख हो रहा है। मुझे मालूम है कि, दुख तुम्हें भी होगा। लेकिन अर्जुन मेरा बेटा है। वह सेन है। कानूनी तौर पर हम लोगों ने उसे गोद लिया है। सोमा का कुल गोत्र अब तुम्हारा कुलगोत्र है। सोमा वह नहीं है जो केवल समर्पण की भाषा जानती है। इस पत्र को सुरक्षित रखना और इन कागजों को भी। ताकि अर्जुन पर किसी की छाया न पड़े

चित्रा।"[22]

'अग्निसंभवा' में आइवी के पुत्र वुंग के द्वारा लिखे गए पत्रों के द्वारा चीनी क्रांति का वर्णन उपन्यास में किया गया हैं। वुंग को अपनी मातृभूमि से बहुत जुड़ाव था। इस कारण क्रांतिकारी दल का सदस्य बनता है और क्रांति के दौरान उसकी मृत्यु हो जाती है। "माँ, हम एक वैचारिक संक्रांति से गुजर रहे है। मैं एक छोटे से दल का सदस्य हूँ। मुझे तुम्हें पहले लिखना चाहिए था, नहीं लिखा। तु बिना बात के परेशान होती। पर अब हमें बोलना होगा। हमें चाहिए वैचारिक स्वतंत्रता। पार्टी के शिकंजे से प्रेस की मुक्ति। हम चाहते है वास्तव का जनतंत्र। जनता का राज। ताकि नौकरशाही का जुल्म और भ्रष्टाचार खत्म हो। ...... पर क्या केवल आर्थिक उन्नति ही काफी है? सूचनाओं के संसार में हम वैचारिक रूप से पंगु रह जाये।...वे केवल डॉलर की महत्वाकांक्षा समझते है, यह दूसरी अति है। वैचारिक विकास ही समन्वय ला सकता है।

चिंता मत करना, मेरा प्यार तेरे साथ है।

वुंग।"[23]

7.2.5 डायरी शैली –

डॉ. प्रभा खेतान के उपन्यास 'पीली आँधी' में डायरी शैली का वर्णन स्पष्ट रूप से प्राप्त होता है। 'पीली आँधी' उपन्यास का समापन ही सोमा के द्वारा डायरी के पढ़ने पर समाप्त होता है। पद्मावती की मृत्यु के बाद सोमा को एक डायरी मिलती है जिसमें पद्मावती और पन्नालाल सुराणा के आदर्श प्रेम व ताईजी की गहरी संवेदना का वर्णन मिलता है। उदा.– "मैं कुछ नहीं देख पा रहा था, मेरी आंखो के सामने बस केवल तुम हो पद्मावती, केवल तुम। पिछले दो वर्षों से दिन–रात, हर वक्त मैंने बस केवल तुम्हारे बारे में सोचा है। उस क्षण के बारे में सोचा है। जब पहले पहल देखा था।"[24]

'अपने–अपने चेहरे' उपन्यास में डायरी शैली का वर्णन मिलता है। 'रमा' द्वारा लिखी गई डायरी के माध्यम से प्रेम का अंधापन, प्रेम संबंधों के प्रति समाज का रवैया व समाज के खोखलेपन को उजागर किया हैं। उदा. "यह कैसा समाज है और कितने सतही लोग। प्रत्येक दूसरे के लिए उपेक्षा। भीड़ में नीचे कंधो से ऊपरी कंधो पर उछालते हुए सुविधावादी लोग। सिद्धांतो की आड़ में मानवीय संवेदना को चबाते हुए जो पिच्च से संबंधों को थूक देते है। नहीं, मुझे इस माहौल से घृणा नहीं होती, बस एक ठंडी उपेक्षा आ गई है मन में। क्या इसलिए की मैं इनसे आहत हूँ, त्रस्त हूँ? इनके ऊंचे कद से आंतकित हूँ? नहीं, इनके पास आदर्श नहीं केवल शब्दों के गुब्बार है। विद्रोह के झाग है। अपने से भिन्न जो कुछ है उसे मिटाकर रख देंगे, इसका दंभ है।"[25]

7.2.6 काव्यात्मक शैली –

प्रभा खेतान ने अपने उपन्यासों में काव्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। 'पीली आँधी', 'छिन्नमस्ता' में काव्यात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। 'छिन्नमस्ता' उपन्यास की प्रिया गौरेया से काव्यात्मक भाषा का प्रयोग करते हुए बात करती है– "अले–अले गौलेया! बता तो, तू आज कहाँ–कहाँ होकर आई? औल उस कौवे को देखकल क्यों डल गई थी? कुछ खाया तूने? क्या खाती है तू? बोल न मेली चिड़िया।"[26]

'पीली आँधी' उपन्यास में माधो की मृत्यु होने पर उपस्थित वातावरण का चित्रण काव्यात्मक शैली में किया गया है। "पूरब वाली खिड़की के बाहर बड़ का पेड़ कांप रहा था और फिर हवा के साथ झड़ते हुए पत्ते जमीन पर बिछते चले गए। एक उदास धुएँ से भरी हुई रात ठहर गई थी। हवा ने सिसकी लेकर फिर वापस बहना शुरू किया। धमनियों में रेगंता हुआ खालीपन था। बहता हुआ दुख कुछ रुक गया था। कमरे के फर्श पर बाहर की उजास रोशनी बिछी हुई थी। विदाई के समय कुछ सांवले बादल कुछ और छितर गए थे और फिर बढ़ता हुआ अंधेरा, सब को अपनी बाहों में समेटता हुआ अंधेरा था। सब कुछ

कितना निःशब्द और खामोश हो गया, क्योंकि बस अभी–अभी एक आदमी बिल्कुल साधारण आदमी सबके बीच से उठकर हंमेशा के लिए चला गया।"[27]

7.3 प्रतीकात्मकता और बिम्बधर्मिता –

7.3.1 प्रतीकात्मकता –

प्रतीक अर्थ को अधिक संवेदना व सार्थकता के साथ प्रकट करने का एक शब्द रूपी अनुष्ठान है। भाषा की संवेदना को अधिक प्रभावी बनाने हेतु इसका प्रयोग लक्षणा व व्यंजना शक्ति के रूप में होता है। प्रतीकों का प्रयोग उन विचारों और अनुभूतियों को स्पष्ट करने के लिए होता है, जो धुँधली और अस्पष्ट होने के कारण सहज रूप से सम्प्रेषित नहीं होती है। प्रतीकों के माध्यम से कथ्य के अर्थ को अधिक सम्बल प्राप्त होता है। डॉ. प्रभा खेतान ने भी अपने उपन्यास 'स्त्री पक्ष', 'तालाबंदी', 'आओ पे पे घर चले', 'पीली आँधी', व 'छिन्नमस्ता' में प्रतीकों के माध्यम से अपनी अनुभूतियों व संवेदनाओं को पाठकों के सम्मूख रखने का एक प्रयास किया है।

'पीली आँधी' उपन्यास में पीली आँधी मानव के अस्तित्वहीन होने के प्रतीक के रूप में वर्णित है– "यह एक पीली आँधी थी जिसमें मारवाड़ी परिवार पत्तों की तरह उड़ते हुए बंगाल, बिहार में पहुँचकर दम लेते थे और कठिन श्रम, पारस्परिक सहयोग तथा राजनीतिक सामाजिक टकराहटों से बचते हुए अपने लिए सम्मानपूर्ण जगह बनाते थे।"[28]

'तालाबंदी' उपन्यास में श्यामबाबू एक वर्ग – विशेष के प्रतीक बनकर सामने आये है। वह शेखर दा को मार्क्सवादी आंदोलन के बार में बताते हुए कहते है कि– "मैं तो प्रतीक हूँ शेखर दा, एक विशिष्ट वर्ग का प्रतीक। मेरी चेतना जड़ है। मैं शोषक हूँ, आदमी का खून चूसने वाला।"[29]

'आओ पे पे घर चले' में पे पे मानव की संवेदना का प्रतीक बनकर उभरा है। आइलिन के लिए पे पे उसके अकेलेपन का साथी है और उसका बेटा भी। आइलिन के दुखी होनें पर वह उसकी संवेदना को प्रकट करने का माध्यम भी है। आइलिन पे पे के समक्ष अपने मार्मिक भावों को अभिव्यक्त करती है – "नहीं मेरे बच्चे मत रो, मेरे पे पे किसी को हमारी जरूरत नहीं, किसी को नहीं।......... सबको हमारी नीयत पर शक है, लेकिन हमने किसी का क्या बिगड़ा? किसके यहाँ डाका डाला? किसी से कुछ मांगने गए?।"[30]

'अग्निसंभवा' में आइवी का चरित्र पीड़ित नारी के प्रतीक के रूप में उभर कर आया है। आइवी से जब उसका मातृत्व छीन लिया जाता है तो उसका विद्रोह एक पीड़ित नारी के प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है – "मेरा मन करता है ऐसी ही किसी दूसरी छत पर खड़ी होकर चिल्लाउ, कसाइयों तुम लोगों ने मेरे बेटे को मार दिया.......... मैं चीखू।

इतनी जोर से ताकि दुनिया मेरी पीड़ा समझे। मैं अपने दुख को समुद्र की लहरों पर सवार होकर वहाँ पहुँचना चाहती हूँ जहा मेरे दर्द को कोई समझ सके। सब भूल जाते है। सब लोग कोई तो मेरे बच्चे को याद नहीं करता।"[31]

'एड्स' में युद्ध मनुष्य की दानवता का प्रतीक बनकर उभरा है। उपन्यास में कूकु युद्ध से नफरत करती हुई प्रभा से कहती है– "प्रभा तुम्हारी बात मानती हूँ लेकिन आदमी मरता है तो मारता भी है। क्या बुश और सद्दाम आदमी नहीं? लेकिन ये बेचारे निरीह पशु–पक्षी। इस चिड़िया ने किसी का क्या बिगड़ा है? और यह समुद्री गर्ग में रहने वाला आदिवासी कछुआ?।"[32]

'अपने–अपने चेहरे' में 'खूँटे से बंधी गाय को एक गुलीम के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। रमा एक विवाहित पुरुष से संबंध रखने पर अपने को दूसरी औरत की श्रेणी के रूप में महसूस करती हुई विचार करती है– "यह कैसा समाज है, औरत बस खटाल में बंधी गाय की तरह डकारती रहे। खुद मैंने ही क्या किया अपनी जिन्दगी में? एक अफेयर और वह भी कितना अधकचरा? बस दो पैसे कमाये और स्टेपिनी की तरह सेठ की गाड़ी में पड़ी रही, वक्त जरूरत काम पर आने के लिए।"[33]

7.3.2 बिम्बधर्मिता –

बिम्ब एक प्रकार की कलात्मक प्रतिभा है। जब लेखक की कल्पना शब्दों के माध्यम से मूर्त रूप धारण कर वर्ण्य विषय का सजीव चित्रण करती है तो बिम्ब का अहम योगदान होता है। मधुसूदन पाटिल के अनुसार– "सृजन की बेला में अनुभूतियाँ कल्पना का सहारा लेकर बिम्ब निर्माण में अपना योगदान देती है और साहित्यकार बिम्बों के माध्यम से उन्हीं बिम्बों को सहृदय तक प्रेषित करता है जिन्हें उसकी कल्पना अनुभूतियों के स्तर पर ग्रहण करती है। ... बिम्ब निर्माण में प्रधानता प्रत्यक्ष अनुभवों की ही रहती है। लेकिन कभी–कभी प्रत्यक्ष अनुभव के अभाव में भी कल्पना के द्वारा संवेदना के स्तर पर उनसे साक्षात्कार कर लिया जाता है।"[34] स्पष्ट है कि बिम्ब शब्द चित्र ही नहीं, बल्कि शब्द–चित्रों के साथ–साथ अमूर्त भावनाओं व विचारों को संवेदना ग्राह्य बनाता है। बिम्ब विधान के द्वारा कथावस्तु की संवेदना का साक्षात्कार होता है। प्रभा जी ने भी बिम्ब की इसी सर्जनात्मक शक्ति के द्वारा अपने उपन्यास साहित्य को अधिक संवेदात्मक व संप्रेषणीय बनाया है।

प्रभा जी के बिम्ब विधान उनकी सृजनात्मक प्रयोजन के साथ एकाकार है। बिम्ब विधान अमूर्त होने के साथ–साथ मूर्तरूप में भी विध्यमान होते है। बिम्ब देशकाल व वातावरण, चरित्र व स्थितियों के संदर्भ में घटनाओं को जीवन्तता प्रदान करते है। प्रभा जी

भी बिम्बों के माध्यम से अपनी संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने में समर्थ है। उनके उपन्यासों में बिम्बों का प्रयोग सहज रूप से परिलक्षित होता है।

7.3.2.1 घ्राण्य बिम्ब –

"अभी बरसात के कारण मिट्टी की सोंधी महक नथुनों में समा रही है।"[35]

"लेकिन कुआँ तो आधा हो ही गया अब तो पानी लाने के लिए पाँच सात कोस जाना आना पड़ता है। गाय बछड़ो की ओर तो देखा नहीं जाता, उसकी पीठ पर जगह–जगह घाव हो गये है। उस पर धोतली गाय उठकर खड़ी नहीं हो पा रही है। घाव पर मक्खियाँ भिनभिनाती रहती है।"[36]

7.3.2.2 स्पर्श बिम्बः–

"उस दिन न मुझे ग्लानि महसूस हुई और न ही जुगुप्सा। पुरुष का स्पर्श इतना मादक होता है इतना सुखद।"[37]

"उस रात बिस्तर में अपनी देह के प्रति यह पूरी तरह समर्पित था। उसकी कनपट्टियों पर आग दहक रही थी। उसका रेशा–रेशा कुछ चाह रहा था। जो उसे उपलब्ध नहीं हो सकता था।"[38]

7.3.2.3 दृश्य बिम्ब –

"चमकता हुआ शहर धीरे–धीरे गरीब होता जा रहा था। हम लोगों ने दाहिनें एक गली में गाड़ी खड़ी की। उजड़े मकान, जिनके खिड़की दरवाजे गायब थे, जगह–जगह ग्रेफिटो लिखे हुए। खेत अमेरिकन के खिलाफ नस्लवाद का आरोप। कहीं अब्राहम लिंकन की तस्वीर, साथ में मार्टिन लूथर किंग। एक मकान के सामने लिखा था– सावधान! यदि तुम गोरे अमेरिकन हो तो भीतर जान का खतरा है।"[39]

"मैंस, और मेरे पिता, मेरा छोटा भाई जहाज पर चढ़ने की तैयारी में खड़े थे। भागने वालों की एक लंबी कतार थी। वह जनवरी का महिना था। बर्फ गिर रही थी। पापा आगे खड़े एक कोट में ठिठुर रहे थे। तब तक एक, रूसी सैनिक आया। पापा से उसने कोट मांगा तुम सोचो, वह पुराना मैला कोट भी शरीर पर नहीं रह सका। सैनिक ने तलवार से पापा की गर्दन काटी, कोट उतारा, उसने खून से रंगा हुआ गीला कोट पहना और थूककर चला गया।"[40]

7.4 कथ्यपरक संश्लिष्टता –

किसी भी साहित्य सृजन हेतु कथानक सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व होता है। कथावस्तु के बिना उपन्यास लेखन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। डॉ. प्रतापनारायण टंडन लिखते है– "कथानक उपन्यास का मूल ढांचा होता है। जिस पर उपन्यास रूपी विशाल

भवन का निर्माण किया जाता है।" अर्थात कथानक के माध्यम से मानव जीवन से संबंधित विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया जाता है।

डॉ. प्रभा खेतान ने अपने उपन्यासों में भारतीय संस्कृति व विदेशी संस्कृति में नारी की यातनाओं व संघर्ष के ताने–बाने को कथासूत्र में पिरोया है।

7.4.1 आओ पे पे घर चले –

'आओ पे पे घर चले' उपन्यास प्रभा द्वारा विदेशी संस्कृति में भोगे हुए अनुभवों पर आधारित है। प्रभा जी को स्टूडेंट एक्सचेंज प्रोग्राम के कारण ब्यूटी थैरेपी का कोर्स करने हेतु अमेरिका जाने का अवसर मिलता है। वहाँ पर उनकी मुलाकात आइलिन, मिसेस चोपड़ा, मरिल, हेल्गा बेरी, कैथी आदि कई महिलाओं से होती है और उनके सान्निध्य में आने पर प्रभा विदेशी नारियों के जीवन के दर्द, पीड़ा व उनके जीवन की भयावह सच्चाईयों से अवगत होती है। तब उन्हें महसूस होता है कि– "यह परायी जमीन है पर आदमी तो सब जगह एक सा है, वही सुख–दुख के लम्हें वही नाते।"[41]

'आओ पे पे घर चले' उपन्यास का सम्पूर्ण कथानक लॉस, एजेल्स, सेंटलुईस व न्यूयोर्क में क्लारा ब्राऊन, कैथी, आइलिन, हेल्गाबेरी, मरिल आदि के जीवन के इर्द–गिर्द घूमता है। इस उपन्यास में आर्थिक रूप से सबल नारी, मशीनी जीवन जीने को मजबूर नारी, अकेलेपन से ग्रस्त व पीड़ित नारी का वर्णन किया है। मानव के बीच रहते हुए आइलिन नाम की महिला अपनी संवेदना को पे पे नाम के कुत्ते के सामने व्यक्त करती है। दूसरी महिलाएँ परिवार के होते हुए भी अकेली व असहाय है। विदेशो में सभी रिश्ते की नींव आर्थिक स्तर से जुड़ी है। इसी संदर्भ में उपन्यास में मरिल कहती है– "यहाँ पैसा है लेकिन जीवन नहीं। जीवन है तो बिखरा हुआ। कोई किसी का नहीं। सारे नाते–रिश्ते दैहिक देह से परे शून्य।"[42] अंत में प्रभा ब्यूटी थैरेपी का कोर्स कर विदेशी संस्कृति का अनुभव लेकर भारत आ जाती है। इस उपन्यास के द्वारा प्रभा जी का उद्देश्य विदेशी जमीन पर जीवन जीने वाली नारियों के जीवन से अवगत कराना है। अतः स्पष्ट है– "आओ पे पे घर चले' का वस्तु विन्यास और कथ्य बड़ा मार्मिक है। शिल्प संयोजन अभिनव है। यह कथा सिर्फ अमेरिकी औरत की नहीं, अपितु वैश्विक स्त्री की कथा है।"[43]

7.4.2 तालाबंदी –

'तालाबंदी' उपन्यास में अर्थ व्यवस्था से जुड़े ताने–बाने को कथासूत्र में पिरोया है। इस उपन्यास में मालिक व मजदूर के मध्य संघर्ष, व मजदूरों के जीवन की व्यथा को

दर्शाते हुए उनसे सहानुभूति को प्रकट किया गया है। इसके साथ–साथ श्यामबाबू के आंतरिक द्वंद तथा उनके पारिवारिक रिश्तों के मध्य पनपते तनाव व संघर्ष को भी उजागर किया है।

इस उपन्यास में मेहनती व्यक्ति श्यामबाबू के द्वारा फैक्टरी को चलाने में अपनों के द्वारा दी गई परेशानियों से लड़ते हुए अपनी सुझबुझ के माध्यम से अपने फैक्टरी को बचाने की सफलता के संघर्ष को दर्शाया है तथा व्यवसाय में मालिक व मजदूरों के मध्य संबंधों में सुधार की आशा के साथ स्वच्छ समाजवाद की स्थापना के उद्देश्य को अंकित किया है।

7.4.3 छिन्नमस्ता –

'छिन्नमस्ता' उपन्यास नारी के जीवन की त्रासदी व संघर्ष की गाथा है। प्रभा जी ने स्पष्ट किया है कि आज के आधुनिक समाज में नारी की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया है। आज भी पुरुष नारी को केवल भोग की वस्तु ही मानता है तथा समाज में आज भी पुरुषों का अहम ही सर्वोपरि है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास एक मारवाड़ी परिवेश में सम्पन्न परिवार में जन्मी प्रिया के जीवन की उपेक्षा व संघर्ष की कहानी है। जन्म से ही अपने परिवार द्वारा उपेक्षित व पीड़ित प्रिया को विवाह पश्चात भी उन्हीं समस्याओं से अवगत होना पड़ता है। तब प्रिया इन सब से बाहर निकल व्यवसाय को अपनी पहचान बनाती है तथा जीवन में नई ऊंचाईयों को छूती है।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास में उपन्यासकार ने प्रिया के माध्यम से उपेक्षित व यातनाओं से भरे जीवन को त्याग आर्थिक रूप से सबल व स्वाभिमान से जीवन जीने वाली नारी को उजागर किया है तथा प्रस्तुत उपन्यास द्वारा इस बात को भी स्पष्ट किया है कि पारिवारिक व दाम्पत्य संबंधों तथा आदर्श मूल्यों को बनाये रखने का दायित्व स्त्री का ही नहीं बल्कि पुरुषों का भी हैं।

7.4.4 अपने–अपने चेहरे –

'अपने–अपने चेहरे' उपन्यास रमा नाम की स्त्री के अधूरे प्रेम, उसके आत्मंथन व नारी के अस्तित्व की सार्थकता की कहानी है और साथ–साथ में मारवाड़ी परिवेश व उनके समाज की संस्कृति को भी उभारा गया है। रीतु, मिसेज गोयनका, कुणाल, मिस्टर गोयनका व रमेश से संबंधित प्रासंगिक कथाओं का ताना बाना भी बुना गया है।

यह उपन्यास रमा के एक विवाहित पुरुष से प्रेम करने व सम्पूर्ण रूप से समर्पित भाव द्वारा अपना धर्म निभाने पर भी अपने अस्तित्व को पहचान दिलाने में असमर्थता को उजागर किया है। रमा को अपनी गलती का एहसास होता है परन्तु बहुत देर बाद।

इसलिए वह कहती है– "स्त्री की तलाश सिर्फ पुरुष नहीं है।...... वह प्यार तो एक बार करती है। बस एक बार एक ही पुरुष से। कभी शादी के बाद कभी शादी के पहले। इसके बाद तो वह अपने आपको झेलना सिखाती है।"[44] अतः यह उपन्यास पूर्णतः नारी के अन्तर्द्वन्द्व, घुटन व स्त्री दासता की कथा है।

7.4.5 पीली आँधी –

'पीली आँधी' उपन्यास में मारवाड़ी परिवार की तीन पीढ़ियों के उतार–चढ़ाव व उनके बसने व उजड़ने का वृतांत है। इस उपन्यास में विलासी राजा के अत्याचार, लोगों के मध्य असुरक्षा की भावना, व तत्कालीन परिवेश में व्याप्त भूखमरी व अकाल जैसी समस्याओं को उजागर किया है।

इस उपन्यास में विवाह के अनेक रुप जैसे अनमेल विवाह, बाल विवाह तथा विधवा के जीवन से संबंधित समस्या को बड़ी संजीदगी के साथ वर्णित किया गया है। इसमें मारवाड़ी परिवेश व उनकी संस्कृति से परिचय कराया गया है तथा मारवाड़ी परिवेश में व्याप्त संयुक्त परिवार की परम्परा, रिश्तों के मध्य पनपती अनबन, गुणी नीरियों का चित्रण भी किया है। इसमें पद्मावती के माध्यम संस्कारवान, समझदार, बुद्धिमान व सुलझी नारी के चित्र को उभारा गया है जो अपनी बुद्धि के दम पर व्यवसाय में उत्तरोत्तर वृद्धि कर अपने सम्पूर्ण परिवार का पालन–पोषण करती है। इसी संदर्भ में अरविंद जैन कहते है– "विवाह, परिवार के विधान और अर्थशास्त्र को समझने व समझाने की दिशा में यह सार्थक और महत्वपूर्ण है।"[45]

7.4.6 अग्निसंभवा –

'अग्निसंभवा' उपन्यास में चीनी महिला आइवी के संघर्ष तथा ह्रदयविदारक दर्द के तानेबाने को कथासूत्र में पिरोया हैं। इसमें एक गरीब किसान की पुत्री, पुत्र वियोग से पीड़ित, अथक परिश्रमी, ईमानदार व महत्वाकांक्षी नारी का चित्रांकन किया गया है तथा साथ–साथ में चीनी क्रांति व क्रांति के परिणामों से भी अवगत कराया है। प्रभा जी ने 'अग्निसंभवा' में आइवी के माध्यम से वैश्विक स्तर पर नारी के संघर्ष व उसके आदर्श को आधुनिक नारी के लिए प्रेरणा हेतु चित्रित किया है।

7.4.7 एड्स –

'एड्स' उपन्यास में एड्स जैसी भयानक बीमारी से ग्रस्त व्यक्ति के जीवन के दर्द व उसकी संवेदनाओं को उजागर किया हैं। इसमे वैवाहिक दंपति जार्ज व सोफिया के मध्य प्रेम, समय के साथ संबंधों में अलगाव, अवैध संबंध व नारी के अकेलेपन से त्रस्त जीवन को

वर्णित किया है। साथ ही व्यापार की बारीकियों व उसमें आनेवाली समस्याओं को भी उजागर किया है।

'एड्स' उपन्यास में विश्व स्तर पर फैली एड्स की बीमारी की भयावहता को उजागर किया है। प्रभाजी ने इस उपन्यास में जार्ज व सोफिया के माध्यम यह संदेश देने का भी प्रयास किया है किसी भी भयानक बीमारी से ग्रस्त दंपति को बुरे समय में एक दूसरे का साथ निभाना चाहिए।

7.4.8 स्त्री–पक्ष –

'स्त्री पक्ष' उपन्यास प्रभा जी का अंतिम उपन्यास है और इसकी सम्पूर्ण कथावस्तु वृंदा के दर्द गिर्द चलती है। वृंदा के उपेक्षित व अनुशासित बचपन से लेकर विवाह व उससे प्राप्त पीड़ा व मर्म की कथा है। इस उपन्यास में मारवाड़ी परिवार के नियम, पुरुषों का छलावा, विवाह के द्वारा धोखा प्राप्त नारी, पति द्वारा प्राप्त आत्मिक पीड़ा, जिम्मेदार माँ आदि का वर्णन किया गया है।

'स्त्री पक्ष' उपन्यास में वृंदा को एक सशक्त नारी के रूप में उभारा गया है जो परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए अपने मेहनत व लगन के बल पर आर्थिक सबलता को प्राप्त करती है और जीवन से जुड़ी सभी जिम्मेदारियों का निर्वाह करती है। इस उपन्यास के द्वारा प्रभा जी ने इस बात को भी उजागर किया है कि आर्थिक स्वायत्तता ही किसी भी रिश्तों की नींव को खोखला करने के लिए जिम्मेदार होती है

निष्कर्षतः –

प्रभा खेतान के सभी उपन्यास नारी पर केन्द्रित है तथा उनमें नारी के जीवन से संबंधित नवीन यथार्थों व भूमिकाओं को कथ्य के रूप में स्थान दिया गया है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में नारी के जीवन से संबंधित अनेक समस्याओं को समाज के सामने प्रस्तुत कर अपनी नवीन दृष्टि का परिचय दिया है तथा उन्होंने अपने उपन्यासों के द्वारा स्त्री व उसके अस्तित्व को समाज में सम्मान व उचित स्थान दिलाने का अथक प्रयास किया है।

7.5 पात्र और उनका चरित्र –

उपन्यास को मानव चरित्र का आख्यान कहा जाता है। उपन्यास का मूल विषय ही मानव का जीवन तथा समाज की संरचना होता है। उपन्यास की आत्मा रूप में मान्य पात्रों की सजीवता ही उपन्यास के उद्देश्य को पाठक तक संप्रेषित कर सकते है। पात्रों की परिकल्पना के बिना उपन्यास के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। इसी संदर्भ में डॉ. सुरेन्द्रनाथ तिवारी कहते है– "उपन्यास में पात्र वह मेरुदण्ड है, जो समग्र

कथा को जीवतंता प्रदान करता है। पात्रों के क्रिया व्यवहार उनके निजी दृष्टिकोण और छोटी–छोटी बातें ही उपन्यास के विराट फलक को गति देती है।"[46]

उपन्यासकर पात्रों के चरित्र–चित्रण के माध्यम से ही जीवन के प्रत्येक रूप को पाठक के सामने उपस्थित कर सकता है। डॉ रवीन्द्र कुमार जैन के शब्दों में– "चरित्र चित्रण वह है जो सच्ची मनोभूमि से उदभूत हो, आंतरिक हो, मुक्त हो, किन्तु जिसमें इतनी सजीवता, स्पष्टता और सहजता भी हो व प्रत्येक पाठक के मनोलोक को भी झंकृत और अंलकृत कर सके।"[47]

चरित्र–चित्रण में स्वाभाविकता, अनुकूलता, यथार्थवादिता, बौद्धिकता आदि गुणों का होना आवश्यक माना जाता है। पात्र तथा उनका चरित्र चित्रण पर उपन्यास का मूल उद्देश्य निहित होता है। जिसके द्वारा उपन्यास की कथावस्तु को गति प्राप्त होती है। डॉ बैचेन लिखते है– "एक मात्र चरित्र या पात्र ही कथा का मेरुदण्ड है। पात्र और चरित्र के इर्द–गिर्द फैली वातावरण परिस्थितियाँ और आवेष्टन ही लेखक या कलाकार के लिए कच्चा माल है। जिसे पक्का बनाकर वह नाटक, कहानी, आख्यायिका, गल्फ, उपन्यास, जीवनवृत, आत्मचरित्र, भ्रमण, वृतांत और महाकाव्य आदि का कलेवर तैयार करता है और उसे सजाता है। कथा का प्रधान लक्ष्य चरित्र चित्रण द्वारा मानव संवेदना को जागृत करना है।"[48] इसी हेतु पात्रों तथा उनके चरित्र चित्रण के अभाव में उपन्यास को अधूरा माना जाता है।

प्रभा जी के उपन्यासों में भी पात्रों के विभिन्न रूप परिलक्षित होते है। उन्होंने अपने उपन्यासों में कथावस्तु के साथ पात्रों के संबंध व समायोजन की सही भूमिका का निर्वाह किया है। प्रभाजी के सम्पूर्ण उपन्यास साहित्य में पात्रों के दो प्रकार विध्यमान है– प्रमुख पात्र और गौण पात्र। जिसका परिचय निम्नानुसार है।

'आओ पे पे घर चले' उपन्यास की मुख्यपात्र है– प्रभा। प्रभा एक आत्मनिर्भर, स्वाभिमानी, स्वावलम्बी व आंतरिक वेदना से आहत नारी है। प्रभा अपने अस्तित्व की पहचान हेतु आर्थिक रूप से स्वतंत्र होकर अपनी जमीन पर अपने मारवाड़ी समाज के सिद्धांतो व विचारों से संघर्ष करना चाहती है। वह स्वाभिमान के द्वारा अपने जीवन को व्यतीत करना चाहती है। इसीलिए मरील द्वारा पुराने कपड़े पहनने को देने पर वह कहती है– "तुम क्या सोचती हो, मैं भिखमंगी हूँ? क्लारा ब्राउन के उतरे हुए कपड़े पहनुंगी? ग्रेटा गारबों से टिप लुंगी? मिसेज डी की सेक्रेटरी की मेहरबानी पर पलुंगी? क्या समझा है तुम लोगों ने? रुपये का अवमूल्यन हो गया, विदेशी मुद्रा हमारे देश से नहीं आ पा रही, पर क्या मेरा कोई आत्मसम्मान नहीं है।"[49]

प्रभा एक निर्भीक व निडर महिला है जो आने वाले खतरों को देखकर घबराती नहीं बल्कि उसका सामना पूरी निडरता के साथ करती है। इसीलिए हेल्गा द्वारा रेस्टोरेन्ट में पार्टनरशिप के ऑफर को मना करते हुए वह कहती है– "तुम चाहे मुझे मिलियन डालर ही क्यों न दो? मुझे जिस समाज का सामना करना है, वह सीधे–सीधे करूंगी। उससे भागकर नहीं।"[50]

प्रभा एक देशप्रेम से सराबोर महिला थी। वह अपने देश के प्रति प्रेम को अपने दिल में बसाये हुए थी। वह कभी पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध को देख उससे आकर्षित नहीं हुई। इसीलिए वह कहती है– "तुम मुझे करोड़ो की दौलत भी दो तो भी विदेश की जमीन पर मैं नहीं रह सकती।"[51]

इस उपन्यास की प्रमुख पात्र प्रभा एक आत्मविश्वासी, निडर, स्वाभिमानी व देशप्रेम से युक्त नारी है जो आर्थिक रूप से स्वतंत्र होकर अपने अस्तित्व को अलग पहचान दिलाना चाहती है।

आइलिन, मिसेज डी क्लारा ब्राउन, हेल्गा, मरील, नैन्सी, लारा डॉ डी, डॉ बेरी, डॉ बैंडले मूर आदि गौण पात्र है। उपन्यास के सारे पात्र अकेलेपन से त्रस्त एकाकी जीवन जीने को विवश है तथा ऐसे जीवन से मुक्ति की तलाश में भटक रहे है।

'तालाबंदी' उपन्यास के मुख्य पात्र है– सुमित्रा व श्याम बाबू। सुमित्रा एक आदर्श बहू, सेवाभावी, कर्तव्यपरायण, कोमल स्वभाव से युक्त एक संवेदनशील नारी है। सुमित्रा प्रेम की प्यासी पति से प्रेम को तरसने वाली नारी है। वह अपने पति से कहती है– "प्यार किये कितने दिन हो गए पता है।"[52]

सुमित्रा निश्छल भाव से युक्त एक दयालु नारी है जो सदैव समझौते के लिए तैयार रहती है। वह एक साहसी महिला है जो अपने पति की हिम्मत को बढ़ाते हुए कहती है– "रुपया तो खर्च होना ही है, होनें दीजिए। कम से कम जान तो बचेगी। मैं क्या कहूँ? मेरी तो हिम्मत नहीं होती, पर ऐसे कैसे अपने घर का जलना देखु।"[53]

इस उपन्यास की सुमित्रा को भावुक, संवेदनशील, समझौतावादी, कर्तव्यपरायण एक सेवाभावी नारी के रूप में उपस्थित कर आदर्शवादी नारी के स्वरूप को उजागर किया है।

तालाबंदी उपन्यास के पुरुष पात्रों में प्रमुख है– श्यामबाबू। श्यामबाबू, मेहनती, महत्वाकांक्षी, दयालु व एक सफल व्यवसायी है। श्यामबाबू के धन लोलुपता की लालसा से युक्त होनें के कारण परिवार से अलगाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। श्यामबाबू एक समझदार व संघर्षशील व्यक्ति है जो अपनी सोच व समझ के माध्यम से फैक्टरी को बचा लेता है और व्यवसाय में अपनी कुशलता व दक्षता को साबित करता है।

अतः श्यामबाबू ने मेहनती, महत्वाकांक्षी, दयालु व कुशल व्यवसायी के रूप में उभर कर कुशल नेतृत्व को भी परिभाषित किया है।

रेवा, पुष्पा, पप्पू, विक्रम, प्रोफेसर हरिनारायण चट्टोपाध्याय, शेखर, अजय आदि गौण पात्र है। इन सभी पात्रों को किसी न किसी रूप में संघर्ष के सहभागी के रूप में चित्रित किया हैं।

'छिन्नमस्ता' उपन्यास की मुख्य पात्र है– प्रिया। प्रिया बुद्धिमान, मेहनती, विद्रोही, दृढ़ निश्चयी, संघर्षशील नारी है। प्रिया का अपने माँ के प्रेम को तरसने वाली तथा उपेक्षित बचपन जीवन जीने के लिए एक मजबूर नारी के रूप में वर्णन किया है। प्रिया को इस उपन्यास में एक शोषित नारी के रूप में वर्णित किया है और उसके शोषण की शुरुआत उसके घर से ही होती है। सबसे पहले वह अपने माँ के द्वारा ही मानसिक रूप से सतायी जाती है। पिता की मृत्यु होनें के बाद अपने ही बड़े भाई के द्वारा शोषण का शिकार होती है। कॉलेज जीवन में अपने प्रोफेसर के द्वारा प्रेम में विश्वास के नाम पर शारीरिक मानसिक रूप से छली जाती है अर्थात बचपन से लेकर विवाह के बाद तक पुरुषों के द्वारा शारीरिक रूप से शोषित होती है। इसी कारण प्रिया के बारे में मालती आदवाणी कहती है– "प्रिया में बहुत से अंतर्विरोध है। बाल्य के बलात्कारों की विभीषिकाओं से आंक्रदित मन सेक्स तथा विवाह से घृणा करता है। वह ठंडी औरत रहकर पुरुष से बदला लेने का निर्णय लेती है।"[54]

प्रिया एक साहसी व संघर्षशील नारी के रूप में उभर कर आई है। प्रिया अपने जीवन की सभी परिस्थितियों का सामना बड़ी हिम्मत के साथ करते हुए घुटन भरी जिन्दगी से मुक्ति को प्राप्त करती है तथा अपनी मेहनत, लगन व कर्मनिष्ठ प्रवृति के द्वारा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन अपने व्यवसाय में उन्नति की राह पर अग्रसर होकर एक नई शक्ति के रूप में उभर कर आती है। इस तरह सशक्त नारी बन वह अपने अस्तित्व को नई पहचान दिलाती है।

इसी हेतु नगमा जावेद प्रिया के व्यक्तित्व के बारे में कहती है– "सारी रूढ़ियों परम्पराओं से लड़ती–भिड़ती वह अंतत अपनी खोई अस्मिता को न केवल प्राप्त करती है बल्कि अपनी अथक मेहनत, लगन और काबिलियत के बलबूते व्यापार के क्षेत्र में भी पुरुषों को बहुत पीछे छोड़कर अपना लोहा मनवा लेती है।"[55]

इस तरह प्रिया साहसी व संघर्षशील नारी के रूप में अपनी परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए सम्पूर्ण नारी जाति के लिए एक प्रेरणा बनकर उभरी है।

कस्तुरी, दाई माँ, मिसेज अग्रवाल, नीना, जुड़ी, तिलोत्तमा, नरेन्द्र, सावरमलजी, अजय, विजय, मिस्टर अग्रवाल, फिलिप, संजु आदि गौण पात्र है। सभी पात्रों को जीवन के अपने–अपने यथार्थों से जूझते हुए दिखाया गया है।

'अग्निसंभवा' उपन्यास की मुख्य पात्र है– आइवी। आइवी एक चीनी महिला है जो मेहनती व महत्वाकांक्षी नारी है। आइवी एक कम शिक्षित नारी है जो माओवादी विचारधारा से बेहद प्रभावित है। इसलिए वह चीन में माओवाद की स्थापना से ही नीली पैंट व कमीज के अलावा कोई भी दूसरा वस्त्र नहीं पहनती है। वह कहती है– "मैं चीन के साथ हूँ मगर हमारे देश में आर्थिक प्रगति होनी चाहिए। यह प्रगति हाँगकाँग ही ला सकता है। बिना आर्थिक प्रगति के कैसा मार्क्सवाद ...?"[56]

आइवी एक देशप्रेमी महिला है जो अपने देश चीन से बेहद प्यार करती है इसलिए वह अपने बेटे को चीन में पढ़ने के लिए भेजती है। आइवी एक भावुक स्त्री व माँ भी है जो अपने बेटे की मौत से टूट जाती है। अपने बेटे की याद में शिव के बेटे का पालन करती है।

आइवी एक बहादुर स्त्री है जो अपने अतीत की यादों को विस्मृत कर वर्तमान में आगे बढ़कर उन्नति की राह पर एक नई उड़ान भरना चाहती है। वह कहती है– "प्राफा, जो चला गया उसके लिए मैं नहीं सोचना चाहती। जो सामने है उसमें जीना चाहती हूँ।"[57]

अतः आइवी देशप्रेमी, मेहनती, ईमानदार, निडर व आत्मविश्वास से लब्ध एक संघर्षशील नारी है जो समाज में नारी को संघर्षरत रहते हुए स्वावलम्बी बनने की प्रेरणा देती है।

प्रभा, शिव, वांग, जोसफ, जैकी डीके आदि गौण पात्र है। इन सभी पात्र कों चीनी क्रांति के दर्शक व श्रोता के रूप में चित्रित किया है।

'एड्स' उपन्यास के प्रमुख पात्र है– सोफिया व जार्ज। सोफिया एक विदेशी जीवन जीने वाली शौकीन नारी है जो अपने पति के प्रेम को पाने के लिए उससे ही झगड़ा करती रहती है और अपने पति से बदला लेने के लिए उसके पैसों को पानी की तरह अपने शौक मौज में उड़ाती है।

सोफिया एक चरित्रहीन नारी है जो अपने पति के दोस्त के साथ संबंध रखती है और एड्स जैसी भयानक बीमारी का शिकार होती है और बाकी जीवन दुख व निराश के साये में बिताती है।

पुरुष पात्रों में प्रमुख है– जॉर्ज। जॉर्ज एक सफल व्यवसायी और सहनशीलता का उपासक है। जार्ज अपने विवाह सम्बन्ध से खुश नहीं है तथा अपनी पत्नी की ऐयाशी से

तंग भी है फिर भी वह उसे फिजूलखर्ची करने से रोकता नहीं है और उसके शौक पूरा करने के लिए अधिक पैसा कमाने के लिए मेहनत करता है।

जार्ज एक सहनशील व सेवाभावी व्यक्ति है। अपनी पत्नी की बेवफाई के कारण एड्स जैसी बीमारी से ग्रस्त होने पर भी वह अपनी पत्नी को माफ कर देता है और इस भयावह बीमारी में उसकी सेवा कर उसके जीवन को बचाने का पूरा प्रयास करता है।

जार्ज एक विदेशी संस्कृति से पोषित होने पर भी संस्कारी व्यक्ति है जो अपनी पत्नी के एड्स जैसी बीमारी होनें पर उससे नफरत करने के बजाय उसे शारीरिक व मानसिक संबल प्रदान करता है तथा उससे सहानुभूति रखता है। जार्ज के माध्यम से एड्स ग्रस्त लोगों के प्रति समाज की मानसिकता में परिवर्तन लाने का प्रयास किया है।

प्रभा, हैम्प, पेट्रोशिया, इरिना आदि गौण पात्र है। जो कथावस्तु को गति देने के लिए उपन्यास में आए है।

'अपने–अपने चेहरे' उपन्यास के प्रमुख पात्र है– रमा व मिस्टर गोयनका। रमा एक शिक्षित, उच्च महत्वाकांक्षी, स्वतंत्रता को चाहने वाली व स्वावलम्बी नारी है। रमा एक तीक्ष्ण बुद्धि की धनी महिला है जो सामाजिक संबंधों व मूल्यों को नकारते हुए स्त्री को एक स्वतंत्र अस्तित्व की राह हेतु प्रेरित करती है इसलिए वह कहती है– "विवाह, पति, बच्चों से भी बढ़कर नारी का अलग अस्तित्व है। औरत की जिन्दगी सिर्फ पुरुष की तलाश ही नही है, उसकी अपनी भी सार्थकता है।"[58]

रमा एक हठी व कर्तव्यपरायण स्त्री बनकर सामने आई है। अपनी हठ के कारण वह अपने से बड़े व विवाहित पुरुष से प्रेम करती है तथा समाज की उपेक्षा का शिकार बनती है। वह प्रेम को शाश्वत नहीं मानती है इसी कारण वह मिस्टर गोयनका को प्रेमी के स्थान पर सच्चे दोस्त का ओहदा देकर उसका साथ निभाती है और अपने कर्तव्यों का निर्वाह करती है।

रमा इस उपन्यास में नारी के अन्तर्द्वन्द्व व पीड़ा की साक्षी के रूप में भी उभरी है तथा वह नारी के आर्थिक, मानसिक व शारीरिक पूर्ण रूप से स्वतंत्रता की आकांक्षी है। वह औरत के शारीरिक रूप से ही नहीं बल्कि मानसिक रूप से भी पुरुषों के प्रतिछाया से स्वतंत्र होने की बात करती है। इस कारण वह कहती है– "मुक्ति केवल आर्थिक नहीं होती। जरूरत तो है की औरत अपनी मानसिक जकड़न से निकले।"[59] अतः रमा एक शिक्षित, हठी व अन्तर्द्वन्द्व से मुक्त होकर नारी के स्वतंत्र अस्तित्व की पक्षधर बनकर उभरी है।

पुरुष पात्रों में प्रमुख है– मिस्टर गोयनका। मिस्टर गोयनका एक महत्वाकांक्षी, डरपोक व आधुनिकता के चोले में एक रूढ़िवादी इंसान है। मिस्टर गोयनका बेमेल विवाह

के रिश्ते में फँसा एक मजबूर इंसान है जो अपनी पत्नी को पूर्ण रूप से नहीं अपनाता है और दूसरी स्त्री रमा की ओर आकर्षित होकर उससे प्रेम करने लगता है। मिस्टर गोयनका समाज से भयभीत रहने वाला इंसान है जो विवाह बन्धन में घुटने पर भी अपनी पत्नी को छोड़ नहीं सकता और रमा से प्यार करने पर भी उसे पत्नी का दर्जा दे नहीं सकता है।

मिस्टर गोयनका एक आधुनिकता की आड़ में छिपा एक रूढ़िवादी इंसान है जो अपनी बेटी के पति का घर छोड़ आने पर उसको पुरुष के सान्निध्य के अभाव में अधूरी मानता है तथा उसे आत्मनिर्भर बनाने के लिए उसकी आर्थिक रूप से भी कोई सहायता नहीं करता है। अंत तक वह परिस्थितियों से हारे हुए इंसान के रूप में परिलक्षित होता है।

सरला, रितु, प्रेमा, स्मिता, कुणाल, उमेश, रमेश आदि गौण पात्र है। इन सभी पात्रों को जीवन से निराश होकर जीवन जीने के लिए विवश होने के रूप में दर्शाया है।

'पीली आँधी' उपन्यास की मुख्य पात्र है– सोमा। सोमा शिक्षित, सुन्दर व संस्कारी महिला है। सोमा आज्ञाकारी पुत्री होने के कारण लड़का नापसंद होते हुए भी शादी करती है और परम्परा व संस्कारों के नाम पर अकेलेपन व घुटन से भरी जिन्दगी जीने को मजबूर होती है। लेकिन एक दिन अकेलेपन से त्रस्त प्रेम व ममता के लिए तरसती सोमा विद्रोही बन जाती है और मातृत्व को पाना अपने जीवन का अंतिम लक्ष्य बनाती है। अपने प्रोफेसर सुजीत सेन से प्रेम कर उनसे शारीरिक संबंध स्थापित करती है। वह परम्परागत संस्कारों के बंधनों को तोड़ती हुई स्वाभिमान व आत्मनिर्भरता के साथ जीवन यापन करती है। सोमा के दृढ़ निश्चय को देख अरविंद जैन कहते है– "पारिवारिक मान–मर्यादा, नाम और नैतिकता की देहरी लांघती नायिका (सोमा) सुरक्षित अर्थव्यवस्था के जाल–जंजाल ही नहीं तोड़ती–छोड़ती बल्कि सामाजिक संस्कारों की सीमाएँ भी ध्वस्त करती नजर आती है।"[60]

इस प्रकार सोमा परम्परागत संस्कारों के नाम पर अन्याय व अत्याचार, घुटन भरी जिन्दगी जीने की बजाय मानवीय गरिमा के साथ आत्मनिर्भर होकर स्वाभिमान के साथ जीवन जीने की प्रेरणा देती है।

पद्मावती, रामी दादी, चित्रा, लता, राधाबाई, रेवाबाई, निमली बाई, हसमुखराय, किशनबाबू, पन्नालाल, सुराणा, सांवर, गौतम, प्रो. सुजीत सेन, माधो, मोहन, राजू, भीखन, सेठ बिसेसर लाल आदि गौण पात्र है। इन सभी पात्रों को जीवन में आने वाली समस्याओं से अपने तरीके से जूझते हुए दिखाया गया है।

'स्त्री–पक्ष' उपन्यास के प्रमुख पात्र है– वृंदा व सुमित। वृंदा मारवाड़ी परिवार में पली–बढ़ी एक पढ़ी–लिखी, अनुशासित व संस्कारी लड़की है जिसका पूरा बचपन कड़े अनुशासन में माँ के प्रेम से वंचित व उपेक्षित रूप में बीता। लड़की होनें के कारण उसे शुरू

से कमजोर व पुरुष सत्ता के अधीन रहना सिखाया गया है इसलिए उसे पुरुष शब्द से ही नफरत हो जाती है। पुरुष सत्ता से आंतकित होने पर भी वह आज्ञाकारी बेटी व पत्नी बनकर सब कुछ सहते हुए जीवन व्यतीत करती रहती है।

वृंदा एक समझौता प्रिय नारी है। लेकिन जब समझौता ही उसके जीवन की नींव को हिलाने लगता है तब वह विद्रोही बन अपनी शर्तों के अनुसार डॉ सुमित को तलाक देती है और अपने पैरों पर खड़ी होकर आर्थिक स्तर पर आत्मनिर्भर होकर अपने बच्चों की परवरिश करती है और पूरे स्वाभिमान के साथ जीवन जीती है।

वृंदा को प्रेम में सदैव निराशा ही प्राप्त होती है। बचपन में अपने मित्र के द्वारा उपेक्षित होती है। शादी के बाद डॉ सुमित से प्रेम की आस सूनापन दे जाती है और जब सुमित से तलाक के बाद आर्जव से प्रेम करती है और वह भी उसे छोड़कर चला जाता है तो वह कहती है कि– "पुरुष के इस प्रेम के लिए न जाने कितने आँसू बहाए लेकिन कोई भी चीज इतनी काबिल नहीं कि इतना अधिक रोया जाए।"[61] वृंदा के माध्यम से प्रभाजी ने यह भी स्पष्ट किया है कि आर्थिक सत्ता प्राप्त होने पर इंसान को रिश्ते की अहमियत नहीं रहती है।

पुरुष पात्रों में प्रमुख है– डॉ सुमित। डॉ सुमित एक शिक्षित, मनमौजी, खुदगर्ज व लापरवाह इंसान है। सुमित अपने बच्चों व पत्नी से प्यार व वफादारी का दावा करता है लेकिन अपने प्यार व देखभाल के बदले में भी कुछ चाहता है इसलिए वह अपनी पत्नी से कहता है– "वृंदा! पति–पत्नी के रिश्ते में एक अनकहा साझा होना चाहिए– यदि मैं तुम्हें और बच्चों को पूरी उम्र संभाल कर रखता हूँ तो इसके ऐवज में तुम्हें मुझको थोड़ी बहुत छुट तो देनी होगी।"[62]

सुमित एक आर्थिक सत्ता के नशे में चूर एक लापरवाह इंसान है जो अपनी पत्नी की भावनाओं की कद्र न करते हुए उसे नजर अंदाज करता है। वह अपनी पत्नी को तौलकर प्यार देता है वह कहता है– "एक रात में दोबारा सेक्स करने से मेरी सारी शक्ति ही खत्म हो जाएगी।"[63]

सुमित बेपरवाह, ऐयाश पुरुष है जो दूसरी स्त्रियों की ओर आकर्षित होकर नयी–नयी औरतों के साथ शारीरिक सम्बन्ध बनाता है। अतः सुमित का चरित्र रिश्तों की अनदेखी करनेवाला एक ऐयाश व बेपरवाह इंसान के रूप में प्रकट हुआ है।

सुनीता, देविका, उषा महाजन, पिंकी, अर्जव, रचित, अनिश, रमेश महाजन आदि गौण पात्र है। सभी पात्रों को अकेलेपन के शिकार बन रिश्तों के अलगाव को झेलने वालों के रूप में चित्रित किया है।

निष्कर्षतः –

प्रभा जी के सारे उपन्यास नारी पर केन्द्रित होकर नारी जीवन के यथार्थ को समाज के सामने प्रस्तुत करते है। इन्होंने नारी जीवन से जुड़ी अनेक समस्या को उजागर करते हुए स्त्री के जीवन से जुड़े अनेक पहलुओं को उदघाटित करने का प्रयास किया गया है। इनके उपन्यास में विदेशी संस्कृति व परिवेश तथा मारवाड़ी संस्कृति व परिवेश की झलक भी दृष्टिगोचर होती है।

प्रभा जी ने स्त्री की भावनाओं व अनुभवों को भाषा के द्वारा अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। प्रभा जी की भाषा सरल व सहज प्रवाह से युक्त है। उपन्यास में आए पात्रों के भावों के अनुरूप भाषा का सृजन किया गया है। मारवाड़ी, बिहारी, ग्रामीण, अंग्रेजी आदि भाषा के शब्दों का प्रयोग भी सहज रूप से हुआ है।

प्रभा खेतान के उपन्यासों में पात्रों का समायोजन भी कथानक के अनुरूप ही हुआ है। उपन्यासों के सभी पात्र अपने विचारों व विशेषता को सहज रूप से पाठकों के सामने उपस्थित करने में सफल हुए है। इनके उपन्यास शिल्प विधान के क्षेत्र में भी सशक्तता के साथ उभर कर आये है। इनके उपन्यास शिल्प विधि के कई रूपों का उदघाटन करने में सफल हुए है। अंतत कह सकते है कि प्रभा खेतान के उपन्यास कथ्य और शिल्प के बेजोड़ सानी है।

संदर्भ सूची –

1. अधूरे साक्षात्कार, नेमिचन्द जैन, पृष्ठ – 179
2. हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों का शिल्प, डॉ सुरेन्द्र उपाध्याय, पृष्ठ – 210
3. नालंदा विशाल शब्द सागर, सं श्री नवल जी, पृष्ठ – 1344
4. हिन्दी साहित्य कोष, धीरेंद्र वर्मा, पृष्ठ – 379
5. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 52
6. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 138
7. स्त्री पक्ष, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 21
8. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 75
9. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 37
10. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 123
11. स्त्री पक्ष, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 21
12. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 39

13. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 134
14. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 10
15. अन्या से अनन्या, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 39
16. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 51
17. अपने अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 197
18. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 17
19. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ट 131
20. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 7
21. अपने अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतना, पृष्ठ – 83–84
22. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतना, पृष्ठ – 261
23. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतना, पृष्ठ – 56
24. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 277
25. अपने अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतना, पृष्ठ – 198
26. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 25
27. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान पृष्ठ – 130
28. पीली आँधी का हाहाकार, गोपाल राय, पृष्ठ – 10
29. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 99
30. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 44
31. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 61
32. एड्स, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 71
33. अपने–अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 103
34. स्वातंर्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी में बिंबविधान, डॉ मधुसूदन पाटिल, पृष्ठ – 126
35. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 10
36. पीली आँधी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 6
37. छिन्नमस्ता, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 121
38. स्त्री पक्ष, डॉ प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग, फरवरी 1999, सं डॉ श्याम सुंदर आचार्य, पृष्ठ–18
39. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 138
40. वहीं, पृष्ठ 82
41. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 72

42. वहीं, पृष्ठ – 71
43. प्रभा खेतान का औपन्यासिक कृतित्व, निमीषा राय, पृष्ठ – 39
44. अपने–अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ 181
45. औरत अस्तित्व और अस्मिता, डॉ अरविंद जैन, पृष्ठ – 65
46. प्रेमचंद और शरतचंद के उपन्यास, डॉ सुरेन्द्र तिवारी, पृष्ठ – 120
47. वृन्दावन लाल वर्मा के उपन्यासों में नायिका परिकल्पना, डॉ इन्दिरा पी. के, पृष्ठ – 8
48. आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और चरित्र–चित्रण विकास, डॉ बैचेन, पृष्ठ – 26
49. आओ पे पे घर चले, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 62–63
50. वहीं, पृष्ठ – 90
51. वहीं, पृष्ठ – 40
52. तालाबंदी, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 77
53. वहीं, पृष्ठ – 96
54. दसवें दशक के प्रतिनिधि उपन्यास, मालती आदवाणी, पृष्ठ – 36
55. प्रभा खेतान के उपन्यास में नारी, डॉ अशोक मराठे, पृष्ठ – 116
56. अग्निसंभवा, डॉ प्रभा खेतान, हंस पत्रिका, अप्रैल 1992, पृष्ठ – 58
57. वहीं, पृष्ठ – 62
58. अपने–अपने चहरे, हंस पत्रिका, अगस्त 1989, पृष्ठ – 84
59. अपने–अपने चहरे, डॉ प्रभा खेतान, पृष्ठ – 149
60. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी, डॉ अशोक मराठे, पृष्ठ – 135
61. स्त्री पक्ष, जनसत्ता सबरंग, अगस्त 1999, पृष्ठ – 42
62. स्त्री पक्ष, जनसत्ता सबरंग, मई 1999, पृष्ठ – 22
63. स्त्री पक्ष, जनसत्ता सबरंग, जनवरी 1999, पृष्ठ – 44

अष्ठम अध्याय

उपसंहार

अष्ठम अध्याय

उपसंहार

उपसंहार

समकालीन महिला लेखिकाओं के द्वारा लेखन समाज में परिवर्तन और जीवन में नव दृष्टिकोण को उजागर करता है। प्राचीन समय में नारी के हर क्षेत्रों में कार्य हेतु प्रतिबंध था परन्तु आधुनिकता के दौर में स्त्री अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ रही है। आज नारी जागरूक होकर प्रतिरोध करने की क्षमता दिखा रही है। समकालीन लेखिकाओं के साहित्य जगत में एक नया नाम उदित हुआ है– प्रभा खेतान।

समकालीन महिला लेखिकाओं के आकाश में प्रभा खेतान एक नया सितारा बनकर उभरी है। प्रभा खेतान एक ऐसी महिला लेखिका है जो स्त्री की अस्मिता व अस्तित्व की रक्षार्थ हेतु साहित्य लेखन करती है। प्रभा खेतान नारी लेखन के विस्तार व संवेदनशीलता की साक्षी है। उन्होंने साहस व विश्वास के साथ नारी जीवन की स्वतंत्रता की भावना को अपने उपन्यास के द्वारा समाज के समक्ष रखा है। उन्होंने अपने उपन्यासों में प्राचीन मूल्यों की भूमिका पर सवाल खड़े कर अपने भावों को सहज अभिव्यक्ति दी है। प्रभा जी के उपन्यास में विषय की विविधता के साथ–साथ नव सृजन की प्रेरणा भी निहित है।

समकालीन महिला लेखिका के उपन्यासों में मूल्य चेतनाः प्रभा खेतान के विशेष संदर्भ में "प्रथम अध्याय समकालीन उपन्यास विधा का विकासात्मक परिचय" नामक शीर्षक से अभिहित किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में उपन्यास विधा के सामान्य परिचय के अन्तर्गत उपन्यास शब्द का उद्‌भव तथा विभिन्न विद्धवानों द्वारा दी गई परिभाषाओं का अंकन किया गया है। उपन्यास के प्रारम्भिक परिचय के साथ उपन्यास विधा के स्वरूप व विकास, स्वातंन्त्र्योत्तर उपन्यास का विकास व समकालीन उपन्यास का विस्तार से विवेचन किया गया है। उपन्यास आधुनिक युग की गद्य विधाओं में सबसे सजीव व सशक्त विधा है। उपन्यास विधा सबसे नवीन व प्रभावी साहित्यिक विधा है। इसके द्वारा पाठक का मनोरंजन व ज्ञानवर्धन दोनों उद्देश्य सार्थक होते है। उपन्यास विधा की उद्देश्य प्राप्ति हेतु उपन्यास के छः तत्वों कथावस्तु, पात्र, संवाद, देशकाल, भाषा शैली, उद्देश्य आदि का विस्तृत विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

उपन्यास की परम्परा में प्रेमचन्द से पूर्व मात्र मनोरंजन हेतु उपन्यास की रचना की जाती थी। परन्तु प्रेमचन्द युग में उपन्यास मात्र मनोरंजन का साधन न रहकर यथार्थ का रुप धारण कर चुका था। प्रेमचन्द ने जीवन के हर क्षेत्र के विषयों पर अपनी लेखनी चलाई

है और अपनी इसी कला के माध्यम से उपन्यास जगत में एक नये युग को जन्म देने में सफल सिद्ध हुए। इस युग के अन्य उपन्यासकारों ने भी नये जन्म के पालन में सहयोग दिया।

प्रेमचन्द के बाद हिन्दी उपन्यास की दिशा में अनेक विचारधाराओं ने जन्म लिया। मनोविश्लेषणवादी, साम्यवादी, प्रगतिवादी, मार्क्सवादी आदि विचारधाराओं ने जीवन की नयी व्याख्या कर उपन्यास जगत को एक नई राह प्रदान की है।

1950 के दशक के बाद स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास का जन्म हुआ है। इसके अन्तर्गत सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक उपन्यास के साथ उपन्यास की नयी विधा प्रगतिवाद या प्रयोगवाद का जन्म हुआ। इन उपन्यासकारों ने जीवन के यथार्थ व देश में व्याप्त नवीन चुनौतियों से अवगत कराया। अंतत समकालीन उपन्यास विधा का प्रादुर्भाव हुआ। इसे देश में नवजागरण की लहर के रूप में देखा गया। समकालीन उपन्यासकारों ने समाज में मूल्य पतन, देश की व्यवस्था का पतन व परिवार संस्था के विघटन की दशा पर आक्रोश व विद्रोह से भरी रचनाओं की अभिव्यक्ति की है तथा इन उपन्यासकारों ने नवीन प्रयोग कर विभिन्न समस्याओं को बड़ी संवेदनशीलता व कलात्मकता के साथ चित्रित किया।

आधुनिक काल में उपन्यास के क्षेत्र में महिला लेखिका के लेखन कार्य का शुभारम्भ हुआ तथा इन्होंने नारी जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं को उजागर करते हुए समाज में नारी के अधिकार व सम्मान हेतु संघर्ष के स्वर को मुखरित किया।

द्वितीय अध्याय 'डॉ प्रभा खेतान का व्यक्तित्व एवं कृतित्व' शीर्षक से अभिहित है। इसमें इनके व्यक्तित्व व रचनात्मक साहित्य जगत पर विचार किया गया है। 'वैयक्तिक परिचय' शीर्षक के अन्तर्गत प्रभा जी के जन्म, माता–पिता परिवार, शिक्षा, पारिवारिक परिवेश, विवाह, सृजन क्षेत्र का शुभारम्भ, व्यवसाय, प्रेरणा व सम्मान आदि विषयों पर विस्तार से चर्चा की गई है। प्रभाजी का 1 नवम्बर 1942 को दक्षिण कोलकत्ता में मारवाड़ी परिवार में पाँचवी संतान के रूप में जन्म हुआ। पाँचवी संतान में लड़की के रूप में जन्म होने के कारण बचपन से उपेक्षित जीवन को जिया तथा रिश्तों के नाम पर उन्हें सदैव दोगलापन व धोखा ही प्राप्त हुआ। बचपन में अपने सगे भाई द्वारा बलात्कार, प्रोफेसर द्वारा प्रेम में अविश्वास ही उन्हें प्राप्त हुआ। उनको अपने पुरे जीवन काल में असुरक्षा की भावना व अकेलेपन का दंश झेलना पड़ा। इस कारण वह पुरुष नाम से भयाक्रांत होने लगी।

प्रभा खेतान हंसमुख, संवेदनशील, कर्तव्यपरायण, ममतास्वरुपा व्यक्तित्व धारण करने वाली नारी है। वह बहुत सामान्य वेशभूषा, खानपान के साथ साधारण जीवन व्यतीत करना पसंद करती थी। वह बहुत आशावादी थी। अपने पूरे जीवन के कड़वे यथार्थ व अनुभवों को

हँसते–हँसते झेल कर एक कामयाब व उच्च महत्वाकांक्षी नारी के रूप में अपनी पहचान बनाई।

प्रभा जी के जीवन की प्रथम अवस्था के बाद उनकी शिक्षा, विवाह, सामाजिक कार्यक्रमों, प्रोत्साहन, मृत्यु के बारे में परिचय कराते हुए उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की गई हैं।

प्रभा खेतान का उत्कृष्ट व्यक्तित्व व यथार्थ लेखन कला ही उनके जीवन की सफलता का परिचायक हैं। उन्होंने अपने जीवन की यथार्थ पीड़ा व संवेदना को अपने साहित्य लेखन द्वारा कलमबद्ध किया है। उन्होंने अपनी कृतियों के द्वारा नारी के शोषण, घुटन, अस्तित्व के पहचान हेतु विद्रोहात्मक स्वर को मुखरित किया है। इन्होंने नारी जीवन के विविध पहलूओं, व उनकी समस्याओं को उजागर किया है। तत्पश्चात उनके साहित्य सृजन की प्रेरणा के स्त्रोत तथा सम्पूर्ण उपन्यास, काव्यसंग्रह, आत्मकथा, चिंतनपरक साहित्य, अनुवाद, आदि विधाओं से परिचय कराते हुए उनके बहू आयामी व्यक्तित्व व लेखन में सिद्धहस्तता को प्रकट किया है।

तृतीय अध्याय "समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान" से संबंधित है। इसमें समकालीन महिला उपन्यासकारों का वर्णन कराते हुए, समकालीन महिला उपन्यासकार व प्रभा खेतान के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया है तथा अंततः प्रभा खेतान के साहित्य के क्षेत्र में वैशिष्ट्य पर विस्तृत चर्चा की गई है।

'समकालीन महिला उपन्यासकार' शीर्षक में समकालीन लेखिकाओं के साहित्य संबंधित विविध विषयों जैसे नारी का शोषण, नारी जीवन की त्रासदी, अकेलेपन की समस्या, दांपत्य संबंधों की सच्चाई, नारी के विविधरूपों, नारी प्रेम का स्वरूप, कार्यरत नारी की समस्याएँ, स्त्री व पुरुष के मध्य रिश्तों की उधेड़बुन आदि पर विस्तृत व्याख्या की गई है।

'समकालीन महिला उपन्यासकार व प्रभा खेतान' शीर्षक में आधुनिक महिलाओं के साहित्यिक विषयों में समानता व असमानता को उजागर किया गया है। प्रभा खेतान के साहित्य में नारी के शोषण के विविध विषयों, समस्याओं का वर्तमान संदर्भ में औचित्य को प्रकट किया हैं। प्रभा खेतान ने प्रेम के स्वरूपों को उजागर करते हुए उनके दुष्परिणामों को प्रकट करते हुए उनसे साक्षात्कार करने पर चर्चा की गई है। प्रभा जी ने कार्यरत महिलाओं के द्वारा आत्मविश्वास व संघर्षशीलता का परिचय दिया है।

'महिला लेखन में प्रभा खेतान का वैशिष्ट्य' शीर्षक में प्रभा खेतान का साहित्य के क्षेत्र में वैशिष्ट्य को स्पष्ट किया है। प्रभा जी ने आधुनिक युग में नारी के शोषण, वैश्विक स्तर पर नारी की दशा व कार्यरत नारी की व्यथा, पुरुषों का अहम, स्त्री–पुरुष के मध्य

संबंधों में अलगाव का चित्रण किया है। उन्होंने अपने साहित्य में तत्कालीन परिवेश की स्थितियों को भी प्रकट किया है। प्रभा जी ने महिला द्वारा व्यवसाय जगत में प्रवेश व उससे जुड़ी समस्याओं व अनुभवों को दर्शाते हुए स्त्री की स्वतंत्रता आर्थिक रूप से स्वावलम्बन में है इस तथ्य को सिद्ध किया है। एड्स जैसी भयावह बीमारी का वर्णन करते हुए मरीज के प्रति सहानुभूति व सतकर्ता के संदेश को प्रकट किया है। वैश्विक स्तर पर नारी विमर्श से अवगत कराने व नारी की अस्मिता को बनाये रखना प्रभा खेतान के साहित्य वैशिष्ट्य का परिचय है।

चतुर्थ अध्याय 'समकालीन महिला उपन्यासों में मूल्य चेतना का स्वरूप' से संबंधित है। प्रस्तुत अध्याय में मूल्य शब्द के अर्थ, उत्पति, मूल्य की परिभाषा व स्वरूप तथा मूल्य की अवधारणा पर विस्तार से चर्चा की गई है। साथ–साथ में मूल्य संक्रमण से तात्पर्य, परिभाषा व मूल्यों के स्त्रोत, मूल्यों का विकास, मूल्यों के परिवर्तित स्वरूप पर व्याख्या प्रस्तुत की गई है। मूल्य मानव के अस्तित्व हेतु परम आवश्यक है। मूल्यों पर ही सभ्य समाज का भवन अवलम्बित है अर्थात मूल्य ही सामाजिक व्यवस्था के आधार स्तम्भ है। साहित्य और मूल्य चेतना का भी गहरा सम्बन्ध है। चेतना मनुष्य के लिए विवेक का कार्य करती है जिसके द्वारा मानव मूल्यों का निर्धारण करता है। अर्थात मूल्यों के निर्माण, निर्धारण और विकास में चेतना की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

सामान्यतः मूल्य वाणिज्य शास्त्र का शब्द है जिसका अर्थ मोल लेने योग्य। परन्तु वर्तमान में मूल्य शब्द का विस्तार हो गया है। अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान विभिन्न क्षेत्रों में मूल्य शब्द का अर्थ भी भिन्न–भिन्न हो गया है। परन्तु सर्वमान्यरूप से मूल्य समाज द्वारा स्वीकृत मान्यताएँ, धारणाएँ, व प्रतिमान है जिन पर समाज चलता है और प्रत्येक समाज के लिए आचरण योग्य आदर्श मूल्य होते है। मूल्य व्यक्ति सापेक्ष न होकर समाज सापेक्ष होते है। मूल्य अकस्मात् प्रकट नहीं होते है बल्कि मूल्यों का निर्माण दीर्घ चिंतन व समाज के विकास प्रक्रिया से संबन्धित है।

भारतीय समाज में सदैव मूल्यों के आदर्श रूप को स्वीकृत किया है। सतयुग व त्रेतायुग के महापुरुष हमारे संस्कृति में आदर्श रूप में स्थापित है। इस कारण भारतीय समाज में आदर्शवाद के स्थापना हेतु धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष संबंधी अवधारणा को स्थान दिया है। भारतीय संस्कृति में प्रथम तीन का निर्वाह करने के पश्चात मोक्ष की कल्पना की जाती है। भारतीय अवधारणा के अनुरूप पाश्चात्य विचारकों ने भी मूल्यों से संबंधित अपनी–अपनी धारणाएँ स्पष्ट की है।

मानव व समाज हेतु जिस प्रकार मूल्यों का निर्माण व स्थापना आवश्यक है उसी तरह मूल्यों के निर्माण हेतु भी समाज की स्थापना आवश्यक है। मूल्य, मानव और समाज परस्पर अन्योन्याश्रित है। समाज रूपी ईकाई के अलावा भारतीय सभ्यता व संस्कृति, दर्शन व नीतिशास्त्र, शिक्षा ने भी मूल्यों के निर्माण हेतु महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

मूल्यों का कोई एक स्वरूप नहीं होता है। मूल्य कई प्रकार के होते है। सामान्यतः मूल्यों को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक चार भागों में विभाजित कर सकते है। सामाजिक मूल्य में वे सभी तत्व सन्निहित होते है जो समाज में व्यक्ति के उत्थान व विकास तथा आवश्यकता हेतु निर्मित होते है। आर्थिक मूल्य देश की अर्थव्यवस्था, मानव की उन्नति व विकास से संबंधित होते है। राजनैतिक मूल्य वे है जो किसी भी देश व राज्य को नियंत्रित व संचालित करते है। सांस्कृतिक मूल्य वे है जो किसी भी देश व समाज की सभ्यता व संस्कृति को उच्च आदर्श के आसन पर प्रतिष्ठापित करे। संस्कृति किसी भी देश व समाज की प्राण–वाहिनी धारा है।

किसी भी समाज में मूल्य स्थिर व अपरिवर्तनीय नहीं होते है। समय के अनुरूप समाज के मूल्यों में भी परिवर्तन होता है। प्राचीन मूल्य वर्तमान में प्रासंगिकता खोकर परिवर्तित होकर नव मूल्यों का निर्माण करते है। इस परिवर्तन की अवस्था को ही मूल्य संक्रमण कहते है। मूल्य संक्रमण की प्रक्रिया भी अवश्यंभावी है। आज वर्तमान संदर्भ में सामाजिक परिवेश, शिक्षा, विज्ञान, औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण ने मूल्य संक्रमण के आधार तत्वों की आधारशिला रखी है। जिसके कारण प्राचीन मूल्य संक्रमित होकर विस्थापित हो रहे है और उनके स्थान पर नवीन मूल्यों का प्रादुर्भाव हो रहा है। अंत में समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों मे आए विभिन्न मूल्यों के स्वरूप को दर्शाया है।

पाँचवा अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यासों मे मूल्यों के विविध पक्ष' शीर्षक से संबंधित है। इसमें प्रभा जी के उपन्यासों में प्रयुक्त हुए सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आदि विभिन्न मूल्यों पर चर्चा प्रस्तुत की गई है। प्रभा जी ने किन–किन मूल्यों की प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह खड़े करते हुए किन नवीन मूल्यों को स्थापित किया है प्रस्तुत अध्याय में वर्णित हैं। इस अध्याय के द्वारा प्रभा जी ने आधुनिक मूल्यों को स्थापित करते हुए एक नवीन समाज, संस्कृति व परिवेश की कल्पना की गई है।

सामाजिक मूल्यों के तहत समाज के विभिन्न स्तरों, घटकों, सम्बन्धों, रीति, संस्कृति आदि मूल्यों को उजागर किया गया है। समाज के संगठन हेतु व्यक्ति एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण ईकाई है तथा वह समाज का पूरक अंग है। समाज व्यक्ति को परिवार रूपी

संस्था के द्वारा सभ्यता व संस्कार प्रदान करता है। समाज व्यक्ति के पारिवारिक व परस्परिक संबंधों के द्वारा अस्तित्ववान व सुगठित होता है। परिवार के विभिन्न संबंधों माता–पिता, भाई– बहन, पति–पत्नी आदि के स्नेह संबंध, प्रेम व विवाह संस्कार के द्वारा समाज की संरचना विकासमान होती है।

राजनैतिक मूल्यों के अन्तर्गत मूल्यों के संदर्भ में राजनीति के विभिन्न क्षेत्रों का विश्लेषण करते हुए राजनीतिक परिवेश के यथार्थ को उजागर किया गया है। राजनीति सदैव देश की सुरक्षा, विकास, विभिन्न देशो के साथ राजनैतिक सम्बन्धों पर आधारित होती है। आज वर्तमान संदर्भ में राजनीति का स्वरूप परिवर्तित हो गया है। जिसमें मूल्य परक राजनीति का स्थान स्वार्थवादी, चरित्रहीन, साम्प्रदायिक, शोषित व अवसरवादी राजनीति ने ले लिया है। राजनीति का स्तर दिन–प्रतिदिन निम्न से निम्न होता जा रहा है।

आर्थिक मूल्यों के तहत देश, समाज व व्यक्ति के संदर्भ में अर्थ के महत्व को स्पष्ट करते हुए अर्थ से प्राप्त शक्ति व संबल को उजागर किया गया है। आज का युग अर्थप्रधान हो गया है। अर्थ के स्तर के द्वारा ही व्यक्ति, समाज व देश की प्रतिष्ठा का आकलन किया जाता है। अर्थ आज सभी के लिए सम्मान प्राप्त करने का मापदंड है इसी कारण भारतीय संस्कृति के आदर्श के चार स्तम्भों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में से अर्थ सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्तम्भ बन गया है। आज इस अर्थप्रधान व्यवस्था ने व्यक्ति को भावनाओं से रहित अमानवीयता के स्तर पर लाकर खड़ा कर दिया है। जिसने प्रत्येक समाज व देश के मध्य विषमताओं को बढ़ा दिया है तथा समाज, व्यक्ति और देश को मूल्य हीनता की ओर अग्रसर कर दिया है।

सांस्कृतिक व धर्मिक मूल्यों के तहत समाज में व्याप्त धर्म व संस्कृति की स्थिति को उजागर किया गया है। प्राचीन समय में धर्म की स्थिति व वर्तमान संदर्भ में धर्म को परिभाषित करते हुए धर्म की पृष्ठभूमि में आए परिवर्तन को उजागर किया है। धर्म, नैतिकता, आस्था, मानवीयता को सांस्कृतिक मूल्यों के अन्तर्गत समादृत करते हुए उन्हें उच्च स्थान पर आसन किया गया है।

छठा अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यास–विविध आयाम' से संबंधित है। इसमें नारी के विविध रूप, प्रेम संबंधित मान्यताएँ व प्रेम का स्वरूप, विवाह के प्रकार व अवैध संबंधों, सामाजिक आयाम के रूप आदि विषयों पर विस्तार से चर्चा की गई है।

प्राचीन काल में नारी की स्थिति दयनीय थी। वह सभी प्रकार के अधिकारों से वंचित मात्र भोग की वस्तु थी तथा उन्हें सतीप्रथा, बालविवाह आदि अनेक समस्याओं से रूबरू होना पड़ता था। परन्तु स्वतंत्रता पश्चात नारी की दशा में परिवर्तन हुआ। नारी अपने

अस्तित्व की रक्षार्थ हेतु अधिकारों की लड़ाई लड़ने लगी। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में नारी के विभिन्न रूप जैसे परम्परागत नारी, ममतामयी नारी, शिक्षा प्राप्त करने की अधिकारिणी नारी, कामकाजी नारी, शोषित नारी, विद्रोह से भरी नारी, विदेशी नारी आदि कई रूपों का चित्रण किया है।

परम्परागत, ममतामयी नारी के चित्रण में अपने परिवार के पालन पोषण व उनके स्नेह हेतु अपना जीवन समर्पित करते हुए दिखाई गई है। कामकाजी नारी के राह में आने वाली समस्याओं व शोषण के आंतरिक व ब्राहय दोनों रूपों पर भी प्रकाश डाला गया है। इनके उपन्यास की नायिकाओं को शिक्षा प्राप्त कर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने व घरेलू हिंसा व घुटन से मुक्त होकर आत्मविश्वासी बनते हुए परिलक्षित कराया है।

आज प्रेम का स्वरूप ही बदल गया है। प्रेम का बदला हुआ स्वरूप समाज के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। उसने परिवार नाम की संस्था की नींव को ही खोखला बना दिया है। आधुनिकता के दौर में पुरुष व स्त्री की सोच में हुए परिवर्तन ने स्त्री पुरुष के मध्य नवीन सम्बन्धों के निर्माण के साथ अवैध व असफल प्रेम के स्वरूप को सजगता के साथ वर्णित किया है। प्रभा जी के सभी उपन्यासों में अवैध प्रेम के स्वरूप को देखा जा सकता है।

आज के इस युग में विवाह नामक संस्था के स्वरूप में भी परिवर्तन हुआ है। विवाह आज के संदर्भ में जन्म जन्मांतर का संबंध न होकर मात्र समझौता रह गया है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में विवाह के विभिन्न स्वरूप परम्परागत विवाह, प्रेम विवाह व अनमेल विवाह का वर्णन किया है। इन्होंने प्रेम विवाह व अनमेल विवाह को असफल बताते हुए स्त्री–पुरुष के मध्य जन्मी नई मान्यताओं व धारणाओं को उजागर किया है। आज स्त्री व पुरुष विवाह सम्बन्धों से संतुष्ट न होने के कारण दूसरे की ओर आकर्षित होकर अवैध सम्बन्धों को बढ़ावा दे रहे है। इस प्रकार के अनैतिक संबंधों के विस्तार ने परिवार रूपी संस्था के अस्तित्व को जड़ से हिला दिया है और व्यक्ति को एकाकीपन की स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है।

प्रभाजी ने अपने उपन्यासों में संयुक्त परिवार की स्थिति को उजागर किया है तथा साथ ही साथ में परिवार में पनपते रिश्तों के मध्य सम्बन्धों को भी परिभाषित किया है। प्रभा जी ने उपन्यासों के द्वारा रिश्तों के यथार्थ को प्रकट किया है। उन्होंने रिश्तों के बीच की दुःखद स्थिति को पूरी संवेदनशीलता के साथ उजागर किया है।

सातवा अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन' नामक शीर्षक से अभिहित है। प्रस्तुत अध्याय में भाषा के विभिन्न रूपों, प्रमुख शिल्प विधियों,

प्रतीकों व बिम्बों की रचना, कथ्य तथा पात्रों व उनके चरित्र आदि के बारे विवेचना की गई है।

प्रभा जी के उपन्यास की भाषा सहजता व स्वाभाविकता के प्रभाव से युक्त है। प्रभा जी ने उपन्यासों की भाषा में अंग्रेजी, बंगाली, भोजपुरी, ग्रामीण भाषा का सशक्त प्रयोग किया है। इन्होंने मुहावरे व लोकोक्ति, चित्रात्मक, भाषा का प्रयोग भी किया है। इनके उपन्यासों में शैली के कई रूपों आत्मकथात्मक शैली, फ्लेशबैक शैली, वर्णनात्मक शैली, काव्यात्मक शैली व पत्रात्मक शैली आदि शैली के रूपों का वर्णन किया है। भाषा और शिल्प की दृष्टि से यह एक बेजोड़ कलाकार है।

प्रभाजी ने अपने लेखन में रोचकता लाने हेतु प्रतीकों व बिम्बों का नवीन प्रयोग किया है। इनके सभी उपन्यासों का कथानक नारी केन्द्रित है। इन्होंने सम्पूर्ण कथानक के द्वारा नारी जीवन की त्रासदी, नारी जीवन की समस्याओं, उसके दर्द व पीड़ा का मर्मांतक वर्णन प्रस्तुत किया है। कथानक की रोचकता व साहित्य लेखन का उद्देश्य पाठक तक पहुचाने के लिए पात्रों की परिकल्पना के सही स्वरूप को उजागर किया है।

संक्षेपतः –

प्रभा खेतान एक बहू आयामी साहित्यकार है। इन्होंने अपने सम्पूर्ण साहित्य संसार में नारी की वेदना, उपेक्षा व अस्मिता के स्वरूप का चित्रण कर उनके आक्रोश व पीड़ा के स्वर को मुखरित किया है। स्त्री विमर्श की लेखिका के रूप में उन्होंने अपनी एक अलग पहचान बना ली है। अतः युग वाणी व मूल्य परम्परा को एक साथ अन्योन्याश्रित रूप में प्रवाहित कर साहित्य में अविस्मरणीय योगदान दिया है।

शोध सारांश

शोध सारांश

समकालीन महिला लेखिकाओं का लेखन समाज में परिवर्तन और नव दृष्टिकोण को उजागर करता है। प्राचीन नारी की तुलना में आज की नारी प्रतिरोध कर समाज में अपनी क्षमता को साबित कर रही हैं।

प्रभा खेतान समकालीन महिला लेखिकाओं के आकाश में एक नया सितारा बनकर उभरी है। प्रभा खेतान एक ऐसी महिला लेखिका हैं जो स्त्री की अस्मिता व अस्तित्व की रक्षार्थ हेतु अपने उपन्यास लेखन द्वारा समाज के समक्ष प्राचीन मूल्यों की भूमिका पर सवाल खड़े कर अपने भावों को सहज अभिव्यक्ति प्रदान की है। प्रभा जी के उपन्यास में विषय विविधता के साथ नव सृजन की प्रेरणा भी निहित है।

"समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों में मूल्य चेतनाः प्रभा खेतान के विशेष संदर्भ में" प्रस्तुत विवरण सात अध्यायों में विभक्त हैं। "प्रथम अध्याय समकालीन उपन्यास विधा का विकासात्मक परिचय" में उपन्यास विधा के सामान्य परिचय के अन्तर्गत उपन्यास शब्द का उदभव तथा विभिन्न विद्धवानों द्वारा दी गई परिभाषाओं का अंकन किया गया है। उपन्यास के प्रारम्भिक परिचय के साथ उपन्यास विधा के स्वरूप व विकास, स्वातंन्त्र्योत्तर उपन्यास का विकास व समकालीन उपन्यास का विस्तार से विवेचन किया गया है। उपन्यास विधा सबसे नवीन व प्रभावी साहित्यिक विधा है। इसके द्वारा पाठक का मनोरंजन व ज्ञानवर्धन दोनों उद्देश्य सार्थक होते है। उपन्यास विधा की उद्देश्य प्राप्ति हेतु उपन्यास के छः तत्वों कथावस्तु, पात्र, संवाद, देशकाल, भाषा शैली, उद्देश्य आदि का विस्तृत विश्लेषण आवश्यक होता है।

उपन्यास की परम्परा में प्रेमचन्द ने जीवन के हर क्षेत्र के विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है और अपनी इसी कला के माध्यम से उपन्यास जगत में एक नये युग को जन्म देने में सफल सिद्ध हुए। इस युग के अन्य उपन्यासकारों ने भी नये युग के जन्म के पालन में सहयोग दिया।

प्रेमचन्द के बाद हिन्दी उपन्यास की दिशा में मनोविश्लेषणवादी, साम्यवादी, प्रगतिवादी, मार्क्सवादी आदि अनेक विचारधाराओं ने जन्म लेकर उपन्यास जगत को एक नई व्याख्या प्रदान की है।

1950 के दशक के बाद स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास का जन्म हुआ है। इसके अन्तर्गत सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक उपन्यास के साथ उपन्यास की नयी विधा प्रगतिवाद या प्रयोगवाद का जन्म हुआ। अंतत समकालीन उपन्यास विधा का प्रादुर्भाव हुआ। इसे देश में नवजागरण की लहर के रूप में देखा गया। समकालीन उपन्यासकारों ने नवीन प्रयोग कर विभिन्न समस्याओं को बड़ी संवेदनशीलता व कलात्मकता के साथ चित्रित किया। आधुनिक काल में उपन्यास के क्षेत्र में महिला लेखिका के लेखन कार्य का शुभारम्भ हुआ तथा इन्होंने नारी जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं को उजागर करते हुए समाज में नारी के अधिकार व सम्मान हेतु संघर्ष के स्वर को मुखरित किया।

द्वितीय अध्याय 'डॉ प्रभा खेतान का व्यक्तित्व एवं कृतित्व' में इनके व्यक्तित्व व रचनात्मक साहित्य जगत पर विचार किया गया है। 'वैयक्तिक परिचय' शीर्षक के अन्तर्गत प्रभा जी के जन्म, माता–पिता परिवार, शिक्षा, पारिवारिक परिवेश, विवाह, सृजन क्षेत्र का शुभारम्भ, व्यवसाय, प्रेरणा व सम्मान आदि विषयों पर विस्तार से चर्चा की गई है। प्रभा जी का जन्म १ नवम्बर १६४२ को कलकत्ता में मारवाड़ी परिवार में हुआ। उनका सम्पूर्ण जीवन उपेक्षित व असुरक्षा की भावना में व्यतीत हुआ हैं।

प्रभा जी एक हंसमुख, संवेदनशील नारी के रूप में जीवन के कड़वे अनुभवों के माध्यम से एक कामयाब नारी के रूप में पहचान बनाई हैं। प्रभा जी के जीवन की प्रथम अवस्था के बाद उनकी शिक्षा, विवाह, सामाजिक कार्यक्रमों, प्रोत्साहन, मृत्यु के बारे में परिचय कराते हुए उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की गई हैं।

तृतीय अध्याय "समकालीन हिन्दी महिला उपन्यासकार और प्रभा खेतान" में समकालीन महिला उपन्यासकारों का वर्णन कराते हुए, समकालीन महिला उपन्यासकार व प्रभा खेतान के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया है तथा अंततः प्रभा खेतान के साहित्य के क्षेत्र में वैशिष्ट्य पर विस्तृत चर्चा की गई है।

'समकालीन महिला उपन्यासकार' शीर्षक में समकालीन लेखिकाओं के साहित्य संबंधित विविध विषयों जैसे नारी का शोषण, नारी जीवन की त्रासदी, अकेलेपन की समस्या, दांपत्य संबंधों की सच्चाई, नारी के विविधरूपों, नारी प्रेम का स्वरूप, कार्यरत नारी की समस्याएँ, स्त्री व पुरुष के मध्य रिश्तों की उधेड़बुन आदि पर विस्तृत व्याख्या की गई है।

'समकालीन महिला उपन्यासकार व प्रभा खेतान' शीर्षक में आधुनिक महिलाओं के साहित्यिक विषयों में समानता व असमानता को उजागर किया गया है।

'महिला लेखन में प्रभा खेतान का वैशिष्ट्य' शीर्षक में प्रभा खेतान का साहित्य के क्षेत्र में वैशिष्ट्य को स्पष्ट किया है। प्रभा जी ने आधुनिक युग में नारी के शोषण, वैश्विक स्तर पर नारी की दशा व कार्यरत नारी की व्यथा का चित्रण किया है। प्रभा जी ने महिला द्वारा व्यवसाय जगत में प्रवेश व उससे जुड़ी समस्याओं व अनुभवों को दर्शाते हुए स्त्री की स्वतंत्रता आर्थिक रूप से स्वावलम्बन में है इस तथ्य को सिद्ध किया हैं।

चतुर्थ अध्याय 'समकालीन महिला उपन्यासों में मूल्य चेतना का स्वरूप' में मूल्य शब्द के अर्थ, उत्पति, मूल्य की परिभाषा व स्वरूप तथा मूल्य की अवधारणा पर विस्तार से चर्चा की गई है। साथ–साथ में मूल्य संक्रमण से तात्पर्य, परिभाषा व मूल्यों के स्त्रोत, मूल्यों का विकास, मूल्यों के परिवर्तित स्वरूप पर व्याख्या प्रस्तुत की गई है। मूल्य मानव जीवन के लिए परम आवश्यक हैं मूल्य समाज का आधार स्तम्भ हैं।

मूल्य व्यक्ति सापेक्ष न होकर समाज सापेक्ष होते हैं। भारतीय समाज में मूल्यों के आदर्शवाद के स्थापना हेतु धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष संबंधी अवधारणा को स्थान दिया है। भारतीय अवधारणा के अनुरूप पाश्चात्य विचारकों ने भी मूल्यों से संबंधित अपनी–अपनी धारणाएँ स्पष्ट की हैं। मूल्यों का कोई एक स्वरूप नहीं होता है। मूल्य कई प्रकार के होते है। सामान्यतः मूल्यों को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक चार भागों में विभाजित कर सकते है। मूल्य सदैव अस्थिर व परिवर्तनीय होते हैं तथा समय के साथ मूल्य सदैव नया स्वरुप धारण करते रहते है। वर्तमान संदर्भ में परिवेश, शिक्षा, विज्ञान, नगरीकरण, आधुनिकीकरण ने मूल्य संक्रमण की आधारशिला रख नवीन मूल्यों का प्रादुर्भाव में योगदान दिया है। अंत में समकालीन महिला लेखिकाओं के उपन्यासों मे आए विभिन्न मूल्यों के स्वरूप को दर्शाया है।

पाँचवा अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यासों मे मूल्यों के विविध पक्ष' में उपन्यासों में प्रयुक्त हुए सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आदि विभिन्न मूल्यों पर चर्चा प्रस्तुत की गई है। प्रभा जी ने मूल्यों की प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह खड़े करते हुए किन नवीन मूल्यों को स्थापित किया है प्रस्तुत अध्याय में वर्णित हैं। इस अध्याय के द्वारा प्रभा जी ने आधुनिक मूल्यों को स्थापित करते हुए एक नवीन समाज, संस्कृति व परिवेश की कल्पना की गई है।

सामाजिक मूल्यों के तहत समाज के विभिन्न स्तरों, घटकों, सम्बन्धों, रीति, संस्कृति आदि मूल्यों को उजागर किया हैं। राजनैतिक मूल्यों के अन्तर्गत मूल्यों के संदर्भ में राजनीति के विभिन्न क्षेत्रों का विश्लेषण करते हुए राजनीतिक परिवेश के यथार्थ को

उजागर किया गया है। आर्थिक मूल्यों के तहत देश, समाज व व्यक्ति के संदर्भ में अर्थ के महत्व को स्पष्ट करते हुए अर्थ से प्राप्त शक्ति व संबल को उजागर किया हैं। सांस्कृतिक व धर्मिक मूल्यों के तहत समाज में व्याप्त धर्म व संस्कृति की स्थिति को उजागर किया गया है।

छठा अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यास–विविध आयाम' में नारी के विविध रूप, प्रेम संबंधित मान्यताएँ व प्रेम का स्वरूप, विवाह के प्रकार व अवैध संबंधों, सामाजिक आयाम के रूप आदि विषयों पर विस्तार से चर्चा की गई है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में नारी के परम्परागत नारी, ममतामयी नारी, शिक्षा प्राप्त करने की अधिकारिणी नारी, कामकाजी नारी, शोषित नारी, विद्रोह से भरी नारी, विदेशी नारी आदि कई रूपों का चित्रण किया है। प्रभा जी ने अपने उपन्यासों में प्रेम के नए स्वरुप, विवाह संस्था व सयुंक्त परिवार के विघटन को उजागर किया हैं।

सातवां अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यास साहित्य का शिल्पगत अनुशीलन' में भाषा के विभिन्न रूपों, प्रमुख शिल्प विधियों, प्रतीकों व बिम्बों की रचना, कथ्य तथा पात्रों व उनके चरित्र आदि के बारे विवेचना की गई है। प्रभा जी के उपन्यासों में अंग्रेजी, बंगाली, भोजपुरी, ग्रामीण भाषा का सशक्त प्रयोग किया हैं। इनके उपन्यासों में आत्मकथात्मक शैली, फ्लेशबैक शैली, वर्णनात्मक शैली, काव्यात्मक शैली व पत्रात्मक शैली आदि शैली के रूपों का वर्णन किया है। भाषा और शिल्प की दृष्टि से यह एक बेजोड़ कलाकार है। प्रभाजी ने अपने लेखन में रोचकता लाने हेतु प्रतीकों व बिम्बों का नवीन प्रयोग किया है।

संक्षेपतः–

प्रभा खेतान एक बहुविधा धारी साहित्यकार है। इन्होंने अपने सम्पूर्ण साहित्य संसार में नारी की वेदना, व अस्मिता के स्वर को मुखरित किया है। स्त्री विमर्श की लेखिका के रूप में उन्होंने साहित्य में अविस्मरणीय योगदान देकर युग चेतना को प्रखर किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) आधार ग्रंथ –

1. आओ पे पे घर चले– डॉ प्रभा खेतान, सरस्वती विहार प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990
2. तालाबंदी– डॉ प्रभा खेतान, सरस्वती विहार प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1991
3. अग्निसंभवा– डॉ प्रभा खेतान, 'हंस' मासिक पत्रिका, दिल्ली, मार्च–अप्रैल–मई 1992
4. एड्स– डॉ प्रभा खेतान, 'आज' पूजा वार्षिकांक, कलकत्ता, 1993
5. छिन्नमस्ता– डॉ प्रभा खेतान, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1993
6. अपने–अपने चेहरे– डॉ प्रभा खेतान, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1994
7. पीली आँधी– डॉ प्रभा खेतान, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1999
8. स्त्री–पक्ष– डॉ प्रभा खेतान, जनसत्ता सबरंग पत्रिका, कलकत्ता, फरवरी से अगस्त 1999

(2) सहायक ग्रंथ –

1. अपरिचित उजालें– डॉ प्रभा खेतान, अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1981
2. सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मैं– डॉ प्रभा खेतान, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1982
3. एक और आकाश की खोज में– डॉ प्रभा खेतान, अप्रस्तुत प्रकाशन, कलकत्ता, सं. 1985
4. कृष्णधर्मा मैं– डॉ प्रभा खेतान, स्वर समवेत प्रकाशन, कलकत्ता, सं. 1986
5. हुस्नबानों और अन्य कविताएँ– डॉ प्रभा खेतान, स्वर समवेत प्रकाशन, कलकत्ता, सं. 1987
6. अहल्या– डॉ प्रभा खेतान, सरस्वती विहार प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1988
7. सार्त्र का अस्तित्ववाद– डॉ प्रभा खेतान, सरस्वती विहार प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1984
8. अल्बेयर कामू: वह पहला आदमी– डॉ प्रभा खेतान, सरस्वती विहार प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1993
9. सार्त्र शब्दों का मसीहा– डॉ प्रभा खेतान, सरस्वती विहार प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1985
10. उपनिवेश में स्त्रीः मुक्ति कामना की दस वार्ताए– डॉ प्रभा खेतान, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2003
11. बाजार के बीचः बाजार के खिलाफ भूमण्डलीकरण और स्त्री के प्रश्न– डॉ प्रभा खेतान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2004
12. भूमण्डलीकरणः ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र– डॉ प्रभा खेतान, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2007

13. साँकलों में कैद क्षितिज— डॉ प्रभा खेतान, सरस्वती विहार प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1988
14. स्त्री उपेक्षिता— डॉ प्रभा खेतान, हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली, सं. 1991
15. एक और पहचान— डॉ प्रभा खेतान, स्वर समवेत प्रकाशन, कलकत्ता, सं. 1986
16. अन्या से अनन्या— डॉ प्रभा खेतान, हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली, सं. 1991
17. हिन्दी साहित्य का इतिहास— डॉ लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, राजपाल एंड सन्स, प्रकाशन दिल्ली, सं. 1982
18. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार— डॉ उषाकीर्ति राणावत, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2005
19. प्रभा खेतान के साहित्य में नारी विमर्श— डॉ कामिनी तिवारी, विध्या प्रकाशन, कानपुर, सं. 2011
20. साठोंत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी— डॉ किरणबाला अरोड़ा, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, सं. 1990
21. प्रभा खेतान के उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन— प्रेमरंजन भारती, आयुष्मान प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2016
22. कृष्णा सोबती के उपन्यासों में प्रतिबिम्बित नारी— सुलोचना अंतरेड्डी, अमन प्रकाशन, कानपुर, सं. 2005
23.हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों में नारी— रेखा कुलकर्णी, चन्द्र्लोक प्रकाशन, कानपुर, सं. 1994
24. औरत होने की सजा— अरविंद जैन, विकास पेपर बॉक्स, गांधीनगर, दिल्ली, सं. 1999
25. नौवें दशक की हिन्दी कविताओं में नारी के विविध रूप— डॉ यतिन्द्र तिवारी, संगम प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.1987
26. प्रभा खेतान और उनका साहित्य— डॉ परवीन मालिक, जैनसंघ प्रकाश, दिल्ली
27. उपन्यास स्वरूप और संवेदना— राजेन्द्र यादव, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1997
28. औरत अस्तित्व और अस्मिता— अरविंद जैन, सारांश प्रकाशन, दिल्ली सं. 2000
29. हिन्दी उपन्यास का इतिहास— गोपाल राय, राजकलम प्रकाशन, दिल्ली,सं. 2002
30. उपन्यास स्वरूप और संवेदना— राजेन्द्र यादव, वाणी प्रकाशन, दिल्ली सं. 1997
31.नारी अस्मिता की मुखर आवाज— डॉ प्रभा खेतान, जितेन्द्र धीर, अक्षर पर्व प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2007
32. हिन्दी उपन्यास का विकास— मधुरेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.2008
33. अमृतलाल नगर के उपन्यासों में नए मूल्यों की तलाश— डॉ हेमराज कौशिक, प्रकाशन

संस्थान, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली, सं.1985
34. आठवें दशक की हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य— डॉ रमेश देशमुख, विध्या प्रकाशन, कानपुर, सं.1994
35. आधुनिक उपन्यास विविध आयाम— विवेकी राय, अनिल प्रकाशन, इलाहाबाद, सं. 1994
36.आधुनिक काव्य में नवीन जीवन मूल्य— डॉ हुकुमचन्द्र राजपाल, भारतीय संसद भवन, जालंधर, सं.1972
37.मानव मूल्य और साहित्य— डॉ धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1960
38. मूल्य की अवधारणा— राजकिशोर, किताबधर प्रकाशन, दिल्ली, सं.1984
39. स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी उपन्यास में मानव मूल्य और उपलब्धियाँ— डॉ. भगीरध बंडोले, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, सं. 1983
40. हिन्दी उपन्यास और जीवन मूल्य— डॉ मोहिनी शर्मा, साहित्य सागर, जयपुर, सं. 1986
41. प्रभा खेतान के उपन्यासों में नारी— डॉ अशोक मराठे, विध्या प्रकाशन, कानपुर, सं. 2012
42.स्त्रीवाद और महिला उपन्यासकार— डॉ वैशाली देशपांडे, विकास प्रकाशन, कानपुर, सं. 2007
43. भारतीय सौन्दर्यशास्त्र की भूमिका— डॉ नगेन्द्र, नेशनल प्रकाशन हाउस, नई दिल्ली, सं. 1978
44. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूप— विमला शर्मा, संगम प्रकाशन, इलाहाबाद, सं. 1987

(3) पत्र—पत्रिकाएँ:—

1. हंस, अप्रैल 1992, सं. राजेन्द्र यादव, नई दिल्ली
2. हंस, मार्च 1992, सं. राजेन्द्र यादव, नई दिल्ली
3. हंस, मार्च—अप्रैल—मई, 1992, सं. राजेन्द्र यादव, नई दिल्ली
4. हंस, मार्च 1991, सं. राजेन्द्र यादव, नई दिल्ली
5. हंस, अगस्त 1989, सं. राजेन्द्र यादव, नई दिल्ली
6. हंस, नवम्बर 2008, सं. राजेन्द्र यादव, नई दिल्ली
7. अक्षर पर्व, नवंबर 2007, सं. सुर्जन राजपाल, नई दिल्ली

8. जनसत्ता सबरंग, अगस्त 1999, सं. डॉ श्यामसुंदर आचार्य, कलकत्ता
9. जनसत्ता सबरंग, जुन 1999, सं. डॉ श्यामसुंदर आचार्य, कलकत्ता
10.जनसत्ता सबरंग, जुलाई 1999, सं. डॉ श्यामसुंदर आचार्य, कलकत्ता
11. जनसत्ता सबरंग, जनवरी 1999, सं. डॉ श्यामसुंदर आचार्य, कलकत्ता
12. जनसत्ता सबरंग, अगस्त 1999, सं. डॉ श्यामसुंदर आचार्य, कलकत्ता
13. जनसत्ता सबरंग, मई 1999, सं. डॉ श्यामसुंदर आचार्य, कलकत्ता
14. 'आज' समाचारपत्र, 1992, पूजा वार्षिकांक, सं. अमिताभ, वाराणसी

(4) शब्दकोश –

1. नालंदा विशाल शब्द सागर– सं. श्री नवल, आदर्श बुक डिपो, दिल्ली, सं. 2000
2. हिन्दी साहित्य कोष– सं. धीरेन्द्र वर्मा, वाराणसी, सं. संवत 2020
3. हिन्दी शब्दकोश– डॉ हरदेव बाहरी, राजपाल एंड सन्स, दिल्ली, सं. 2011
4. हिन्दी साहित्य कोश भाग–1– डॉ धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमण्डल प्रकाशन, वाराणसी, सं. 1993
5. वृहद अंग्रेजी–हिन्दी कोश भाग–2– डॉ हरदेव बाहरी, ज्ञानमण्डल प्रकाशन, वाराणसी, सं. 1985
6. हिन्दी शब्द सागर– श्यामसुन्दर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सं. 1987

प्रकाशित शोध – पत्र

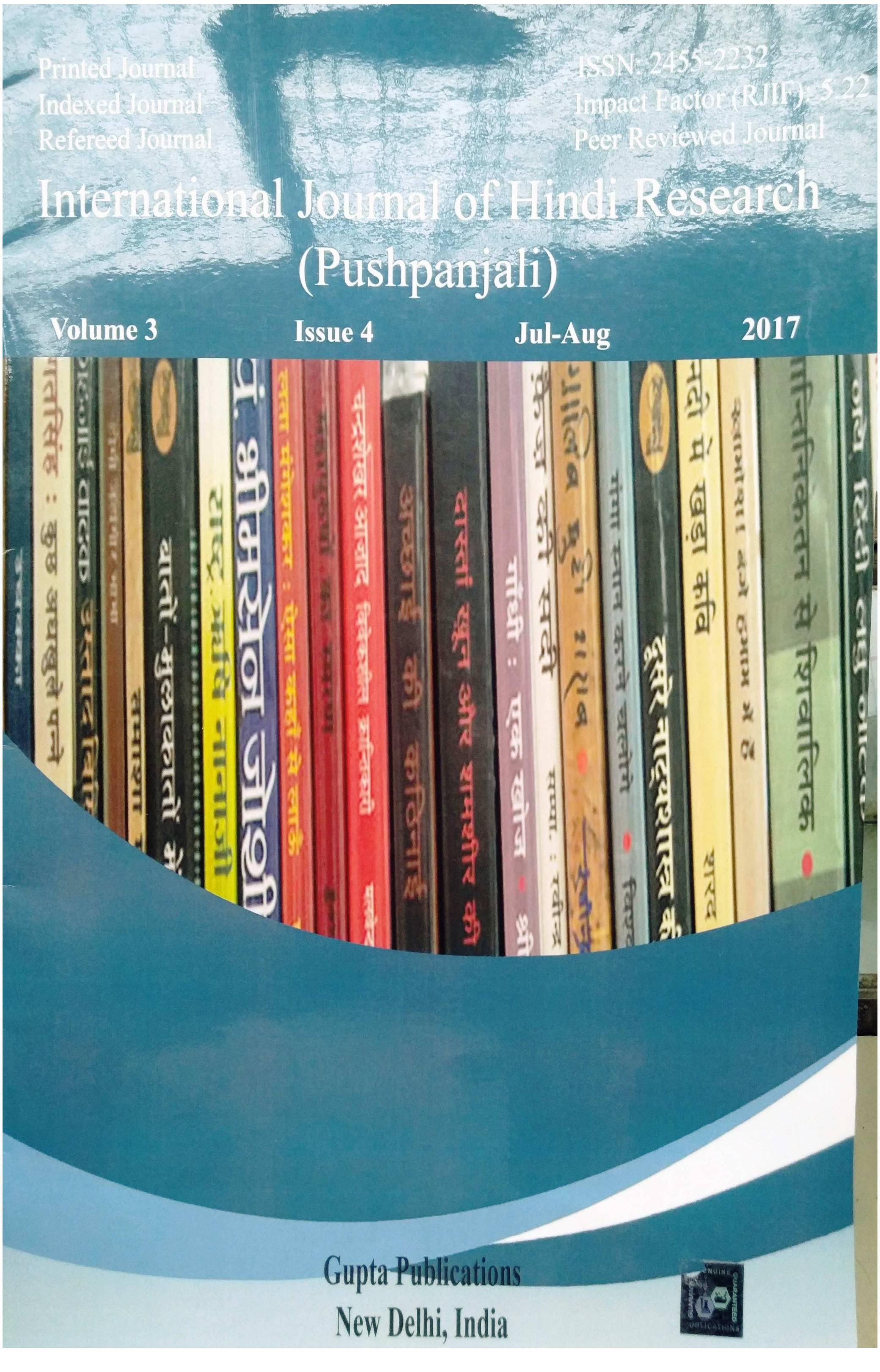
Printed Journal
Indexed Journal
Refereed Journal
ISSN: 2455-2232
Impact Factor (RJIF): 5.22
Peer Reviewed Journal
International Journal of Hindi Research
(Pushpanjali)
Volume 3
Issue 4
Jul-Aug
2017
Gupta Publications
New Delhi, India

Year: 2017, Volume: 3, Issue: 4
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
Online Available at www.hindijournal.com

International Journal of Hindi Research

Index for 2017 (Vol - 3, Issue - 4)

1. दहेज प्रथा और स्त्री दासता
Authored by: अर्चना सिन्हा
Page: 43-45

2. स्त्री संघर्ष की चुनौतियाँ और महदेवी वर्मा
Authored by: डॉ0 ललित कुमार सिंह
Page: 46-47

3. अथर्ववेद में मानव के राजनीतिक अधिकार
Authored by: प्रेम सिंह
Page: 48-50

4. भूमण्डलीकरण से राष्ट्रीयकरण:
Authored by: Sajitha J
Page: 51-52

5. प्रयोजनमूलक हिंदी की शैली : एक विश्लेषण
Authored by: Dr. Jino P Varughese
Page: 53-54

6. कामतानाथ की कहानियों में मानवाधिकार की चेंतना
Authored by: अनुश्री त्रिपाठी, डॉ0 प्रमिला बुधवार
Page: 55-56

7. प्रेमचंद एवं मार्टिन विक्रमसिंह की कहानियों में चित्रित दलित समाज का तुलनात्मक अध्ययन
Authored by: डॉ0 आर0 के0 डी0 निलंति कुमारी राजपक्ष
Page: 57-61

8. दिनकर के काव्य में राष्ट्रीयता
Authored by: डॉ॰ पी॰ तिरुपतम्मा
Page: 62-70

9. ''नारी अस्मिता का विमर्श'' प्रभा खेतान के उपन्यास ''छिन्नमस्ता'' के विशेष संदर्भ में
Authored by: कंचन भाणावत
Page: 71-72

10. शैलेश मटियानी के कथा साहित्य में दलित चेतना
Authored by: डॉ0 आनन्द सिंह फर्त्याल
Page: 73-74

International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 4; July 2017; Page No. 71-72

"नारी अस्मिता का विमर्श" प्रभा खेतान के उपन्यास "छिन्नमस्ता" के विशेष संदर्भ में

कंचन भाणावत
गाँव-शहीद राजेंद्र नगर, तहसील-भदेसर, जिला-चित्तोडगढ़, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

पुरुष और नारी, समाज की दो मुलभूत ईकाईया है। दोनों के संयोग से समाज का सृजन होता है। पुरुष आकाश है तो नारी धरा नारी की संगति से ही पुरुष सभ्य बनता है। नारी के बिना पुरुष के अस्तित्व की रचना संभव ही नहीं है। नर धात्री होने के कारण उसे नारी कहा गया है। 'नारी' शब्द स्वत: सम्पूर्ण व निरपेक्ष सत्ता का बोध करता है जिसमे शक्ति, सौंदर्य, शील, त्याग, कर्तव्य परायणता, उत्सर्ग आदि सभी तत्व समाहित होते है| सामाजिक व पारिवारिक संचालन मे दोनों भूमिका अहम होती है|

समकालीन युग में नारीवाद, नारी अस्मिता, नारी विमर्श, नारी सशक्तिकरण जैसे सभी विषय विश्वव्यापी मुद्दे है। सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक स्तर पर बहसें, विमर्श, आंदोलन व स्त्रीलेखन के कारण यह अधिक प्रभावशाली रूप में उभर के सामने आया है। स्त्री अस्मिता व विमर्श को हर व्यक्ति ने अपने–अपने ढंग से स्पष्ट करने की कोशिश की है।

स्त्री अस्मिता से अभिप्राय

स्त्री के स्व के अस्तित्व या उसकी पहचान से है। जब स्त्री अपने समाज व परिवेश में अपने हिसाब से स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है, तब वह परिवार और समाज में अपने अस्तित्व की तलाश करती है। लेकिन धर्म व सामाजिक अर्थव्यवस्था के नाम पर उसे विवाह ओर परिवार से इस तरह बांध दिया जाता है की वह अपनी स्वतंत्रता का विसर्जन और आत्मसमर्पण करने की कीमत पर ही सम्मान की जिंदगी बिता सकती है। इस कारण स्त्री आज तक समाज में बेटी, बहन और माँ के रूप मे ही पहचानी जाती रही है। लेकिन वर्तमान परिपेक्ष्य में स्त्री इन बंधनो से मुक्त होकर स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप मे अपनी पहचान कायम करना चाहती है। यही से प्रारम्भ होती है-स्त्री की अस्मिता की तलाश व स्त्री अस्मिता का विमर्श।

स्त्री विमर्श

स्त्री के आत्मबोध, आत्मविश्लेषण एवं आत्माभिव्यक्ति का संघर्ष है। विमर्श रूढ़ हो चुकी मान्यताओं, परम्पराओं के प्रति असंतोष व उससे मुक्ति का स्वर है। स्त्री विमर्श नारी चेतना के पर्याय के साथ एक समूहिक चेतना है। नारी चेतना स्त्री की अस्मिता से जुड़ा एहसास है। पुरुष प्रधान समाज के दोहरे मापदंडो, मूल्यों व अंतर्विरोधों को समझने व पहचाने की गहरी अंतर्दृष्टि है।

नारी अस्मिता का संघर्ष समाज की अनूठी देन है। साहित्य ओर समाज परस्पर अन्योन्याश्रित है। वह एक – दूसरे को प्रभावित करते हुए परंपरागत मूल्यों के प्रवाह में परिवर्तन लाते है। सकारात्मक परिवर्तन जहाँ समाज को प्रगति की ओर प्रेषित करता है वहाँ नकारात्मक परिवर्तन उसे पतन की ओर धकेलता है। "यंत्रनार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" में आस्था रखनेवाले देश मे स्त्री को अस्मिता परिवेश और जीवन मूल्यों के साथ – साथ परिवर्तित होती रही है।

इसी संदर्भ मे प्रसिद्ध समाजशास्त्री सिमोन द बोउवार ने "द सेकंड सेक्स" मे कहाँ है कि –"स्त्री पैदा नहीं होती बनाई जाती है।" इसी दृष्टिकोण के कारण नारी का जीवन सदैव यातनाओ व त्रासदियों से ओतप्रोत रहा है। समाज की इस मनोवृति के कारण स्त्री को अपने अस्तित्व को पहचान दिलाने हेतु न जाने कितनी प्रतीक्षा करनी होगी|

यह लेख नारी अस्मिता की पहचान व उसके संघर्षमय जीवन की गाथा है।

"छिन्नमस्ता" प्रभा खेतान का बहुचर्चित उपन्यास है जो स्त्री के उत्पीड़न व स्वालम्बन की कहानी है। "छिन्नमस्ता" की प्रिया की शादी से पूर्व की कहानी प्रभाजी की खुद की कहानी है। उच्चवर्गीय मारवाड़ी परिवार में पाँचवी संतान के रूप में जन्मी प्रिया का बचपन उपेक्षित, कुंठित व भय से आक्रांत है। नौ वर्ष की अल्पायु मे ही उनके पिता का देहांत हो गया। और उनका सारा बचपन माँ व पिता के प्रेम से वंचित रहा| "कैसा अनाथ बचपन था? अम्मा ने अभी मुझे गोद में लेकर चूमा नहीं। मैं चुपचाप घंटो उनके कमरे के दरवाजे पर खड़ी रहती, शायद अम्मा मुझे भीतर बुला ले। बचपन से ही प्रिया के जीवन में यातनाओं का दौर शुरू हो गया। हर समय व हर राह पर सताई जाने वाली प्रिया के शारीरिक शोषण की कहानी उसके परिवार से ही शुरू होती है। प्रिया अपने ही घर में अपने बडे भाई की वासना का शिकार होती है। भाई द्वारा अस्मत खोई बहन का वर्णन करने वाली प्रभा खेतान पहली लेखिका है। प्रभा खेतान कहती है – "सवाल उठता है कि स्त्री जब यौन उत्पीड़न पर कुछ कहना चाहती है तो पुरुष व्यवस्था उसका विरोध क्यों करती है? व्यवस्था इतनी आतंकित क्यों होती है।" वह अपने भाई द्वारा किए गए अपराध के बारे में किसी से कुछ नही कहती है क्योंकि दाई माँ उससे कहती है – "सुन बिटिया! हमारा कहा मान ओर जिंदगी मे ई सब बात किसी से न कहियों। आपन पति परमेसर से भी नहीं। अउर सब समय हमारा साथ रहो। ना बिटिया, हम तोहके छोड़कर कही नहीं जाऊब।"

बचपन के इस घटना के बाद उसे कॉलेज में भी प्रोफेसर के द्वारा वासना का शिकार होना पड़ता है। परंतु वह हर चुनौती का सामना करते हुए घरवालों के विरुद्ध जाकर अपनी पढ़ाई को पूरा करती है। वह अपनी भाभी ओर अम्मा की तरह घुटन भरी जिंदगी नहीं जीना चाहती, क्योंकि उसने प्रोफेसर चेटर्जी से सीखा था कि – "स्त्री होना कोई अपराध नहीं है, पर नारीत्व की आँसू भरी नियति स्वीकारना बहुत बड़ा अपराध है।"

पढ़ाई के पश्चात प्रिया की शादी एक सम्पन्न परिवार में होती है। किन्तु विवाह के कटु अनुभवों से समझ आता है कि धनी परिवार में विवाह होने पर भी स्त्री के जीवन विद्रुपताएँ समाप्त नहीं होती| अत: प्रिया व्यावसायिक जगत में प्रवेश करती है। क्योंकि वह एक भोग की वस्तु बनकर नही रहना चाहती थी। लेकिन नरेन्द्र अपने पति होने का अधिकार प्रिया पर थोपना चाहता था| वह कठोर

शब्दों में कहता है – " दरअसल तुम्हें इतनी खुली छुट देने की गलती मेरी ही थी। मुझे पहले ही चिड़िया के पंख काट डालने चाहिए थे, पर मैं तुम्हारी बातों मे आ गया। तुम्हारे इस भोले चेहरे के पीछे एक मक्कार औरत का चेहरा है।" लेकिन प्रिया इन सब बातों को अनदेखा कर अपने व्यवसाय को आगे बढ़ाती है। प्रिया के इस सम्मान को बढ़ते वह देख नहीं सकता है और वह प्रिया को कोसते हुए कहता है – "पैसा कमाना तुम्हारी हवस है प्रिया! तुम नारसिसिस्ट हो। तुम्हारी महत्वाकाक्षाएँ दिन दूनी, रात चौगुनी बढ़ती जा रही है।" इस पर प्रिया कहती है कि "क्या महत्वाकांक्षी होना अपराध है। नरेन्द्र उसकी महत्वाकांक्षा नहीं समझ पाया। अपने पति की इसी सोच के कारण प्रिया को उपना घर व बेटे को छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा। इसके द्वारा प्रभा खेतान इस तथ्य को स्पष्ट करना चाहती है कि नारी की आर्थिक निर्भरता उसकी सोच व मूल्यों में बदलाव ला सकती है। परिवार के शोषण से शोषित प्रिया आत्मनिर्भर होकर स्त्री के संकल्प एवं जीवन की अनुठी मिसाल बनती है।

प्रभाखेतान प्रिया के द्वारा हर नारी को यह संदेश देना चाहती है कि नारी सशक्तिकरण के लिए स्त्री का आर्थिक आत्मनिर्भर होना बहुत आवश्यक है। प्रिया का संघर्ष हर नारी का आत्मसंघर्ष है। अपनों के बीच सभी चुनौतियों का सामना करते हुए साहसी नारी के रूप में प्रिया का चरित्र हमारे सामने प्रखर हो उठता है।

समकालीन परिवेश में प्रिया हर स्त्री के लिए प्रेरक शक्ति है। जो अपने हालातो से लड़ना जानती है। वह जानती है कि कोई भी पुरुष स्त्री के स्थान की पूर्ति नहीं कर सकता है। इसी संदर्भ मे वह अपने दोस्त फिलिप से कहती है –"पुरुष भूमि है, आकाश है, अग्नि है, जल है लेकिन स्त्री बीज बनकर धरती के नीचे दबना जानती है, वक्त आने पर अंकुरित होती है और फिर शाखा – प्रशाखाओं में फैलती हुई पूरा जंगल हो जाती है।

प्रभा खेतान की प्रिया की कहानी नारी के अस्तित्व व आत्मबोध की कहानी है। स्त्री के जीवन की राह में आने वाली हर चुनौतियों से संघर्ष करते हुए अपने लिए नई राह को प्रशस्त करने के संदर्भ में वैशाली देशपांडे लिखती है –"प्रिया का यह व्यवहार आधुनिक नारी के उस रूप को उद्घाटित करता है, जो पुरुष प्रधान समाज के अत्याचार के विरोध में खड़ी रहकर अपनी क्षमता को साबित करती है। शोषण के सामने चुनौती बनकर खड़े रहने की क्षमता आज की नारी मे आ चुकी है और प्रिया उस नारी का प्रतिनिधित्व कर रही है।"

इस उपन्यास में प्रिया आधुनिक नारी शक्ति की पहचान बनकर उभरी है। प्रिया के द्वारा हमें ज्ञात होता है कि इज्जत कोई देता नहीं उसे कमाना पड़ती है। हर परिवेश मे उपेक्षित होने पर भी प्रिया का आशावादी दृष्टिकोण हर स्त्री के लिए एक उदाहरण है।

निष्कर्ष

अन्तत: कह सकते है कि 'छिन्नमस्ता' में नारी अस्मिता से संबंधित विविध आयाम नारी जीवन के तनाव व कुंठा, दांपत्य जीवन की विषगतियों, संघर्ष, आक्रोश, अपनों द्वारा आहत जीवन, नारी जीवन की यातनाएँ आदि का यथार्थ पृष्ठभूमि पर चित्रण किया है। अत: कह सकते है कि "छिन्नमस्ता नारी यातना, विद्रोह एवं मूक्ति की गाथा है।"

इस उपन्यास के द्वारा प्रभाजी ने स्त्री से जुड़ी उस मानसिकता को बदलने पर भी ज़ोर दिया है कि स्त्री व पुरुष में भिन्नता होती है तथा उनमे भेद करना चाहिए। 'छिन्नमस्ता'के द्वारा प्रभाजी ने स्त्री के अस्तित्व व उसके विमर्श एवं नारी संघर्ष व चिंतन के द्वारा नारी को एक नई राह व प्रेरणा देने मे सफलता हासिल की है। इस उपन्यास के द्वारा स्त्री को कई रूपो में उत्याचार व अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करते हुए परिलक्षित कर अपनी अस्मिता व अस्तित्व की पहचान हेतु पुरुष प्रधान समाज से संघर्ष करने की हिम्मत व सोच प्रदान करता है।

संदर्भ

1. गोपालराय, छिन्नमस्ता : समीक्षा, डॉ नामवर सिंह (संपा) आधुनिक हिन्दी उपन्यास -२, पृष्ठ ३४४।
2. डॉ बच्चन सिंह, नारी विमर्श, डॉ नगेन्द्र (संपा), हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ ४३४।
3. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, डॉ नामवर सिंह (संपा), आधुनिक हिन्दी उपन्यास -२, पृष्ठ ३३१।
4. साहित्य संदेश , सं. महेन्द्र, साहित्य रत्नभंडार आगरा, प्रथम संस्करन १९९५ पृष्ठ ३५५।
5. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, उषा कीर्ति रानावत, पृष्ठ ५।
6. प्रभा खेतान का औपन्यासिक संसार, उषा कीर्ति रानावत, पृष्ठ ९७।
7. स्त्रीवाद और महिला उपन्यासकार, डॉ वैशाली पांडे, पृष्ठ १८६।
8. महिला उपन्यासकार, डॉ मधूसन्धु, पृष्ठ ४८।
9. हिन्दी उपन्यास का इतिहास, प्रो. गोपालराय, पृष्ठ ४२६।
10. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, पृष्ठ ११।
11. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, पृष्ठ ४४।
12. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, पृष्ठ ११७।
13. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, पृष्ठ १२४।
14. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, पृष्ठ १५३।
15. छिन्नमस्ता, प्रभा खेतान, पृष्ठ २११।

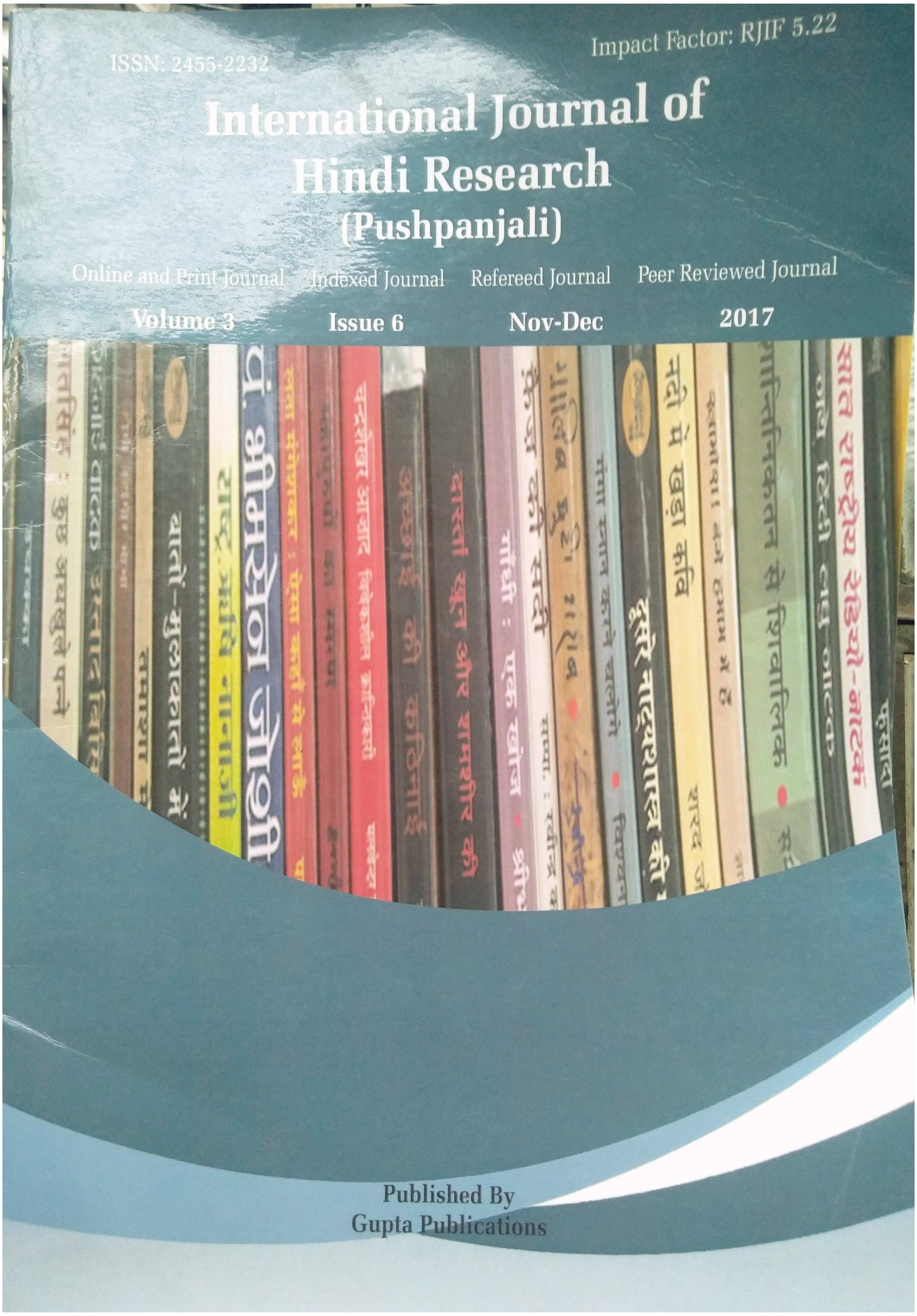

ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
International Journal of
Hindi Research
(Pushpanjali)
Online and Print Journal
Indexed Journal
Refereed Journal
Peer Reviewed Journal
Volume 3
Issue 6
Nov-Dec
2017
Published By
Gupta Publications

Year: 2017, Volume: 3, Issue: 6
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
Online Available at www.hindijournal.com

International Journal of Hindi Research

Index for 2017 (Vol - 3, Issue - 6)

1. प्रवासी भारतीय साहित्यकार सुषमा बेदी के कथा साहित्य का अध्ययन
Authored by: प्रणिता लक्ष्मणराव पाटील
Page: 27-29

2. कालिदास के नाटको मे संवेदना और प्रेम
Authored by: डॉ0 सुशील कुमार तिवारी
Page: 30-31

3. श्री राम के पथ प्रदर्शक महर्षि अगस्त
Authored by: वरूण मिश्र
Page: 32-34

4. शौर्यचक्र से सम्मानित श्री रजनीश कुमार जी की याद में
Authored by: ब्रह्म दत्त मगोत्रा
Page: 35-36

5. तुलसी काव्य में दार्शनिक मूल्य
Authored by: डॉ0 अनुष्का तिवारी
Page: 37-39

6. डॉ0 श्याम सुंदर दास : व्यक्तित्व एवं कृतित्व
Authored by: डॉ0 अखिलेश कुमार सिंह
Page: 40-43

7. प्रभा खेतान : एक समग्र अध्ययन
Authored by: कंचन भाणावत
Page: 44-46

8. पदमावत की सामासिक-संस्कृति
Authored by: Kumar Manish
Page: 47-48

9. आजीवक मत : एक उपेक्षित भारतीय दर्शन
Authored by: विश्वम्भर नाथ प्रजापति
Page: 49-52

10. पण्डित अटल बिहारी वाजपेयी की ग्रहण रचनाओं में साहित्यिक अनुशीलन
Authored by: डॉ0 नरेन्द्र सरिया
Page: 53-54

International Journal of Hindi Research

International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 6; November 2017; Page No. 44-46

प्रभा खेतान : एक समग्र अध्ययन

कंचन भाणावत

शहीद राजेंद्रनगर (गंठेड़ी), तहसील-भदेसर, जिला-चित्तौड़गढ़, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

प्रभा खेतान हिन्दी साहित्य जगत में एक सुविख्यात नाम है। 1 नवम्बर 1942 को दक्षिण कलकत्ता में मारवाड़ी परिवार में जन्मी प्रभा खेतान बहू चर्चित कवयित्री, उपन्यासकारा व चिंतनकारा के रूप में हिन्दी साहित्य जगत के आकाश में ध्रुवतारे के समान उदित हुई। प्रभा खेतान ने अपने जीवन काल में हिन्दी साहित्य जगत को अक्षुण्ण व अनुपम रचनाएँ भेंट स्वरूप प्रदान की है। प्रभाजी जमीन से जुड़ी साहित्यकार थी, इस कारण उनके विचार व मान्यताएँ यथार्थ अनुभवों पर आधारित है। प्रभाजी का जीवन सदैव उपेक्षा व अभावों के मध्य बीता है। जीवन भर वह उनके साथ संघर्ष करती रही, परंतु परिस्थितियों से हार नहीं मानी। उनके सम्पूर्ण जीवन की झलक उनके साहित्य के द्वारा परिलक्षित होती है। उनके साहित्य में शहरी व ग्रामीण परिवेश में महिलाओं की स्थिति को केन्द्रित कर रिश्तों की उधेड़बुन को उजागर किया गया है। उनका साहित्य एक ऐसे अथाह सागर की भांति है, जिसके अर्थपूर्ण मोती पाने के लिए बार-बार सतह तक गोता लगाना पड़ता है।

हिन्दी साहित्य जगत में नारी चिंतक के रूप में प्रख्यात लेखिका, कवयित्री, उपन्यासकारा, चिंतनकार डॉ. प्रभा खेतान का जन्म 1 नवम्बर 1942 को दक्षिण कलकत्ता के सबसे प्रसिद्ध मुहल्ला लेक रोड के मकान नंबर 72 में धनाढय मारवाड़ी परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री लादुराम जी खेतान एक सफल व्यवसायी तथा माता पूरन देवी खेतान एक गृहिणी थी। सात भाई-बहनों में प्रभा जी पाँचवी संतान थी। मारवाड़ी परिवार में लड़की जन्म को मनहूस माना जाता है। वहाँ प्रभा जी ने पाँचवी संतान के तौर पर एक लड़की के रूप में जन्म लिया, इस कारण उनका पूरा बचपन माँ के स्नेह से वंचित व उपेक्षित रूप में बीता। परंतु प्रभा जी अपने पिता की सबसे लाड़ली पुत्री थी और प्रभा जी भी अपने पिता से अधिक स्नेह रखती थी। पिता के सान्निध्य में अधिक रहने के कारण उन्होने भी अपने पिता के व्यवसाय से संबंधित कला को आत्मसात कर लिया। दुर्भाग्यवश नौ वर्ष की अल्पायु में ही उनके पिता का हाथ उनके सिर से उठ गया। उसके बाद उनका बचपन अनेक यातनाओं से भर गया। माँ की उपेक्षा के कारण प्रभा एक दाई की गोद में पली बढ़ी। उनका पूरा बचपन अनाथ के समान गुजरा। इसलिए वह कहती है कि- "कैसा अनाथ बचपन था अम्मा ने कभी मुझे गोद में लेकर चूमा नहीं। मैं चुपचाप घंटो उनके कमरे के दरवाजे पर खड़ी रहती। शायद अम्मा मुझे भीतर बुला ले। शायद ..... हाँ, शायद अपनी रज़ाई में सुला ले। मगर नहीं, एक शाश्वत दूरी बनी रही हमेशा हम दोनों के बीच। अम्मा मेरी बातों को समझ ही नहीं पाती थी।"

पिता की मृत्यु के बाद जब घर की ज़िम्मेदारी बड़े भाई के हाथों में आई तो वह घर ही प्रभा जी के लिए असुरक्षित हो गया। प्रभा जी को हर चीज के लिए अपने भाई के आगे हाथ फैलाना पड़ता था। इसी बात का फायदा उनके बड़े भाई उठाते है और उनका शारीरिक शोषण करते है। अपने जीवन में अपने भाई के द्वारा शारीरिक रूप से शोषित होने के कारण उन्हे पुरुष नाम से नफरत हो जाती है और वह भयाक्रांत रहने लगती है।

पिता के गुजरने के बाद उनके घर की आर्थिक स्थिति के सही नहीं होने के कारण उन्हे शिक्षा प्राप्त करने हेतु अनेक कठिनाईयों से गुजरना पड़ा। उनकी माँ उन्हें शिक्षा प्राप्त करने से रोक कर गृह कार्यो में लगाना चाहती थी। परंतु प्रभाजी ने अपने परिवार के साथ संघर्ष करते हुए शिक्षा ग्रहण की और उन्हें अपनी प्रारम्भिक शिक्षा में मन्नु भण्डारी का सहयोग व मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ। स्कुली शिक्षा के पश्चात जब उन्होने दर्शनशास्त्र पढ़ने हेतु कॉलेज में प्रवेश लिया तो वहाँ अपने ही प्रोफेसर के द्वारा प्रेम में धोखा मिला तथा शादी के नाम पर शारीरिक रूप से शोषण का शिकार होना पड़ा। इस कारण उन्हे विवाह के नाम से ही नफरत हो गई। वह कहती है कि –"मेरी राय में विवाह एक ओवरडेटेड संस्था है मै इस संस्था को ज्यादा तरजीह देने से इंकार करती हूँ।" ऐसे विचारों को तरजीह देने के कारण वह आजीवन अविवाहित ही रही है।

प्रभा जी का सम्पूर्ण जीवन संघर्षो व विरोधाभासों का गुलदस्ता है उन्हें अपने जीवन में भयावह आर्थिक स्थितियों का सामना करना पड़ा। इस कारण वह चमड़े के व्यवसाय में संलग्न होकर आत्मनिर्भर बन अपने पैरों पर खड़ी हुई और अपने जीवन के सभी आर्थिक संकटों को जड़ से मिटा दिया। प्रभाजी ने अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में कभी समझौतावादी प्रवृति को स्थान नहीं दिया। अपने जीवन के अंतिम दिनों में सीने में तकलीफ होने से जीवन हेतु मृत्यु से भी संघर्ष करना पड़ा। अंतत 20 सितम्बर, 2008 को मृत्यु को विजय प्राप्त हुई और उनका देहावसान हो गया।

एक साहित्यकार के रूप में प्रभा जी की लेखनी निरन्तर कार्यरत रही। जब वह सातवी कक्षा में पढ़ती थी तब उनकी पहली कविता दैनिक 'सुप्रभात' नामक पत्रिका में छपी। तब से वह निरन्तर साहित्य के क्षेत्र में कार्यरत रही। उनके सम्पूर्ण साहित्य पर उनके जीवन की प्रतिच्छाया परिलक्षित होती है। इन्होने अपने साहित्य क्षेत्र में उपन्यास, कविता संग्रह, चिंतन साहित्य, अनुवाद, आत्मकथा, संपादन व लेख आदि का सृजन किया है। जो निम्नानुसार है-

उपन्यास:

1.	आओ पे पे घर चले	1990
2.	तालाबंदी	1991
3.	छिन्नमस्ता	1993
4.	अपने-अपने चेहरे	1994
5.	पीली आँधी	1996
6.	स्त्री-पक्ष	1999
7.	अग्निसंभवा	1992
8.	एड्स	1993

कविता संग्रह:

1.	अपरिचित उजाले	1981
2.	सीढ़िया – चढ़ती हुई मै	1982
3.	एक और आकाश की खोज में	1985
4.	कृष्णधर्मा मै	1986
5.	हुस्नाबानों और अन्य कविताएँ	1987
6.	अहिल्या	1988

चिंतन साहित्य:

1.	सार्त्र का अस्तित्ववाद	1984
2.	शब्दों का मसीहा : सार्त्र	1986
3.	अल्बेयरकामू : वह पहला आदमी	1994
4.	उपनिवेश में स्त्री: मुक्ति-कामना की दस वार्ताएँ	2003
5.	बाजार के बीच: बाजार के खिलाफ भूमंडलीकरण और स्त्री के प्रश्न	2004
6.	भूमंडलीकरण: ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र	2007

अनुवाद:

1.	साँकलों में कैद क्षितिज	1988
2.	स्त्री उपेक्षिता (सीमोद द बोउवार की कृति- द सेकंड सेक्स का अनुवाद)	1991

संपादन:

1.	एक और पहचान	1986
2.	हंस पत्रिका के महिला विशेषांक का संपादन	मार्च-2001

आत्मकथा:

1.	अन्या से अनन्या	-

लेख:

1.	स्त्री विमर्श पर महत्वपूर्ण लेख (पितृसत्ता के नये रूप)	2003
2.	सोफिया टोलस्टोय की डायरी – हंस पत्रिका	2008

प्रभाजी के साहित्यक पर उनके जीवन की परिस्थितियों व परिवेश का प्रभाव सदैव रहा।परन्तु उनके विचार व भाव रूपी मूल संवेदनाएँ किसी भी परिवेश की झकड़ में नहीं रही। इनका प्रथम काव्य संग्रह "अपरिचित उजाले" में कुल 64 कविताएँ संकलित है। मेरे और तुम्हारे बीच, कैसा अजीब यह अकेलापन, कुछ शब्दों को उधार ले, मिले हुए दर्दों की, काफी हाउस का कोना आदि भिन्न भिन्न शीर्षकों से संकलित कविताओं में एक अनूठे भाव जगत के दर्शन होते है। कुछ शब्दो को उधार ले प्रेम के कई भावों को उजागर करता है।

> 'मेरे एक नहीं, तीन मन
> एक कविता लिखता है,
> एक प्यार करता है,
> और एक केवल
> अपने लिए जीता है।'[3]

इनका दुसरा काव्य-संग्रह "सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मै" में 61 कविताएँ संकलित है। अंकुर, चाह, एक उदास सुबह, ओ मेरे आत्मन, मुक्ति कहाँ है, अंधेरा खड़ा है, इंतजार, संभावना आदि शीर्षकों से संकलित कविताओं में समाज और व्यक्ति के बीच रिश्तों को चित्रित किया है और उन्होने प्रेम विषय के द्वारा जीवन के यथार्थ को उद्घाटित किया है।

> "प्रेम करने की शक्ति
> क्या अपने आप में काफी नहीं
> यानी आज भी जब तुम्हें चाह पाती हूँ
> लगता है कि मैं जिंदा हूँ।"[4]

इनके तीसरे काव्यसंग्रह "एक और आकाश की खोज मै" में कुल 52 कविताओं का संकलन है। तुम्हारी प्रेम भरी आँखे, तूफानो से, ज़िंदगी फैली हुई है, कोई एक फूल खिला बगीचे में, मौत और जिंदगी के बीच, आखिर कब तक आदि शीर्षकों से संबंधित कविताओं के माध्यम से कवयित्री ने 'गागर में सागर' भर दिया है।

> मैने नाप लिए है हजारों आकाश
> फिर भी, एक और आकाश खोज ने, चल पड़ी हूँ ....?[5]

इनके चौथे काव्य संग्रह 'कृष्णधर्मा मै" एक दीर्घ कविता के माध्यम से अवतारी कृष्ण के द्वारा अकर्मण्य हीन जीवन को त्याग कर्मठ रहने की प्रेरणा दी है। इसकी भूमिका में लिखती है-"इस कविता का मैने चुनाव नहीं किया बल्कि यों कहिए की इस कविता ने मुझको खोज निकाला। यह कविता खुद-ब-खुद टुकड़े-टुकड़े में कलम के सहारे कागज पर उतरती चली गई।"[6]
इनके पाँचवे काव्य-संग्रह "हुस्नबानों और अन्य कविताएँ" में कुल 29 कविताएँ संकलित है। भीड़ के बीच, कविता की खोज में, सड़क कथा, कहाँ होंगे बच्चे, दो लड़कियां, कविता की सामूहिक हत्या, शब्दों की हार आदि शीर्षकों से संबंधित कविताओं के माध्यम से लेखिका ने समकालीन परिवेश में व्याप्त समस्याओं को उजागर किया है।

> अब्बा।
> अबकी तुम वीडियो मत लाना
> अम्मा की साड़ियाँ मत लाना
> मत लाना यह सब

बदल देना अपने बक्से को
एक छोटे से घर में ....।[7]

डॉ.प्रभा खेतान का अंतिम काव्य संग्रह "अहल्या" के माध्यम से प्रभाजी ने सम्पूर्ण नारी जाति की मुक्ति का संदेश दिया है-

लौट आओ, अहल्या
मृत्यु के बाद भी जागो तुम।
गूँजता है आज भी
तुम्हारा ही दर्द
मेरे हृदय में।[8]

उपन्यासकार के रूप में प्रभा जी ने आठ उपन्यासों की रचना की है। 'छिन्नमस्ता', 'अपने-अपने चेहरे', 'तालाबंदी', 'स्त्री-पक्ष', 'एड्स', 'अग्निसंभवा', पीली आँधी', आओ पे पे घर चले' आदि इनके प्रसिद्ध उपन्यास है जिसके माध्यम से लेखिका ने भारतीय व वैश्विक स्तर पर नारी की स्थिति को दर्शाया है। इनके प्रथम उपन्यास 'आओ पे पे घर चले' के माध्यम से विदेशी जमीन पर नारी के जीवन की भयावहता को स्पष्ट किया है-"औरत कहाँ नहीं रोती और कब नहीं रोती? वह जितना भी रोती है उतना ही औरत होती जाती है।"[9]

इनका दूसरा उपन्यास 'तालाबंदी' के माध्यम से मारवाड़ी समाज में व्यावसायिक उतार-चढ़ाव के यथार्थ का वास्तविक चित्रण किया गया है। 'अग्निसंभवा' के द्वारा चीनी महिला के द्वारा वैश्विक स्तर पर स्त्री के संघर्ष के साथ मार्क्सवादी दृष्टिकोण व क्रांति का वर्णन किया है। 'एड्स' के द्वारा प्रभाजी ने विश्व स्तर पर व्याप्त लाइलाज बीमारी एड्स की भयावहता को उजागर किया है।

'छिन्नमस्ता', 'अपने-अपने चेहरे, 'स्त्री पक्ष', आदि उपन्यास स्त्री के शोषण, उत्पीड़न व संघर्ष के जीवंत दस्तावेज़ है। इन उपन्यासों में नारी के अपने अस्तित्व को प्रकट करने का संघर्ष है। नारी के आत्म मंथन व उत्पीड़न की कथा है- इसीलिए वह कहती है-"प्यार तो बस एक बार करती है। कभी शादी के पहले, कभी शादी के बाद। इसके बाद तो वह अपने आपको झेलना सिखाती है।"[10]

पीली आँधी उपन्यास में भारत में स्वतंत्रता से पूर्व व्याप्त स्थितियों को मारवाड़ी परिवार के माध्यम से उजागर करते हुए घटनाओं के महत्व को स्पष्ट किया है।

एक चिंतक के रूप में भी प्रभाजी के साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। 'सार्त्र का अस्तित्वाद', शब्दों का मसीहा सार्त्र में सार्त्र की तुलना अन्य दार्शनिकों के साथ कर उनको दर्शन व साहित्य के साथ जोड़ने का प्रयास किया है।" अल्बेयर कामू : "वह पहला आदमी" में अल्बेयर कामू के जीवन की अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है। 'उपनिवेश में स्त्री' व "बाजार के बीच बाजार के खिलाफ" चिंतन साहित्य में नारी के जीवन पर भूमंडलीकरण व उपनिवेश के प्रभाव को स्पष्ट कर नारी मुक्ति के चिंतन को स्पष्ट किया है।

प्रभाजी ने अनुवाद, संपादन व लेख आदि के द्वारा नारी जीवन की उधेड़बून व उसके जीवन के यथार्थ का अंकन किया है। इनकी भाषा भी सरल व सहज भावों से युक्त है।

प्रभा खेतान आधुनिक युग की श्रेष्ठ साहित्यकार है। इन्होने अपने साहित्य संसार में शब्दों के द्वारा सभी मानवीय भावों को उजागर किया है। यह लेखिका संघर्षशील, विद्रोही व नूतनन्वेषी व्यक्तित्व की धारण कर्ता है। इनके भोगे हुए यथार्थ से उत्पन्न साहित्य मन को झकझोर देता है। प्रभाजी ने अपने रचनात्मक लेखन के द्वारा नारी विमर्श व उसके अस्तित्व की पहचान हेतु एक विशाल मंच प्रदान किया है तथा नारी को पुरुषों की सत्ता से पृथक होकर अपनी जमीन व आकाश ढूँढने का संदेश दिया है। साहित्य के द्वारा नारी अस्तित्व व अस्मिता में इनका अमूल्य योगदान है। इसी हेतु प्रभाजी 'बोल्ड लेखिका' व नारी चिंतक के रूप में सर्वाधिक चर्चित व विख्यात लेखिका है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ प्रभा खेतान-अन्या से अनन्या, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-31
2. अन्या से अनन्या, हंस, मार्च-2006
3. डॉ प्रभा खेतान-अपरिचित उजाले-कुछ शब्दों का उधार ले, अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या-80
4. डॉ प्रभा खेतान-सीढ़िया चढ़ती हुई मै, इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ संख्या-20
5. डॉ प्रभा खेतान-एक और आकाश की खोज में, अप्रस्तुत प्रकाशन, कलकत्ता
6. डॉ प्रभा खेतान-कृष्णधर्मों मै, स्वर समवेत प्रकाशन, कलकत्ता, पृष्ठ संख्या-4
7. डॉ प्रभा खेतान-हुस्नाबानों और अन्य कविताएँ, स्वर समवेत प्रकाशन, कलकत्ता, पृष्ठ संख्या-14
8. डॉ प्रभा खेतान-अहल्या, सरस्वती विहार प्रकाशन, शाहदरा, दिल्ली, पृष्ठ संख्या-18
9. डॉ प्रभा खेतान-आऑ पेपे घर चले, सरस्वती विहार, नई दिल्ली।
10. डॉ प्रभा खेतान-अपने-अपने चेहरे, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।